Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS

# साम्ब पुराण का सांस्कृतिक अध्ययन

चन्द्रदेव पाण्डेय

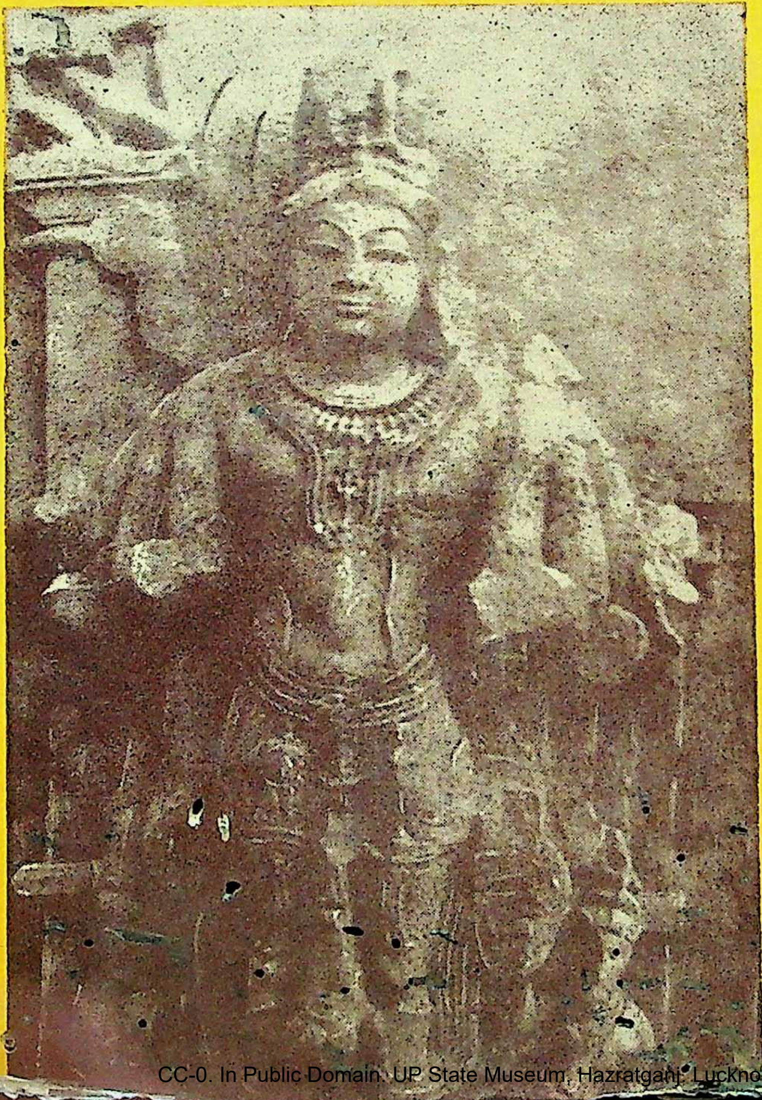

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS

साम्ब उप पुराण सौरधर्म का एक मौलिक ग्रन्थ है। इसमें सूर्य के उदीच्य वेश रूप के साथ अन्य रूपों के तथा उनकी पूजा-अर्चा के विस्तृत विवरण उपलब्ध हैं। इन विवरणों से भारत तथा ईरान के बीच धार्मिक-सांस्कृतिक सम्बन्धों का पता चलता है। साथ ही सूर्य-पूजा की व्यापकता एवं सूर्य के प्रतिमा-विज्ञान पर भी प्रकाश पड़ता है। इस पुराण से यह जानकारी मिलती है कि मुल्तान, काल्पी तथा कोणार्क में बड़े सौर-केन्द्रों की स्थापना हुयी। इन मुख्य केन्द्रों के अलावा अन्य बहुसंख्यक धार्मिक स्थलों में सूर्य-पूजा को महत्ता मिली।

प्रस्तुत पुस्तक के विद्वान् लेखक ने साम्ब पुराण के विवरणों को समीक्षात्मक ढंग से विवेचित किया है। इस विवेचन से यह तथ्य स्पष्ट रूप से उभरकर आया है कि वैष्णव तथा शैव मतों के साथ-साथ सौर मत का व्यापक प्रचार-प्रसार हुआ। मग पुरोहितों की विशिष्ट भूमिका पर इस पुस्तक से रोचक प्रकाश पड़ता है।

लेखक ने गवेषणात्मक दृष्टि से उन साहित्यिक तथा पुरातात्त्विक प्रमाणों का भी विवेचन किया है जो साम्ब पुराण के वर्णनों से साम्य रखते हैं। भारतीय धर्म एवं समाज के अध्ययन में प्रस्तुत पुस्तक बहुत सहायक सिद्ध होगी, इसमें सन्देह नहीं।

प्रो० कृष्णदत्त बाजपेयी, एफ. एन. आई.
सेवानिवृत्त टैगोर प्रोफेसर तथा अध्यक्ष
प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं
पुरातत्त्व विभाग,
सागर विश्वविद्यालय, मध्य प्रदेश

मूल्य रु० 57·00

वितरक
यूनिवर्सिटी बुक हाउस
२८९ ए, बाघम्बरी हाउसिंग स्कीम
अल्लापुर, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj, Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS

सम्मान्य प्रो० पन्त जी के
कर- कमलों में सादर
प्रेषित -
[illegible]

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS

# साम्ब पुराण का सांस्कृतिक अध्ययन

चन्द्रदेव पाण्डेय
एम० ए०, डी० फिल०

नीरज प्रकाशन
इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS

प्रस्तुत शोध-ग्रन्थ का प्रकाशन भारतीय इतिहास अनुसन्धान परिषद् के आर्थिक सहयोग से साकार हुआ है। इस ग्रन्थ में प्रस्तुत किए गए तथ्यों, मतों अथवा निस्सृत निष्कर्षों का उत्तरदायित्व पूर्णरूपेण लेखक पर है। भारतीय इतिहास अनुसन्धान परिषद् इसके लिए उत्तरदायित्व नहीं रखता।

प्रकाशक

**नीरज प्रकाशन**

२५, कृष्ण नगर, कीडगंज,

इलाहाबाद

प्रथम संस्करण : १९८६

© चन्द्रदेव पाण्डेय

मुद्रक

**भुवनेश्वरी प्रेस,**

११७ सी, टैगोर टाउन,

**इलाहाबाद**

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS

पूज्य पिताजी
एवं
माताजी
के
चरणों में
सादर
समर्पित

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS

# प्रस्तावना

इतिहास की अवधारणा, विषयवस्तु, सामग्री एवं स्रोत के विषय में विभिन्न देशों तथा संस्कृतियों में भिन्न-भिन्न विचारधाराएँ और मत-मतान्तर रहे हैं। परन्तु इतना निश्चित है कि इतिहास किसी भी देश एवं समाज का वह लेखा-जोखा है जिसमें मानव-जाति के सांस्कृतिक एवं भौतिक उत्थान-पतन का क्रमिक विवरण सुरक्षित है। यह संभव है कि कुछ संस्कृतियों में भौतिक तत्त्वों को प्रधानता दी जाय जबकि इसके विपरीत कुछ अन्य देशों में जीवन की समग्रता को ध्यान में रखकर आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक तत्त्वों को प्राथमिकता दी जाय। इसी दृष्टिकोण की भिन्नता के कारण बहुधा किसी देश अथवा समाज का इतिहास समझने और निरूपित करने में इतिहासकार दोष का भागी हो सकता है। इस प्रकार का एक दोषपूर्ण विश्लेषण साम्राज्यवादी परम्परा से प्रभावित पाश्चात्य विद्वानों ने भारतीय इतिहास-विधा के सम्बन्ध में किया है। प्राचीन भारत में ऐतिहासिक ज्ञान का अभाव था—इस असत्य की इतनी पुनरावृत्ति की गयी है कि इतिहास के सामान्य अध्येता को यही सत्य मालुम पड़ता है। इसी के साथ-साथ भारतीय इतिहास के स्रोत के रूप में वैदिक एवं पौराणिक साहित्य की जो अवमानना की गयी है वह किसी से छिपी नहीं है। इसमें सन्देह नहीं है कि वैदिक एवं पौराणिक वाङ्मय में जिस प्रतीकात्मक भाषा का प्रयोग किया गया है उसको भारतीय परम्परा से अनभिज्ञ न तो समझ सकते हैं और न ही उसके आधार पर इतिहास का निर्माण कर सकते हैं। उनको समझने के लिए एक ऐसी दृष्टि की आवश्यकता है जो भारतीय परम्परा से सहानुभूति रखती हो परन्तु साथ ही साथ वैज्ञानिक निष्पक्षता से परे भी न हो। यह सौभाग्य का विषय है कि इस शताब्दी के मध्य से भारतीय इतिहास एवं उसकी सामग्री के अनुशीलन के विषय में नवीन दृष्टि आयी है जिसके अन्तर्गत पौराणिक साहित्य का भारतीय इतिहास एवं संस्कृति के स्रोत के रूप में अध्ययन, विश्लेषण एवं अनुशीलन हो रहा है। मधुसूदन ओझा, गिरधर शर्मा चतुर्वेदी, ए० डी० पुसाल्कर, बलदेव उपाध्याय, आर० सी० हाजरा, डी० आर० पाटिल, वी० एस० अग्रवाल, ए० बी० एल० अवस्थी, कान्तावाला तथा एस० एन० राय आदि विद्वानों ने भारतीय इतिहास एवं संस्कृति के

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



स्रोत के रूप में पौराणिक साहित्य का जो विशद् अनुशीलन किया है वह उपर्युक्त तथ्य की पुष्टि करता है।

पौराणिक वाङ्मय में अधिकतर महापुराणों का ही विश्लेषण हुआ है परन्तु भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं धर्म-साधना के स्वरूप को जानने के लिए उपपुराणों की भी उतनी ही महत्ता है (अगर अधिक नहीं है) जितनी कि महा-पुराणों की। महापुराणों की अपेक्षा उपपुराणों में प्रक्षिप्त अंश कम है। इसलिए भी इतिहास के दृष्टिकोण से उनकी उपादेयता अधिकतर है। इसके अतिरिक्त उपपुराण अधिकांशतः सम्प्रदायपरक हैं। अस्तु सम्प्रदाय विशेष और समाज में क्या सम्बन्ध था—इसका ज्ञान तो उपपुराणों के माध्यम से ही हो सकता है। इस प्रकार के समाजशास्त्रीय विषयों का विश्लेषण उपपुराणों के माध्यम से वाञ्छनीय है।

उपपुराणों में साम्ब पुराण सौरधर्म का मौलिक एवं मानक ग्रन्थ है जिसकी सामग्री अन्य पुराणों में ग्रहण की गयी। इस दृष्टिकोण से भी साम्ब उपपुराण का परिशीलन एवं विश्लेषण महत्वपूर्ण है। साम्बपुराण में सौरधर्म सम्बन्धी जो सामग्री सुरक्षित है, उसका विश्लेषण अभी तक एक स्वतन्त्र शोध-ग्रन्थ के रूप में प्रस्तुत नहीं किया गया। इसके साथ ही साथ सौरधर्म एवं भारतीय संस्कृति तथा समाज का पारस्परिक सम्बन्ध भी अभी तक अछूता विषय रहा है। साम्ब पुराण में पाँचवीं शताब्दी ई० से लेकर पन्द्रहवीं शताब्दी ई० तक की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति अप्रत्यक्ष रूप से परिलक्षित होती है। साथ ही साथ सौर परम्परा का क्लासिकल रूप, उसके विकास की रेखाएं एवं प्रवृत्तियाँ भी सम्यक्रूपेण आलोचित नहीं हुयी हैं। पिछले दो दशकों में सूर्य-पूजा पर जो भी शोध-कार्य हुए उनसे विभिन्न पक्षों पर प्रकाश पड़ता है। किन्तु फिर भी सौरधर्म की अनेक समस्याएं बनी रहीं जैसे—मगों की उत्पत्ति, मूलदेश, मग-प्रभाव, मग एवं भोजक पुरोहितों की विभिन्नता का सिद्धान्त आदि।

डॉ० चन्द्रदेव पाण्डेय ने साम्ब पुराण का सांस्कृतिक अध्ययन प्रस्तुत करने का जो श्लाघनीय प्रयास किया है उसमें उपर्युक्त समस्याओं एवं प्रश्नों का समीक्षात्मक तथा विशद् विवेचन है। मगों का मूलदेश भारत में न होकर ईरान में ही था। चतुर्व्यूह अवधारणा से साम्ब के निष्कासन के आधार पर तिथि-निर्णय और उसका सामाजिक परिप्रेक्ष्य में विश्लेषण, समाज में पञ्चम वर्ण की स्थिति, सौरधर्म पर तान्त्रिक प्रभाव, सूर्य-प्रतिमा-विज्ञान एवं मन्दिरों का सांगोपाङ्ग विवेचन—इन सब विषयों का ऐतिहासिक निष्पक्षता से समालोचन किया है।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



मुख्य विशेषता इस तथ्य में निहित है कि डॉ० पाण्डेय का जो आधिपत्य पौराणिक भाषा एवं अन्तरङ्ग साक्ष्य के सम्बन्ध में है, उसी प्रकार का अधिकार पुरातात्त्विक एवं बहिरङ्ग साहित्यिक साक्ष्यों के सम्बन्ध में भी परिलक्षित होता है। शैली सरल परन्तु प्रभावपूर्ण है। भाषा शुद्ध, व्याकरणसम्मत एवं प्राञ्जल है। प्रस्तुत शोध-ग्रन्थ को भारतीय इतिहास एवं संस्कृति के अनुरागियों के समक्ष प्रस्तुत करते हुए अपार हर्ष हो रहा है। आशा ही नहीं विश्वास है कि डॉ० पाण्डेय के इस पाण्डियपूर्ण ग्रन्थ का विद्वत् समाज आदर करेगा तथा भावी शोध-कर्त्ताओं के लिए यह मार्ग प्रशस्त करेगा।

विनोद चन्द्र श्रीवास्तव
**मणीन्द्रचन्द्र नन्दी प्रोफेसर**
प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं
पुरातत्त्व विभाग
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय,
वाराणसी

२५ मई, १९८६

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS

# पूर्वपीठिका

भारतीय मनीषा को पौराणिक वाङ्मय में प्राचीन काल से प्रश्रय समुपलब्ध है। राष्ट्रीय जीवन के प्रतिनिधि होने के कारण पुराणों में इस महादेश के साहित्य तथा संस्कृति का भव्य रूप प्राप्त होता है। अनुसन्धानात्मक प्रवृत्तियों से यह मान्यता स्थापित हो चुकी है कि पुराणों में प्राचीन भारतीय संस्कृति की विपुल सम्पदा सुरक्षित है। विद्वद्वर्ग ने प्रायशः महापुराणों पर ही चिन्तन-मनन किया है। पार्जीटर ने पुराण इन्साइक्लोपीडिया आफ रेलिजन एण्ड एथिक्स, भाग १०, द पुराण टेक्सट्स आफ डायनस्टीज आफ द कलि एज, आक्सफोर्ड, १९१३, ऐन्शियन्ट इण्डियन हिस्टारिकल ट्रेडीशन, लन्दन, १९२२; डॉ० राजेन्द्रचन्द्र हाजरा ने स्टडीज इन द पौराणिक रिकार्ड्स आन हिन्दू राइट्स एण्ड कस्टम्स, ढाका, १९४०; डी० आर० पाटिल ने कल्चरल हिस्ट्री फ्राम द वायुपुराण, पूना, १९४६; ए० डी० पुसाल्कर ने स्टडीज इन द एपिक्स एण्ड पुराणाज, बम्बई, १९५५; श्रीमती वीणापाणि पाण्डेय ने हरिवंश पुराण का सांस्कृतिक विवेचन, लखनऊ, १९६०; वासुदेव शरण अग्रवाल ने मार्कण्डेय पुराण : एक सांस्कृतिक अध्ययन, इलाहाबाद, १९६१; मत्स्यपुराण—ए स्टडी, वाराणसी, १९६३ तथा वामन पुराण—ए स्टडी, वाराणसी, १९६४; एस० जी० कान्तावाला ने कल्चरल हिस्ट्री फ्राम द मत्स्यपुराण, बड़ौदा, १९६४; आचार्य बलदेव उपाध्याय ने पुराण-विमर्श, १९६५; एन० वाई० देसाई ने ऐन्शियन्ट इण्डियन सोसाइटी, रेलिजन एण्ड माइथालाजी ऐज डिपिक्टेड इन द मार्कण्डेय पुराण, बड़ौदा, १९६८; हरिशङ्कर उपाध्याय ने कल्चरल स्टडी आफ द पद्मपुराण, १९६८; राजमणि ने ए क्रिटिकल स्टडी आफ द भागवत पुराण, वाराणसी, १९७०; अशोक चटर्जी ने पद्मपुराण ए क्रिटिकल स्टडी, कलकत्ता, १९७२; एन० गंगाधरन ने गरुडपुराण ए स्टडी, वाराणसी, १९७५ तथा ए० बी० एल० अवस्थी ने स्टडीज इ द स्कन्द पुराण द्वारा पौराणिक माहात्म्य उद्घाटित किया है। प्रो० सिद्धेश्वरी नारायण राय ने 'पौराणिक धर्म एवं समाज' के अन्तर्गत पुराण चतुष्टय-वायु, ब्रह्माण्ड, विष्णु तथा मत्स्य की विशिष्टता का प्रतिपादन किया है। इस प्रकार विद्वद्दृष्टि महापुराणों पर ही केन्द्रित रही है।

विद्वानों का ध्यान उपपुराणों की ओर कम आकृष्ट हुआ है। मात्र डॉ०

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



हाजरा जैसे विद्वान् ने उप पुराणों का आलोचन-पर्यालोचन कर उनकी महत्ता प्रमाणित करने का यत्न किया है। हाजरा महोदय ने द उप पुराणाज, एनाल्स आफ भण्डारकर ओरिएन्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट (२१), १९४०, द साम्बपुराण थ्रू द एजेज, जर्नल आफ एशियाटिक सोसायटी, लेटर्स, भाग (२), साम्बपुराण–ए सौर वर्क आफ डिफरेन्ट हैन्ड्स, एनाल्स आफ भण्डारकर ओरिएन्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, भाग ३६, १९५५ तथा स्टडीज इन द उप पुराणाज, भाग १, कलकत्ता, १९५८ द्वारा उप पुराणों की महत्ता स्थापित किया है। निस्सन्देह उनका एवंविध प्रयास श्लाघनीय है किन्तु इसे ही अन्तिम परिणति स्वीकार कर लेना भी सर्वथा समीचीन नहीं है। उप पुराणों के सम्यक् अनुशीलन-परिशीलन की महती आवश्यकता है। उपप्रभेदीय प्रस्थिति के कारण इनमें परिष्करण-संवर्धन की प्रक्रिया भी अल्पांश में ही लक्षित होती है। संयोगवशात् इस प्रवृत्ति के कारण उपपुराणों में प्राप्त सामग्री की मौलिकता सुरक्षित रही। उप पुराण प्राचीन भारतीय संस्कृति के अक्षय्य कोष हैं। उनमें न केवल सामाजिक एवं धार्मिक प्रत्युत साहित्यिक, ऐतिहासिक, भौगोलिक तथा सांस्कृतिक तत्त्व भी अपने मौलिक रूप में विद्यमान हैं। वे प्राचीन भारत की विभिन्न ज्ञान-प्रशाखाओं और साहित्य के सम्बन्ध में बहुमूल्य ज्ञान प्रदान करते हैं तथा संस्कृत वाङ्मय की विलुप्तप्राय ऐतिहासिक कृतियों के पुनर्निर्माण में उप पुराण महापुराणों से भी श्रेष्ठतर हैं। निस्सन्देह वे भारतीयता के प्रबुद्ध प्रहरी एव संरक्षक हैं।

उप पुराणों में ऐतिहासिक तत्त्व विद्यमान हैं। वस्तुतः इतिहास मानव-समाजों, पुरावृत्तों, धार्मिक मान्यताओं एवं प्राचीन सामग्री के अध्ययन पर समाधारित होता है। संरचनात्मक, क्रियात्मक, सामाजिक, आर्थिक, ज्ञानमीमांसात्मक तथा नृतत्त्वशास्त्रीय रूपाकारों को अभिव्यञ्जित करने के उद्देश्य से किया गया ऐतिहासिक साधारणीकरणों का साधारणीकरण इतिहास के अवधारणीकरण की प्रक्रिया के रूप में स्वीकार किया जाता है। इतिहास का निर्माण चुने हुए तथ्यों के आधार पर अपने विशिष्ट सन्दर्भ के अन्तर्गत ही निस्सृत साधारणीकरणों द्वारा होता है। ऐतिहासिक साधारणीकरणों के अवधारणीकरण से ऐतिहासिक क्षितिज पर स्थित विभिन्न सामाजिक विज्ञानों के क्षेत्र में विधाओं का प्रादुर्भाव होता है। परिणामतः आर्थिक, सांस्कृतिक, समाजशास्त्रीय, वैज्ञानिक, प्रत्ययवादी तथा एवंविध अन्य विधाएंजन्म ले लेती हैं। आर्थिक विधाओं में क्लासिकल अर्थशास्त्र, उपयोगितावाद तथा मार्क्सवाद को उदाहृत किया जा सकता है। सांस्कृतिक

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



विधाओं के अन्तर्गत स्पेंग्लर, टॉयनबी तथा सोरोकिन की विधाएं ग्रहण-योग्य हैं। समाजशास्त्रीय विधा के उत्तम उदाहरण मैक्स वेबर तथा टालकट पारसन्स की कृतियाँ हैं। ज्ञानात्मक प्रकृति की श्रृङ्खला में प्रत्ययवादी उदाहरण के रूप में क्रोचे तथा कालिंगवुड के इतिहास-शास्त्रीय सम्प्रदायों का विवेचन प्रस्तुत किया जा सकता है। हीगेल और मार्क्स के निर्धारणात्मक सिद्धान्तों का ऐतिहासिकतावाद तथा पांपर जैसे अन्य लोगों की प्रस्थापनाओं का वस्तुनिष्ठतावाद या वैज्ञानिकतावाद के निर्देशन के रूप में उल्लेख किया जा सकता है। इस प्रकार प्रत्येक विधा की उत्पत्ति अवधारणीकरण के प्रयास में हुयी है।[१]

इतिहास चूंकि जीवन को उसकी संश्लिष्ट विविधता अथवा समग्रता में देखने का प्रयास करता है इसलिए वह अभिकर्त्ताओं, शक्तियों और परिस्थितियों के उद्देश्य, वैयक्तिक और निर्वैयक्तिक, निर्धारणात्मक और अनिर्धारणात्मक आकार एवं पुनराकार ग्रहण की प्रक्रिया का अध्ययन है। इसमें कुछ भी पूर्व निश्चित नहीं हो सकता और न ही किसी वस्तु का अवधारणीकरण, सिद्धान्तीकरण तथा भविष्यकथन ही सम्भव हो सकता है, तथापि इनमें से प्रत्येक अवयव परिवर्तन-प्रक्रिया के एक सीमित बोधगम्य आयाम में अपने अस्तित्व की सीमा तक उपस्थित है। इतिहास, इस प्रकार एक ऐसा विषय है जिसमें स्थायी ध्रुवीकरण अपनी अनुपस्थिति के कारण महत्वपूर्ण है। इसीलिए पद्धतिबद्ध इतिहास की संकल्पना असम्भव है।

हीगेल की अवधारणा में सारा इतिहास मात्र चिन्तन का इतिहास है क्योंकि राज्य ही पृथ्वी पर चिन्तन - शक्ति का अवतरण है।[२] दार्शनिक द्वारा इतिहास की रचना के प्रयास की समीक्षा करते हुए टाँके की धारणा है कि 'एक ऐसे सत्य से प्रारम्भ करते हुए जो उसे अन्यत्र प्राप्त हुआ है तथा एक दार्शनिक के रूप में जो उसकी विशेषता है, वह इतिहास की रचना स्वयं अपने लिए करता है, यह प्रदर्शित करते हुए कि कैसे वह मानव के विषय में उसकी अवधारणा की सम्पुष्टि करता है। बिना अपने को धोखे में रखे और बिना सचमुच घटने वाली घटनाओं के क्रम से इस बात की जाँच किये कि उसकी धारणा सही है या गलत

१. डॉ० ओमप्रकाश, पद्धतियाँ, इतिहास और सन्दर्भ, पृ० ९७

२. कालिंग वुड, आर० जी०, द आइडिया आफ हिस्ट्री, पृ० ११५–६

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



वह घटनाओं को ही अपनी धारणा का अनुगामी बना देता है। वस्तुतः सत्य को वह उसी सीमा तक देखता है जिस सीमा तक वह उसकी धारणा के अनुकूल होती है। यह इतिहास की एक विडम्बना मात्र है।[1] मार्क्सवादी विधानान्तर्गत ऐतिहासिक वृत्तान्त को आर्थिक शक्तियों की ही क्रिया-प्रतिक्रिया के रूप में समझने के लिए बाध्य होना पड़ता है।

इस प्रकार इतिहास का अध्ययन लोग प्रायः एकांगी दृष्टिकोण से करते हैं। कुछ विद्वान् आदर्शवादी पद्धति को स्वीकार करते हैं तो कुछ मार्क्सवादी विधा को ही प्रश्रय देते हैं। संस्कृति का उदय भौतिक एवं सांस्कृतिक दोनों ही कारणों से समवेत रूप में होता है। किसी भी एक उपादान का पृथक् महत्व नहीं होता। अतः मैंने न केवल आदर्शवादी प्रत्यय को और न ही मात्र मार्क्सवादी धारणा को महत्व दिया है, प्रत्युत दोनों ही अवधारणाओं के समन्वय का प्रयास किया है।

साम्ब पुराण एक उपपुराण है। अन्य ग्रन्थों ने सौरधर्म विषयक सामग्री साम्ब पुराण से ही ग्रहण किया था। अतः यह सौरार्चन का एक मौलिक ग्रन्थ है। साम्ब पुराण की पाण्डुलिपियों (गंगानाथ झा केन्द्रीय सस्कृत विद्यापीठम्, इलाहाबाद, पाण्डुलिपि संख्या १६४१३, एशियाटिक सोसाइटी बंगाल के पुस्तकालय की पाण्डुलिपि संख्या, ४०६१, ४०६२, ४०६३, ४०६४ तथा संस्कृत कालेज वाराणसी की पाण्डुलिपि) का मैंने तुलनात्मक अध्ययन किया है। विशेषतः गङ्गानाथ झा की पाण्डुलिपि का अध्ययन अभी तक किसी ने नहीं किया है। सर्वप्रथम मैंने ही उसको पढ़ा है। साम्बपुराण का साहित्यिक एवं सांस्कृतिक दोनों ही दृष्टिकोणों से अध्ययन किया जा सकता है। प्रस्तुत ग्रन्थ का मैंने सांस्कृतिक अध्ययन किया है। सांस्कृतिक अध्ययन के विवेचन के पूर्व संस्कृति की अवधारणा को सुस्पष्ट करना प्रासंगिक प्रतीत होता है।

सस्कृति मूल्यों की परम्परा में आत्म-बोध है। मानवीय प्रयास की आत्मानुभूति ऐतिहासिक परम्परा के रूप में सांस्कृतिक जगत् की सृष्टि करती है। संस्कृति का अभिप्राय ऐतिहासिक अन्तः परिधि में मानव के उत्कृष्टतम क्रिया-प्रणाली के आत्म-बोध से है। संस्कृति के भौतिक एवं आध्यात्मिक पक्षद्वय होते हैं। विज्ञान एवं तकनीकी मानव-परिवेश के अनुकूल उसे साधन प्रदान करते हैं। सांस्कृतिक

---

१. रांके, लियोपोल्ड फान, द थियरी एण्ड प्रैक्टिस आफ हिस्ट्री, पृ० ३६–४४

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



जगत् का निर्धारण सिद्धान्त नहीं प्रत्युत तकनीकी करते हैं। इस प्रकार विज्ञान और तकनीकी संस्कृति के शाश्वत मूल्य बन जाते हैं तथा अन्य मूल्य एवं विचार अस्थायी महत्व के होते हैं। विज्ञान एवं तकनीकी भौतिक जगत् में मानव को आत्म-तुष्टि हेतु ज्ञान एवं शक्ति प्रदान करते हैं किन्तु इससे न्यायप्रिय, स्वतन्त्र, शान्तिप्रिय तथा सुखी समाज का निर्माण नहीं होता। पुनश्च साहित्यिक, कलात्मक तथा धार्मिक मूल्यों की सृष्टि भी नहीं होती। प्रत्येक संस्कृति सामान्य मानवीय आवश्यकताओं की सम्पूर्ति-प्रक्रिया में शारीरिक सुरक्षा, सुख तथा आनन्द हेतु विज्ञान एवं तकनीकी को विकसित करती है।

हर संस्कृति के मूल्य भिन्न-भिन्न होते हैं। सांस्कृतिक प्रवृत्तियाँ विज्ञान एवं तकनीकी के ऐतिहासिक विकास को प्रभावित करती हैं। तकनीक प्रधान दृष्टि उस संस्कृति पर निर्भर करती है जिसका स्वरूप हमारे मानस में होता है और यह किसी भी सार्वभौमिक नियम की स्थापना नहीं करती। मूलतः विज्ञान तथा तकनीकी का विकास स्वीकृत सांस्कृतिक परम्परान्तर्गत होता है। उनके विकास तथा परिवर्तनजन्य परिस्थितियों को ऐतिहासिक मूल्यों के परिप्रेक्ष्य में ही समझा जा सकता है।

अधिकांश इतिहासकार यह मत प्रतिपादित करते हैं कि संस्कृति सुनिश्चित क्षेत्र तथा काल में एक विशेष समाज द्वारा अर्जित सम्पदा है, एक सामाजिक परम्परा है। यदि संस्कृति को समाज की उपलब्धि स्वीकार किया जाय तो 'उपलब्धि' को पारिभाषित करना होगा। स्वयं समाज दुष्प्रतिपाद्य है। मनुष्यों के समुदाय के रूप में समाज को परिभाषित करना औचित्यपूर्ण प्रतीत नहीं होता। सांस्कृतिक विशिष्टताओं से मानव समूह का विभाजन नहीं होता प्रत्युत भौगोलिक सीमाएं उन्हें पृथक् करने में सक्षम हो सकती हैं किन्तु इसे भी स्थायी मान्यता के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता। इस प्रकार समाज को परिभाषित करने में अनेक जटिलताएं हैं।

यदि यह कहा जाय कि समाज संस्थाओं की एक सर्वोच्च संस्था है तो यह स्वीकार करना होगा कि संस्था मानव स्वभाव की उपज है और कोई भी संस्था संस्कृति की अंग नहीं हो सकती। पुनश्च, संस्थाएं कतिपय विचारों पर आधारित होती हैं। बोसांके के अनुसार यह स्थापित किया जा सकता है कि समाज विचारों की एक आभ्यन्तरिक प्रतीति है। विचारों के आलोक में

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



संस्थाओं–समाज के अन्तः मूल्यबोध को समझा जा सकता है और उसे ही व्यवस्थित सामाजिक क्रिया-कलाप के अलावा संस्कृति की अभिधा से विभूषित करना समीचीन प्रतीत होता है। विशिष्टतम बौद्धिक क्रिया-कलाप का सुव्यवस्थित रूप ही अन्ततः संस्कृति की परिणति प्राप्त कर लेता है।

समाज की गतिविधियों में एकता पायी जाती है। वह एकता भी विषय-निष्ठ तथा आत्मनिष्ठ दो प्रकार की होती है। विषयनिष्ठ एकता में विभिन्न किन्तु अन्तः सम्बद्ध प्रत्याहार क्रमबद्ध व्यवस्था का प्रादुर्भाव करते हैं। इस प्रकार की एकता प्रकृति की कृतियों में भी पायी जाती है। दूसरी एकता जो विषय से सम्बद्ध होती है, सांस्कृतिक प्रबुद्धता की एकता निरूपित की जाती है। संस्कृति इस प्रकार की एकता उत्पन्न नहीं करती। एकता आत्मबोध में पायी जाती है। जब हम किसी चित्रकला या दर्शन से अभिभूत हो जाते हैं तो वस्तुतः यह भावनाओं के तादात्म्य पुनश्च आत्मबोध के कारण ही होता है। समग्र संस्कृतियां स्व 'आत्म-बोध' पर ही समाधारित होती हैं।

संस्कृति की एकता का तात्पर्य विषयनिष्ठ व्यवस्था की एकता से नहीं, प्रत्युत आत्मबोध की एकता से है। विभिन्न विषयों में अन्तर्सम्बन्ध के कारण विषयनिष्ठ एकता पायी जाती है किन्तु संस्कृति की एकता इससे भिन्न होती है। उसमें आत्मनिष्ठ विषयों, 'आत्मबोध' की एकता पायी जाती है। इस प्रकार संस्कृति आत्मनिष्ठ विषयों (जगत्) के माध्यम से अध्यात्म व्यवस्था की प्रकाशिका है। आत्म-बोध एवं आत्म-अनुभूति मानव-जीवन के अपरिहार्य तथ्य हैं और समग्र संस्कृति इसी अन्वेषण-प्रक्रिया में सतत विकसित होती रहती है।[१]

उपर्युक्त विवेचित संस्कृतिक मूल्यों के अन्तर्गत ही मैंने साम्बपुराण का अध्ययन किया है। इस पुराण पर बहुत ही कम कार्य हुआ है। पुनश्च, सांस्कृतिक दृष्टि से तो कोई भी कार्य नहीं हुआ है। जर्मन विद्वान् एच० वान स्टेटन्क्रान ने साम्बपुराण के मग पुरोहितों की समस्या पर विचार किया है। वे मगों की सामाजिक स्थिति पर प्रकाश डालते हैं। उनके इस कार्य से साम्ब पुराण के सांस्कृतिक अध्याय पर प्रकाश नहीं पड़ता कारण कि अन्य पक्षों का विवेचन उनका उद्देश्य नहीं था। प्रो० लालताप्रसाद पाण्डेय ने अपने शोधग्रन्थ 'सन-

१. पाण्डे, गोविन्द चन्द्र, द मीनिङ्ग एण्ड प्रासेस आफ कल्चर, पृ० ११

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



वरशिप इन ऐन्शियन्ट इण्डिया' में साम्बपुराण का संक्षिप्त अनुशीलन प्रस्तुत किया है जो शोध-दिशा में एक आयाम की सृष्टि करता है। प्रो० विनोदचन्द्र श्रीवास्तव द्वारा साम्बपुराण का हिन्दी-अनुवाद भी इस दिशा में एक स्तुत्य प्रयास है। तथापि इन कार्यों को पूर्ण मान लेना तर्कसङ्गत नहीं है। प्रस्तुत ग्रन्थ में प्रतिपादित विचारों में यथासम्भव नवीनता एवं अनुल्लिखित पक्षों को सन्निवेशित करने की चेष्टा की गयी है।

इस अध्ययन के अन्तर्गत सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक एवं दार्शनिक पटलों को सम्यक्रूपेण विश्लेषित एवं समीक्षित करने का यत्न किया गया है। सौरार्चन की अद्यावधिक अनुसन्धान-परम्परा में अनुष्ठानात्मक पक्ष पर अत्यल्प ध्यान दिया गया है। अतः यहाँ उन्हें महत्वमयी पृष्ठभूमि में निरूपित करते हुए मानव-जीवन से सम्बद्ध करने का प्रयास किया गया है।

प्रस्तुत ग्रन्थ को छः अध्यायों में उपन्यस्त किया गया है। प्रथम अध्याय में साम्ब पुराण के प्रतिपाद्य विषय का विवेचन करते हुए सौरधर्म का अनुशीलन प्रस्तुत किया गया है। द्वितीय अध्याय में अन्तः एवं बहिः साक्ष्य प्रमाणों के आधार पर साम्ब पुराण का काल-निर्णय किया गया है। तृतीय अध्याय में साम्बपुराण में परिलक्षित सामाजिक एवं आर्थिक अवस्था का प्रतिपादन करते हुए पूर्व मध्यकाल में होने वाले समाजार्थिक परिवर्तनों पर प्रकाश डाला गया है। इस काल में स्वर्ण-मुद्राओं के अभाव से ह्रासोन्मुखी अर्थ-व्यवस्था का परिचय प्राप्त होता है। चतुर्थ अध्याय में धार्मिक एवं दार्शनिक अवस्था का निरूपण करते हुए सूर्य-पूजा पर सांख्य, योग, शैव तत्त्वों एवं तन्त्रोपासना के प्रभाव का विशद् विवेचन किया गया है। पंचम अध्याय में सूर्य-प्रतिमा-विज्ञान का प्रतिपादन करते हुए पौराणिक वाङ्मय, आगम साहित्य तथा शिल्प शास्त्रों में उल्लिखित सूर्य-प्रतिमाओं की साम्बपुराण की सूर्य-प्रतिमा से तुलना की गयी है। अन्ततः पूर्व-मध्यकाल की सूर्य-प्रतिमाओं का विवेचन किया गया है। अन्तिम अध्याय में साम्ब पुराण में वर्णित सूर्य-मन्दिरों का उल्लेख करते हुए सौर धर्म के पतन के कारणों का विश्लेषण किया गया है।

प्रस्तुत ग्रन्थ इलाहाबाद विश्वविद्यालय की डी० फिल० उपाधि के लिए स्वीकृत शोध-प्रबन्ध का ही परिष्कृत रूप है। इस ग्रन्थ के प्रणयन में मेरे आचार्यों, सहयोगियों एवं मित्रों का अविस्मरणीय योगदान रहा है। अतः उनके प्रति कृतज्ञता-संज्ञापन मैं अपना पावन कर्तव्य समझता हूँ। सर्वप्रथम मैं

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



अपने गुरु श्रद्धेय प्रो० विनोदचन्द्र श्रीवास्तव का विशेष कृतज्ञ हूँ जिनके समुचित निर्देशन तथा आशीर्वचन के कारण ही यह कार्य पूर्ण हो सका है। उन्होंने इस पुस्तक की प्रस्तावना लिखकर मुझे अनुगृहीत किया है। गुरुवर्य प्रो० गोवर्द्धन राय शर्मा का आभारी हूँ जिनकी छत्रच्छाया में मैं यह कार्य पूर्ण करने को उद्यत हुआ। सम्पूज्य आचार्य प्रो० गोविन्दचन्द्र पाण्डे का विशेष कृतज्ञ हूं जिनकी वैदुष्यपूर्ण सदुक्तियों से सम्मार्जित एवं परिष्कृत होकर यह ग्रन्थ अपनी वास्तविक परिणति को प्राप्त हो सका है। उनके आशीर्वचन से मेरा अध्ययन-पथ आलोकित होता रहा है। सम्मान्य प्रो० जसवन्त सिंह नेगी का आभारी हूँ जिनका मुझे छात्र होने का सौभाग्य रहा है। उनकी सत्प्रेरणाएँ मुझे सर्वदा बल देती रही हैं। प्रो० उदयनारायण राय एवं प्रो० ब्रजनाथ सिंह यादव के आशीर्वाद एवं स्नेह को विस्मृत नहीं कर सकता जिन्होंने मुझे निरन्तर उत्साहित किया है।

अपने गुरुजनों प्रो० सिद्धेश्वरी नारायण राय, प्रो० शिवेश चन्द्र भट्टाचार्य, डॉ० सन्ध्या मुकर्जी, प्रो० राधाकान्त वर्मा, श्री विद्यावर मिश्र, श्री रामकृष्ण द्विवेदी, डॉ० ओमप्रकाश, श्री धनेश्वर मंडल, प्रो० उदय प्रकाश अरोरा, डॉ० रामप्रसाद त्रिपाठी, श्री बृजबिहारी मिश्र तथा डॉ० जयनारायण पाण्डेय के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ जिनके आशीर्वचन से मैं यह कार्य पूर्ण करने में सक्षम हो सका हूँ। सहयोग के लिए अपने मित्रों डॉ० ज्ञानेन्द्र कुमार राय तथा डॉ० जगन्नाथ पाल को धन्यवाद देता हूँ।

यशः शेष डॉ० महाबीर प्रसाद लखेड़ा से मुझे समय-समय पर सत्परामर्श प्राप्त होता रहा है अतः उनके प्रति मैं श्रद्धानत हूँ। डॉ० गयाचरण त्रिपाठी, प्राचार्य, गङ्गानाथ झा केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ, इलाहाबाद से प्राप्त सम्मतियों के लिए आभार व्यक्त करता हूँ। श्रद्धेय प्रो० सूर्यनारायण मिश्र तथा श्री जयनारायण पाण्डेय ने मुझे सदैव विद्यानुराग के प्रति सचेष्ट रखा है अतः उनके प्रति हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ। श्रद्धेय डॉ० जयशङ्कर त्रिपाठी तथा आचार्य पं० रामनिरञ्जन मिश्र से प्राप्त सत्प्रेरणाओं एवं आशीर्वचन के लिए मैं उनका कृतज्ञ हूं।

पूज्यपाद पिताजी श्री रामप्रताप पाण्डेय एवं अग्रज श्री वासुदेव पाण्डेय से सतत प्राप्त आशीष एवं स्नेह के लिए मैं नतशीश हूँ। अपने सुहृद श्री विमल चन्द शुक्ल, श्री विनोद कुमार ओझा एवं श्री रामचन्द्र मिश्रा से प्राप्त सौहार्द एवं

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



साहाय्य के लिए मैं उनका उपकृत हूँ। अपने सहयोगियों डॉ० आदित्य प्रसाद ओझा, डॉ० अतुलकुमार सिनहा एवं सुश्री उमा जायसवाल से प्राप्त सहयोग के लिए आभार व्यक्त करता हूँ। मेरी धर्मपत्नी श्रीमती मालती पाण्डेय मुझे सदैव अध्ययन का अवसर प्रदान करती रही हैं अतः उनके प्रति कृतज्ञता व्यक्त करता हूं। अनुज श्री सत्यदेव पाण्डेय द्वारा प्रदान की गयी सहायता के लिए उन्हें साधुवाद देता हूं। डॉ० रामदर्शन मिश्र ने मुझे समय-समय पर पुस्तकालय सम्बन्धी सहायता प्रदान किया है, अतः उनके प्रति आभार व्यक्त करता हूँ। भुवनेश्वरी प्रेस के व्यवस्थापक श्री जटाशंकर तिवारी के निरन्तर सहयोग एवं सौहार्द से ही यह ग्रन्थ प्रकाशित हो सका है, अतः उनके प्रति मैं हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ। श्री केदारनाथ निषाद ने मुद्रण-कार्य को सम्पन्न करने में मेरी बड़ी सहायता की है अतः उन्हें धन्यवाद देना मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूँ। अन्ततः मैं भारतीय इतिहास अनुसन्धान परिषद् (नई दिल्ली) का विशेष आभारी हूँ जिसके आर्थिक सहयोग से ही यह ग्रन्थ अपने वर्त्तमान रूप में प्रतिष्ठित हो सका है।

सहस्रांशुमाली भगवान् भास्कर पुराण–जिज्ञासुओं के हृदय-तमस् को विदीर्ण कर उनका जीवन-पथ आलोकित करें—यही उनसे मेरी हार्दिक कामना है और यही है अभ्यर्थना भी।

इलाहाबाद
गङ्गा दशहरा, संवत् २०४३

चन्द्रदेव पाण्डेय

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS

# अनुक्रम


पृष्ठ संख्या

प्रस्तावना i–iii

पूर्वपीठिका i–ix

अध्याय

**१ : साम्ब पुराण का प्रतिपाद्य विषय १–३५**

पुराणों की उत्पत्ति एवं महत्ता १–४

उप पुराणों की विशिष्टता ४–७

पुराण-लक्षण ७–९

उप पुराणों की सूची १०–१९

सौरग्रन्थ १९–२०

साम्ब पुराण की पाण्डुलिपियाँ २०–२३

साम्ब पुराण की विषयवस्तु २३–२४

सौर धर्म का ऐतिहासिक अनुशीलन २४–२६

साम्ब पुराण की कथावस्तु २७–२८

मगों की उत्पत्ति एवं प्राचीनता २८–३०

साम्ब पुराण में उल्लिखित सूर्य-मन्दिर ३०–३१

सामाजिक एवं आर्थिक अवस्था ३१–३४

सौर धर्म पर वैदिक एवं तान्त्रिक प्रभाव ३४

सारांश ३५

**२ : साम्बपुराण का काल-निर्धारण ३६–४५**

साम्ब पुराण के अन्तरङ्ग साक्ष्य ३६–४०

विद्वानों के विचार ४०–४१

बहिरङ्ग साक्ष्य ४१–४२

पञ्चवीर की अवधारणा तथा चतुर्व्यूह से साम्ब का निष्कासन ४२–४४

पुरातात्त्विक प्रमाण ४४–४५


CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



**३ : साम्ब पुराण में वर्णित सामाजिक एवं आर्थिक व्यवस्था** ४६–७६

वर्णाश्रम व्यवस्था एवं वैदिक परम्परा ४६–४७

साम्ब पुराण में वर्णाश्रम-व्यवस्था ४७–५०

मगों की उत्पत्ति ५०–५१

शाकद्वीप का तादात्म्य ५२–५३

साम्बपुराण का अन्तरङ्ग साक्ष्य ५३

भारत में मग पुरोहितों की प्राचीनता ५३–५५

पुरातात्त्विक एवं भौगोलिक साक्ष्य ५५–५८

भारतीय समाज में मग पुरोहितों का विलय ५८–५९

मग एवं भोजक ५९

ब्राह्मण एवं क्षत्रियों की स्थिति ६०

चतुर्व्यूह से साम्ब का निष्कासन ६१

वैश्य एवं शूद्रों की स्थिति ६१–६५

वर्ण-विभाजन तथा उप जातियों का प्रादुर्भाव ६५–६८

स्त्री-दशा ६९–७१

समाज में प्रचलित भोजन, वाद्य एवं अन्य उपकरण ७१–७४

प्रचलित संस्कार ७४–७५

आर्थिक अवस्था ७५

सारांश ७६

**४ : साम्ब पुराण में धार्मिक एवं दार्शनिक विवेचन** ७७–१३३

धर्म का महत्व ७७

वैदिक, महाकाव्य एवं पौराणिक काल में सूर्य-पूजा ७७–८०

साम्ब पुराण में सूर्य-पूजा-विधि-निरूपण ८०–९७

आदित्य-व्रत ९८–१०१

प्रतिमा-स्थापना १०१–२

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS




| | |
|---|---|
| तन्त्रोपासनान्तर्गत सूर्य-पूजा का विधान | १०२–१० |
| जप-यज्ञ-विधि | ११०–१४ |
| सूर्य-व्रत का विधान एवं महत्व | ११५–१७ |
| दार्शनिक तत्त्व | ११७ |
| सांख्य तत्त्व | ११८–१९ |
| योग दर्शन | ११९–२० |
| शैव मत | १२०–२२ |
| त्रिमूर्ति की अवधारणा | १२२–२४ |
| पुरातात्विक प्रमाण | १२४–२५ |
| सौरधर्म पर तन्त्रोपासना का प्रभाव | १२५–३१ |
| तन्त्रोपासना के प्रचार-प्रसार के कारण | १३१–३२ |
| सारांश | १३२–३३ |
| **५ : साम्ब पुराण में सूर्य-प्रतिमा-विज्ञान** | **१३४–७७** |
| सूर्य-पूजा का प्रारम्भिक स्वरूप | १३४ |
| सूर्य का मानवीकरण | १३४–३५ |
| द्वादशादित्य के रूप में सूर्य-पूजा | १३६–३८ |
| प्रतिमा-पूजा | १३८ |
| प्रतिमा-निर्माण-विधि | १३९–४० |
| प्रतिमा-लक्षण | १४०–४४ |
| सूर्य-परिवार तथा अनुचर | १४४–४५ |
| द्वादश जगन्नाथ के रूप में सूर्य-पूजा | १४६ |
| पुराण, आगम एवं शिल्प शास्त्र साहित्य में सूर्य-प्रतिमा-लक्षण-विवेचन तथा साम्ब पुराण की प्रतिमा से तुलना | १४७–७३ |
| पूर्व मध्यकाल की सूर्य-प्रतिमाएँ | १७३–७७ |
| निष्कर्ष | १७७ |


CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



**६ : साम्ब पुराण में वर्णित सूर्य-मन्दिर** १७८–८६
प्रारम्भिक साहित्य में सूर्य-मन्दिरों का विवेचन १७८
साम्ब पुराण में मन्दिर-निर्माण-विधि, स्थापना तथा महत्व का विवेचन १७८–८२
सूर्य-मन्दिर १८२–८५
सौर धर्म के पतन के कारण १८६
उपसंहार १८७–९०
सहायक ग्रन्थ-सूची १९१–२१६
अनुक्रमणिका २१७–२२

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS

१

# साम्बपुराण का प्रतिपाद्य विषय

## पुराणों की उत्पत्ति एवं महत्ता

पुराण तपःपूत मनीषियों-महर्षियों की चिरसाधना के महत्वमय निदर्शन हैं। भारतीय संस्कृति के परिज्ञान का एक अमूल्य एवं महत्वपूर्ण स्रोत पौराणिक परम्पराओं में अद्यापि उद्भासित है। पुराण भारतीय जीवन के कल्पवृक्ष हैं, अक्षय्यागार हैं, इनमें भारत की सत्य एवं शाश्वत आत्मा का वास है, इनके अनुशीलन के विना भारत का यथार्थ चित्र नहीं उभर सकता, भारतीय जीवन-विधा का सुस्पष्ट बोध नहीं हो सकता। पुराणों के यथासाध्य मन्थन के बिना मानव-जाति के गन्तव्य और पाथेय का परिज्ञान नहीं हो सकता। इनमें अध्यात्मिक, आधिदैविक एवं आधिभौतिक सभी विद्याओं का विशद वर्णन है। लोक-जीवन के सभी पटल इनमें सम्यक्रूपेण विवेचित हैं। विश्व में ऐसा कोई ज्ञान-विज्ञान नहीं, मानव-मस्तिष्क की ऐसी कोई योजना नहीं, मानव-जीवन का ऐसा कोई पक्ष नहीं—जिसका उल्लेख पुराणों में न हुआ हो। वे विषय जो अन्य माध्यमों से समझने में दुर्बोध हैं, बड़े रोचक ढंग से सुबोध एवं सुस्पष्ट भाषा में आख्यान आदि के रूप में इनमें प्रतिपादित किये गये हैं। अतः भारत को पूर्णरूपेण समझने और अपनी विशिष्टताओं के साथ विश्व के अन्तर्राष्ट्रीय धरातल पर उसे अवस्थित करने के लिए पुराणों का अनुशीलन-परिशीलन अनिवार्यरूपेण अपेक्षित है।

भारतीय धर्म-साधना, दार्शनिक चिन्तन, राजनीतिक इतिहास, साहित्यिक विकास तथा सांस्कृतिक जीवन के विविध पक्षों का स्पष्टीकरण विशद एवं व्यापक स्तर पर पौराणिक वाङ्मय द्वारा होता है। गवेषणात्मक प्रवृत्तियों की अनवरत क्रियाशीलता के परिणामस्वरूप अब यह मान्यता सुस्थिर हो चुकी है कि पुराण की उत्पत्ति वैदिक परम्परा के साथ-साथ हुई। ऋग्वेद के मंत्रों में अनेकशः 'पुराण'[१] शब्द, तथा एक स्थल पर 'पुराणी'[२] का भी उल्लेख मिलता है। परन्तु यहाँ पुराण का तात्पर्य केवल 'प्राचीनता' तथा 'प्राचीन गाथा' से है। इस प्रकार

१. ऋग्वेद, ३।३।४९, ३।५८।६, १०।१३०।६

२. वही, ९।९९।४, द्रष्टव्य, उपाध्याय, बलदेव, पुराण-विमर्श, पृष्ठ ८।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



ऋग्वेद में पुराण शब्द का उल्लेख वैदिक आख्यान के रूप में अभिव्यञ्जित है। वैदिक आख्यानों के प्रति श्रद्धालु होने के कारण पौराणिकों ने पुराण-संरचना के प्राथमिक काल में उनका समावेश पुराणों में कर लिया। वेदों तथा पुराणों में ऐसे आख्यान उपलब्ध होते हैं जिनके विवरण में या तो समरूपता है या जिनमें पहले के आधार पर दूसरेके अनुवर्ती विकास का साक्ष्य प्राप्त होता है[३]। परन्तु पौराणिक वाङ्मय का यथार्थ स्वरूप तृतीय एवं चतुर्थ शताब्दी ईसवीसे पल्लवित-पुष्पित होता है[४]। पुराण भारतीय परम्परा के सम्पोषक हैं तथापि समय-समय पर परिष्करण एवं सम्वर्द्धन प्रक्रिया द्वारा प्रक्षिप्तांशों के माध्यम से नव्य उपकरणों को समाविष्ट करके उन्हें समृद्ध बनाया गया है। पुरुरवा और उर्वशी का पौराणिक आख्यान इस तथ्य की पुष्टि करता है[५]। इस प्रकार पुराण साहित्य की मन्दाकिनी तृतीय-चतुर्थ शताब्दी ईसवी से लेकर १४वीं, १५वीं शताब्दी ईसवी तक अप्रतिहत गति से प्रवाहित होती रही जिसमें विभिन्न मान्यताओं, सम्प्रदायों, त्याग तथा तप की भावनाओं से अनुस्यूत मनीषियों ने अपनी-अपनी पुष्पांजलि अर्पित की है। परिणामस्वरूप भारतीय इतिहास, राजनीति तथा सांस्कृतिक प्रवृत्तियों और परम्पराओं का सम्यक् अध्ययन पौराणिक साहित्य में किया जा सकता है। पुराणों में आचार्यों के वर्णन से लेकर वर्णाश्रम, ब्राह्मण-धर्म, श्राद्ध, व्रत, सांख्य, योग प्रभृति दर्शन, राजाओं की वंशावली आदि सभी कुछ वर्णित हैं। दर्शन एवं भक्ति मुख्यतम विषय हैं। मूर्ति-पूजा तथा द्वैत-अद्वैत विचार-धाराओं का सुबोध एवं सम्यक् विवेचन पौराणिक गाथाओं द्वारा किया गया है। शिलालेखों और विभिन्न व्यक्तियों के यात्रा-वर्णनों के माध्यम से ये राजनीतिक-जीवन पर प्रकाश डालते हैं। तीर्थों आदि के वर्णन से ये एक ओर जहाँ धार्मिक मान्यताओं के सम्बन्ध में विवरण प्रस्तुत करते हैं, वहीं दूसरी ओर भारत की भौगोलिक स्थिति का भी विवेचन करते हैं। व्यक्तियों के आचार-विचार, रहन-सहन तथा परम्पराओं आदि

३. विण्टरनित्स, हिस्ट्री ऑफ इण्डियन लिटरेचर, भाग १, पृष्ठ ५१८।

४. हाजरा, आर० सी०, पौराणिक रिकर्ड्स ऑन हिन्दू राइट्स एण्ड कस्टम्स, पृ० ८-१७।
वायु-पुराण ( तृतीय शताब्दी ई० ), विष्णु-पुराण ( तृतीय-चतुर्थ शताब्दी ईसवी ) और मार्कण्डेय पुराण ( तृतीय-चतुर्थ शताब्दी ईसवी ) में संरचित हुए।

५. विण्टरनित्स, हिस्ट्री ऑफ इण्डियन लिटरेचर, भाग १, पृष्ठ ५३०।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



के माध्यम से ये तत्कालीन समाज का भव्य एवं मनोरम शैली में वर्णन प्रस्तुत करते हैं। निश्चय ही पुराण भारतीय संस्कृति के मूल हैं, अमरगायक हैं, मान्यताओं एवं परम्पराओं के जीवन्त संरक्षक हैं तथा भारतीयता के प्रबल पोषक हैं।

पुराण सामान्यतः संख्या में अठारह पाये जाते हैं। पुराण अठारह क्यों हैं ? पुराणों में मुख्यतया पुराण-पुरुष आत्मा का प्रतिपादन किया गया है। आत्मा स्वरूपतः एक होते हुए भी उपाधि, अवस्था अथवा आयतन भेद से अठारह प्रकार का होता है। इन अठारह प्रकारों का प्रतिपादन करने के कारण पुराणों की संख्या अठारह मानी गई है। आत्मा के अठारह प्रकार अधोलिखित रूप में विवेचित किये जाते हैं :—

- क्षेत्रज
  - परात्पर
  - अव्यय
  - अक्षर
  - क्षर
- अन्तरात्मा
  - अव्यक्तात्मा
  - महानात्मा
  - विज्ञानात्मा
  - प्रज्ञानात्मा
  - प्राणात्मा
- भूतात्मा
  - शरीरात्मा
  - हंसात्मा
  - दिव्यात्मा
    - वैश्वानर
    - तैजस
    - प्राज्ञ
      - कर्मात्मा
      - चिदाभास
      - चिदात्मा

पुराणों की अष्टादश संख्या के विषय में पण्डित मधुसूदन ओझा का मत है कि इनकी संख्या का निर्धारण सप्रयोजनात्मक एवं अर्थपरक है।[६] इनकी समीक्षानुसार सृष्टि-प्रक्रिया-प्रतिपादन ही पुराणों का मौलिक वर्ण्य विषय है जिसमें सांख्य-दर्शन की विचारधारा का पोषण होता है। सृष्टि के उपादान कारक गणना में अठारह होते हैं, अतएव इसी पारम्परिक प्रवृत्ति की प्रेरणा में सम्भवतः पुराणों की संख्या का निर्धारण किया गया है। साथ ही साथ यह विवेचन भी तर्कसंगत प्रतीत होता है कि गीता में अठारह अध्यायों का परिकल्पन, महाभारत में अठारह

६. पुराणोत्पत्ति-प्रसङ्ग, पृष्ठ ९-१०।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



पर्वों का निर्धारण एक ही मूलभूत प्रवृत्ति के परिप्रेक्ष्य में हुआ था। ऐसी सम्भावना भी कल्पनीय है कि भारत शब्द का महाभारत में, काव्यत्व का महा-काव्यत्व में तथा पुराण का महापुराण में रूपान्तर भी समान प्रवृत्ति के कारण सम्भवतः सम परिस्थितियों में हुआ था।[७] अठारह पुराणों की श्रेणी में आने वाले पुराणों को महापुराण की अभिधा से विभूषित किया गया है। पुराण के स्थान पर 'महापुराण' शब्द का व्यवहार उत्तरकालीन प्रक्रम से सम्बन्ध रखता है।[८]

## उप-पुराणों की विशिष्टता

पौराणिक वाङ्मय में महापुराणों के अतिरिक्त उप-पुराणों की भी एक परम्परा है। उपपुराण भारतीय संस्कृति के लिए उतने ही महत्वपूर्ण हैं जितने कि महापुराण। कुछ अर्थों में तो उपपुराणों की विशिष्टता महापुराणों से भी अधिकतर है। महापुराणों में समय-समय पर सम्वर्द्धन हुआ है। फलतः उनमें प्रक्षिप्तांश अधिक मिलते हैं। उप-पुराणों में सम्वर्द्धन की प्रक्रिया कम हुई है परिणामतः उनमें प्रणिप्तांश भी कम मिलते हैं। इस प्रकार महापुराणों की तुलना में उप-पुराण अपनी मौलिकता को सुरक्षित रखने में अधिक सफल रहे हैं। यह एक ऐसा तथ्य है जो भारतीय संस्कृति के मौलिक परिज्ञान के स्रोत के रूप में उप-पुराणों की महत्ता को द्विगुणित कर देता है। किन्तु विद्वद्वर्ग ने एवंविध उप-योगी एवं मूल्यवान साधन की प्रायशः उपेक्षा की। सांस्कृतिक रूप से बहुमूल्य इन उप-पुराणों की उपेक्षा के पीछे कुछ कारण प्रतीत होते हैं। प्रथमतः परम्परागत समाज में उप-पुराणों के प्रति हीनता की भावना दिखाई पड़ती है क्योंकि इन पुराणों को महापुराणों का उपभाग निरूपित किया गया है। मत्स्यपुराण में उप-पुराणों को पुराणों का 'उपभेद' प्रतिपादित किया गया है और यह भी कहा गया है कि कोई भी पौराणिक कृति जो अठारह पुराणों से पृथक् संरचित है उसे इन अठारह पुराणों में से एक या दूसरे से ही उद्भुत समझा जाय।[९] मत्स्यपुराण का उक्त उल्लेख सौरपुराण के इस उल्लेख से और भी सम्पुष्ट हो जाता है कि उप-पुराण महापुराणों के उपभेद (खिल) मात्र हैं। सौरपुराण ने स्वयं को भी

७. राय, एस० एन०; पौराणिक धर्म एवं समाज, पृष्ठ, ४६।

८. हाजरा, आर० सी०, स्टडीज इन द उप-पुराणाज, भाग १, पृष्ठ २, पाद टिप्पणी १९।

९. मत्स्यपुराण, ५३।५९ एवं ६३;

उपभेदान्प्रवक्ष्यामि लोके ये सम्प्रतिष्ठिताः।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



ब्रह्म पुराण से सम्बद्ध किया है।[१०] इस प्रकार महापुराणों की श्रेष्ठता और उनकी तुलना में उप-पुराणों की हीनता की मान्यता समाज में अधिक बलवती और सुदृढ़ हो गई। परन्तु यह तथ्य विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है कि इन उप-पुराणों ने सर्वदा ही उपर्युक्त मान्यता को स्वीकार नहीं किया है और बहुशः इन्होंने अपने को पुराण की ही अभिधा से विभूषित किया है। इन्होंने महापुराणों के साथ अपने को सम्पृक्त नहीं किया है और अपनी निजी अस्मिता को प्रतिपादित किया है।[११] कहीं-कहीं उन्होंने प्रचलित मान्यता से ऊपर उठकर अपने को महा-पुराणों से श्रेष्ठतर उद्घोषित किया है।[१२] ध्यातव्य है कि उप-पुराणों के प्राच्य सन्दर्भों में हमें कहीं भी उप-पुराणों की सूची नहीं प्राप्त होती और न ही वे 'उप-पुराण' की अपनी अभिधा से परिचित हैं। वे इस मान्यता का भी कहीं पर उल्लेख नहीं करते कि वे महापुराणों के उपभेद ( खिल ) मात्र ही हैं।[१३] उक्त विवेचन से यह सुस्पष्ट हो जाता है कि मत्स्य-पुराण में प्रतिपादित सिद्धान्तों ने परवर्ती समस्त पौराणिक कृतियों को प्रभावित किया और इस प्रकार उन्हें उप-पुराण की संज्ञा प्राप्त हुई तथा महापुराणों के उपभेद के रूप में इन्हें निरूपित किया जाने लगा। इसीलिए परवर्ती कुछ उप-पुराणों ने अपने को महापुराणों से सम्बद्ध भी कर लिया और अपने को 'उप-पुराण' तथा 'उपभेद' आदि अभिधाओं से निरूपित किया। पुराणों के प्रतिपाद्य विषय के सम्बन्ध में सौरपुराण का कथन है कि सर्ग, प्रतिसर्ग, वंश, मन्वन्तर तथा वंशानुचरित उनके ये पाँच लक्षण होने चाहिए। पुराणों के उपभेद होने के कारण उप-पुराणों के भी यही लक्षण होने चाहिए।[१४] परन्तु पुराणविदों ने महापुराण के दस लक्षण—सर्ग, विसर्ग, वृत्ति,

---

१०. सौरपुराण, ९।१२ ब, १३ अ;

खिलान्यउपपुराणानि यानि चोक्तानि सूरिभिः।
इदं ब्रह्मपुराणस्य खिलम् सौरमनुत्तमम्॥

११. नरसिह, देवी, कालिका पुराण आदि।

१२. कूर्मपुराण, १।१६, अन्यान्य उप-पुराणानि मुनिभिः कथितानि तु।
अष्टादश पुराणानि श्रुत्वा संक्षेपतो द्विजाः॥

१३. देवी पुराण, नरसिंहपुराण तथा साम्बपुराण।

१४. सौर पुराण, ९।४५,

सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशोमन्वन्तराणि च।
वंशानुचरितम् चैव पुराणम् पञ्चलक्षणम्॥

ब्रह्मादीनाम् पुराणम् उक्तमेद्धि लक्षणम्।
एतच्चोपपुराणानाम् खिलत्वाल्लक्षणं स्मृतम्॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



रक्षा, अन्तर, वंश, वंशानुचरित, संस्था, हेतु और अपाश्रय निरूपित किये हैं जब कि उप पुराणों के उपर्युक्त पाँच लक्षण ही उल्लिखित किए हैं। उपपुराण प्रमुख रूप से स्थानीय सम्प्रदायों एवं धार्मिक मान्यताओं का निरूपण करते हैं जब कि महापुराण विभिन्न सम्प्रदायों और उनकी विभिन्नताओं का विवेचन करते हैं। उपपुराणों में राजाओं एवं ऋषियों की वंशावली के वर्णन की प्रायशः उपेक्षा की गई है।[१५] जहाँ-कहीं वंशावली वर्णन उपलब्ध भी होता है वहाँ उनकी प्रामाणिकता की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया गया है तथा नूतन कहानियाँ एवं गाथाएँ उनमें जोड़ दी गई हैं। इस प्रकार वंशावली, जो कि तत्कालीन समाज में अत्यधिक समादृत थी, इन उप-पुराणों में उपेक्षित सी होने लगी। सम्भवतः इन उप-पुराणों के प्रति सामाजिक हीन दृष्टि का होना एक बड़ा कारण बना। इस प्रकार से मत्स्यपुराण द्वारा निरूपित परम्परा, महापुराणों के दस लक्षण तथा उप-पुराणों के पाँच लक्षण की मान्यता एवं उपपुराणों में राजवंशावलियों की उपेक्षा आदि समस्त कारणों ने समवेत रूप से उप-पुराणों की मान्यता को समाज में अपेक्षाकृत कम कर दिया और इस प्रकार वे महापुराणों के उपभेद के रूप में जन-सामान्य में प्रचलित हो गये। इसके अतिरिक्त उपपुराणों की अपेक्षाकृत हीनमान्यता का एक कारण यह भी रहा कि उपपुराण साहित्य सामान्यतः अनुपलब्ध रहा है। इस साहित्य के अनेक ग्रन्थ अद्यावधि अप्रकाशित अवस्था में हैं। इस कारण भी विद्वज्जनों में इस वर्ग के साहित्य के प्रति अधिक सजगता नहीं दृष्टिगत होती। अतः सम्यक्ज्ञानाभाव भी इस उपयोगी साहित्य के प्रति उपेक्षा का एक प्रमुख कारण बना।

उप-पुराणों के प्रति जन-सामान्य भले ही अनवधान रहा हो परन्तु उन्होंने भारतीय संस्कृति एवं उसके विविध पक्षों को संजोए रखा। वे धर्म तथा संस्कृति की मूल्यवान् सम्पदा हैं। उपपुराणों ने हिन्दू-धर्म के विविध पक्षों, उसके धार्मिक विधानों, मूर्ति-पूजा, ईश्वर-भक्ति, दर्शन, देव-वाद परम्परा, पर्व, एवं उत्सव आदि को मौलिक रूप में अनुप्राणित किया। वे प्राचीन भारत के सम्बन्ध में बहुमूल्य जानकारी प्रदान करते हैं तथा संस्कृत वाङ्मय की विलुप्त कृतियों के पुनर्निर्माण में योगदान करते हैं।[१६] इस सन्दर्भ में उपपुराण महापुराणों की उपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण हैं। विद्वज्जनों ने महापुराणों का अनेक प्रकार से आलोड़न-विलोड़न किया है, परन्तु संभवतः 'उपभेदीय' प्रस्थिति के कारण उप-पुराणों पर मनीषियों ने अपनी

१५. हाजरा, स्टडीज, भाग १, पृष्ठ २६।

१६. वही, पृष्ठ २६।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



लेखनी नहीं उठाई है। संयोगवशात् यह प्रवृत्ति उप-पुराणों की विषय-वस्तु को यथावत बनाये रखने में अधिक सहायक रही और हिन्दू-धर्म के विभिन्न धार्मिक वादों के प्रतिपादक होने के बावजूद भी वे अपनी मौलिकता को संरक्षित किये रहे। जहाँ-कहीं उनमें यत्किञ्चित् परिष्करण-सम्वर्द्धन हुए भी हैं, वे उनकी उस प्रवृत्ति के द्योतक हैं जिसके अन्तर्गत उनसे सम्बन्धित धार्मिक विश्वासों में समय-समय पर परिवर्त्तन अत्यावश्यक थे। विवेच्य परिस्थिति के आलोक में यदि यह मान्यता स्थापित की जाय कि उप-पुराण भारतीयता के सर्वाधिक सजग प्रहरी एवं संरक्षक हैं, तो अत्युक्ति न होगी।

## पुराण-लक्षण

पुराणों के पाँच लक्षण सर्ग, प्रतिसर्ग, वंश, मन्वन्तर तथा वंशानुचरित उल्लिखित किये गये हैं जो मूलतया महापुराणों में पाये जाते हैं। इन पाँचों लक्षणों की विशद व्याख्या भागवत की पंक्तियों में उपलब्ध होती है। भागवत में सृष्टि के प्रादुर्भाव के क्रम को बताते हुए सहज एवं सामान्य प्रक्रिया को सर्ग कहा गया है। प्रतिसर्ग के लिए पुराणों में प्रतिसचर और संस्था पाठान्तर भी प्राप्त होते हैं। वंश का तात्पर्य भूत, एवं वर्त्तमान के उन राजाओं से है जिनका सम्बन्ध ब्रह्म से है। इस कोटि में देव-वंश तथा ऋषिवंश का वर्णन प्राप्त होता है। मन्वन्तर से काल-चक्र का ईश्वर के बोध होता है। प्रत्येक मन्वन्तर का सम्बन्ध मनु, देवता, मनुपुत्र, इन्द्र, सप्तर्षि तथा अंशावतारों से माना जाता था। इस कोटि से सम्बन्धित स्थलों में मानवीय राजाओं का वर्णन भी प्राप्त होता है।[१७] इस सम्बन्ध में यह धारणा भी है कि महर्षियों के चरित की अपेक्षा पुराणों में राजाओं का वर्णन अधिक प्राप्त होता है।[१८] पुराण-पंचलक्षण की परिभाषा अमरकोश में भी मिलती है परन्तु इस ग्रन्थ में इनकी व्याख्या नहीं दी गई है। इस आधार पर आचार्य बलदेव उपाध्याय ने यह निष्कर्ष निकाला है कि अमरकोश की रचना तक पंचलक्षणों को सार्वभौमिक मान्यता एवं लोकप्रियता प्राप्त हो गई रही होगी, अन्यथा इस ग्रन्थ में पंचलक्षणों का व्याख्याविहीन परिभाषिक प्रयोग न रहता।[१९] इसके परिप्रेक्ष्य में यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि अमरकोश के काल (चतुर्थ शताब्दी ई०) तक जितने

---

१७. भागवत, १२।७।११-१६।

१८. उपाध्याय, बलदेव, पुराण-विमर्श, पृष्ठ १२७।

१९. वही, पृष्ठ १२५।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



पुराणों का संकलन हुआ था, उनमें पाँचों लक्षणों के अनुसार प्रतिपाद्य विभाजन हुआ था। इससे यह भी द्योतित होता है कि प्रमुख पुराणों का प्राथमिक संस्करण गुप्त-काल तक सम्पन्न हो चुका होगा। पार्जिटर की व्याख्यानुसार ये विषय पुराणों के प्राचीनतम वर्ण्य-विषय माने जा सकते हैं।[२०] इन लक्षणों के आविष्कार का काल पुराणों के आविर्भाव से बहुत पहले का माना जा सकता है।

पण्डित राजशेखर शास्त्री द्राविड़ ने पुराण पंच-लक्षण की एक अतिरिक्त परिभाषा की ओर विद्वानों का ध्यान आकृष्ट किया है। इसका उल्लेख कौटिलीय अर्थशास्त्र की जयमंगला व्याख्या में हुआ है। व्याख्याकार ने इसका मूल किसी प्राचीन ग्रन्थ को बताया है। इसका विवरण अधोलिखित है :—

सृष्टि प्रवृत्ति - संहार - धर्म - मोक्षप्रयोजनम्।
ब्रह्मभिर्विविधैः प्रोक्तं पुराणं पञ्चलक्षणम्॥[२१]

इस श्लोक के आधार पर आचार्य बलदेव उपाध्याय इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि धार्मिक विषयों का पुराणों में सन्निवेश प्रारम्भ से ही अभीष्ट था। इस सन्दर्भ में हाजरा आदि विद्वानों ने पुराणों में धार्मिक विषयों के समावेश को उत्तरकालीन पौराणिक संकलन का परिणाम माना है, परन्तु प्रोफेसर एस० एन० राय का विचार है कि यह मत समीचीन नहीं प्रतीत होता कि पुराणों की संरचना के आद्य-स्तर से ही इनमें धार्मिक विषयों का सन्निवेश किया जा रहा था।

भागवत में पुराणों के दस लक्षण भी प्रतिपादित किये गये हैं। ये दस लक्षण इस प्रकार हैं—सर्ग, विसर्ग, वृत्ति, रक्षा, अन्तर, वंश, वंशानुचरित, संस्था, हेतु एवं अपाश्रय। उक्त दस लक्षणों के संक्षिप्त अभिप्राय इस प्रकार हैं; सर्ग—भौतिक सृष्टि; विसर्ग—चराचररूप चेतन सृष्टि; वृत्ति-जीविका; रक्षा-ईश्वर का लोक-रक्षार्थ अवतार-चरित; अन्तर-मन्वन्तर; वंश-प्रसिद्ध राजपरिवार; वंशानुचरित—प्रसिद्ध राजकुलों का इतिहास, संस्था-प्रलय; हेतु-जीव एवं अपाश्रय-ब्रह्म। भागवत के एक अन्य स्कन्ध में पुराणों के दस अन्य लक्षणों का भी उल्लेख किया गया है जो इस प्रकार है, सर्ग, विसर्ग, स्थान, पोषण, उति, मन्वन्तर, ईशानुकथा, निरोध,

२०. पार्जिटर, ऐन्शियन्ट इण्डियन हिस्टारिकल ट्रेडीशन, पृष्ठ ३६।
२१. कौटिल्य-अर्थशास्त्र, १।५ के आधार पर, द्रष्टव्य राय, एस० एन०, पुराण-पत्रिका, भाग ४, अंक १, उपाध्याय, बलदेव, पुराण-विमर्श, पृष्ठ १२७।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



मुक्ति, आश्रय। आचार्य बलदेव उपाध्याय ने मत व्यक्त किया है कि भागवत के दोनों स्कन्धों में उल्लिखित लक्षणों में शब्द-भेद अवश्य है, पर अभिप्राय-भेद नहीं है।[२२] इन दस लक्षणों की समीक्षा पुसाल्कर ने भी किया है। बारहवें स्कन्ध में संकेत है कि दस अथवा पाँच लक्षणों की योजना महान् अथवा अल्प-व्यवस्था की द्योतक है। पुसाल्कर महोदय का मत है कि अल्प-व्यवस्था से तात्पर्य यहाँ उप-पुराणों से है।[२३] परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि भागवत में प्रयुक्त 'महदल्पव्यवस्था से तात्पर्य कुछ और ही है। वस्तुतः यहाँ पर संकेत उस पौराणिक प्रवृति की ओर है, जिसके कारण समय-समय पर नूतन परिस्थितियों एवं नवोदित सांस्कृतिक तत्वों के अनुसार प्राचीन पुराणों का परिवर्द्धन कर उनका प्रतिसंस्करण तैयार किया गया तथा उत्तरकालीन पुराणों की रचना की गई।[२४] एवंविध निष्कर्ष भागवत के एक अन्य श्लोक से भी प्राप्त होता है।[२५] यह कथन समीचीन नहीं प्रतीत होता कि उप-पुराणों में अल्प-व्यवस्था का अनुसरण किया गमा था। यह सच है कि परम्परानुसार उप-पुराणों को पुराणों का खिल अथवा परिशिष्ट माना जाता था, परन्तु वास्तविक स्थिति इससे भिन्न थी।[२६] उप-पुराणों के 'उप' शब्द के कारण भी विद्वानों ने इन्हें महापुराणों से अल्प महत्व दिया। 'उप' शब्द प्रायः निम्नता या सहायक के रूप में सामान्यतः प्रयोग किया जाता है किन्तु 'उप' शब्द समीपता अथवा निकटता के अर्थ में भी प्रयुक्त होता रहा है। उप-निषद् में 'उप' शब्द का प्रयोग इसी अर्थ में किया गया है। उप-पुराणों में विभिन्न धार्मिक मतों का पोषण किया गया है। इसी कारण इनकी प्रतिष्ठा ऐसे साम्प्र-दायिक ग्रन्थों के रूप में भी प्रचलित हो गई जो किसी विशेष सम्प्रदाय के धार्मिक मतों का पोषण करते हैं। पुराणों के पंचलक्षण सिद्धान्त पर समाधारित होने के कारण शास्त्र-सम्मत समाज ने यद्यपि उन्हें महापुराणों जैसी प्रतिष्ठा तो नहीं दी तथापि इनकी उपेक्षा भी नहीं की जा सकी। ये उप-पुराण विभिन्न सम्प्रदायों के

२२. वही, पृष्ठ १२८।

२३. पुसाल्कर, स्टडीज इन दि एपिक्स एण्ड पुराणाज, पृष्ठ ४६

२४. राय, एस० एन०, पौराणिक धर्म एवं समाज, पृष्ठ २१।

२५. भागवत, २।१०।२

२६. डॉ० आर० सी० हाजरा ने ब्रह्मवैवर्त्तपुराण ४।१३१।६-१० के प्रति मत व्यक्त किया है कि इसमें इन लक्षणों का उल्लेख नहीं मिलता, स्टडीज, भाग १, पृष्ठ ६।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



विचार और विकास के महत्वपूर्ण साधन थे, अतः इन्हें उप-पुराण की संज्ञा से अभिहित किया गया जिसका तात्पर्य होता है—एक विशिष्ट प्रकार के पुराण जो परम्परागत पुराणों के समीप हैं। आकार-विस्तार, बहुविध विषयों के समावेश तथा उप-पुराणों में प्रतिपादित मान्यता की दृष्टि से इन ग्रन्थों की उपादेयता तथा साहित्यिक एवं सांस्कृतिक महत्ता अष्टादश पुराणों से कम नहीं मानी जाती थी।[२७]

## उपपुराणों की सूची

साम्बपुराण एक उपपुराण है। विभिन्न स्रोतों में १८ उपपुराणों का उल्लेख आता है, जिनमें संज्ञामूलक भिन्नता है। विभिन्न स्रोतों में समुपलब्ध उपपुराणों की सूची निम्नवत् है :—

(क)[२८]

| | |
|---|---|
| १. आद्य (सनत्कुमार द्वारा उद्घोषित), | २. नारसिंह |
| ३. स्कन्द | ४. शिवधर्म |
| ५. दुर्वाससोक्त | ६. नारदीय |
| ७. कपिल | ८. वामन |
| ९. उशनसेरित | १०. ब्रह्माण्ड |
| ११. वरुण | १२. कालिका |
| १३. माहेश्वर | १४. साम्ब |
| १५. सौर | १६. पराशरोक्त |
| १७. मारीच | १८. भार्गव। |

(ख)[२९]

| | |
|---|---|
| १. सनत्कुमारीय | २. नारसिंह |
| ३. नान्दीपुराण | ४. शिवधर्म |
| ५. दुर्वासा-पुराण | ६. नारदीय |

२७. हाजरा, स्टडीज, भाग १, पृष्ठ १८।

२८. कूर्मपुराण १।१।१७-२०, द्रष्टव्य, वही, भाग १, पृष्ठ ४।

२९. नित्याकार प्रदीप १, नारसिंह वाजपेयिनिका, पृष्ठ १९। (कूर्म-पुराण के आधार पर अठारह उप-पुराणों की सूची प्रतिपादित है)।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



७. कपिल
८. वामन
९. औसनस
१०. ब्रह्माण्ड
११. वारुण
१२. कालिका
१३. माहेश्वर
१४. साम्ब
१५. सौर
१६. पराशरोक्त
१७. मारीच
१८. भार्गव।

( ग )[३०]

१. आद्य
२. नरसिंह
३. वायवीय
४. शिवधर्म
५. दुर्वाससोक्त
६. नारदीय
७. एवं
८. नन्दिकेश्वर-युग्म
९. उशनसेरित
१०. कपिल
११. वारुण
१२. कालिका
१३. माहेश्वर
१४. साम्ब
१५. दैव
१६. पराशरोक्तमपरं
१७. मारीच
१८. भास्कर।

( घ )[३१]

१. आद्या
२. नारसिंह
३. कुमार द्वारा उच्चारित नान्द
४. शिवधर्म
५. दुर्वाससोक्त
६. नारदीय
७. कपिल
८. मानव
९. उशनसेरित
१०. ब्रह्माण्ड
११. वारुण
१२. कालिका
१३. माहेश्वर
१४. साम्ब
१५. सौर
१६. पराशरोक्तंअपरं
१७. मारीच
१८. भार्गव।

---

३०. रघुनन्दन के मलमास-तत्व में उद्धृत कूर्म पुराण, द्रष्टव्य, हाजरा, स्टडीज, भाग १, पृष्ठ ४-५।

३१. मित्र मिश्र के वीरमित्रोदय, परिभाषा प्रकाश, पृष्ठ १३-१४ में उद्धृत कूर्म पुराण, द्रष्टव्य, स्टडीज, भाग १ पृष्ठ, ५।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



(च)[३२]

| | |
|---|---|
| १. आद्य | २. नारसिंह |
| ३. नान्द | ४. शिवधर्म |
| ५. दुर्वाससोक्त | ६. नारदोक्त |
| ७. कपिल | ८. मानव |
| ९. उशनसेरित | १०. ब्रह्माण्ड |
| ११. वरुण | १२. कालिका |
| १३. माहेश्वर | १४. साम्ब |
| १५. सौर | १६. पराशरोक्तप्रवरं |
| १७. एवं | १८. भागवत द्वयं |

(छ)[३३]

| | |
|---|---|
| १. आद्य | २. नारसिंह |
| ३. नान्द | ४. शिवधर्म |
| ५. दुर्वाससोक्त | ६. नारदोक्त |
| ७. कपिल | ८. मानव |
| ९. उशनसेरित | १०. ब्रह्माण्ड |
| ११. वारुण | १२. कालिका |
| १३. माहेश्वर | १४. साम्ब |
| १५. सौर | १६. पराशरोक्तप्रथमं |
| १७. एवं | १८. भागवतद्वयं । |

(ज)[३४]

| | |
|---|---|
| १. आद्य | २. नारसिंह |
| ३. वायवीय | ४. शिवधर्म |

---

३२. हेमाद्रि के चतुर्वर्ग चिन्तामणि, भाग १, पृष्ठ ५३२-३३ में उद्धृत कूर्मपुराण, द्रष्टव्य, हाजरा, भाग १, पृष्ठ ५-६ ।

३३. हेमाद्रि के चतुर्वर्ग चिन्तामणि, भाग २, पृष्ठ २१ में उद्धृत कूर्मपुराण, द्रष्टव्य, वही, भाग १, पृष्ठ ६ ।

३४. शब्दकल्पद्रुम (उपपुराणान्तर्गत) में उद्धृत कूर्मपुराण, द्रष्टव्य, वही, भाग १, पृष्ठ ६-७ ।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



| | |
|---|---|
| ५. दुर्वाससोक्त | ६. नारदीय |
| ७. नन्दिकेश्वर-युग्म | ८. उशनसेरित |
| ९. कपिल | १०. वारुण |
| ११. साम्ब | १२. कालिका |
| १३. माहेश्वर | १४. पाद्म |
| १५. दैव | १६. पराशरोक्तम् अपरं |
| १७. मारीच | १८. भास्कर। |

( झ )[३५]

| | |
|---|---|
| १. आद्य | २. नारसिंह |
| ३. स्कन्द | ४. शिवधर्म |
| ५. दुर्वासा-सम्प्रोक्त | ६. नारदीय |
| ७. कपिल | ८. मानव |
| ९. उशनसेरित | १०. पवित्र ब्रह्माण्ड |
| ११. वारुण | १२. कलिपुराण (कलिकथा) |
| १३. वशिष्ठ लिंग (माहेश्वर) | १४. साम्ब पुराण (सुसूक्ष्म) |
| १५. सौर-पुराण (सवित्र) | १६. पाराशर्य |
| १७. मारीच | १८. भार्गव। |

( ट )[३६]

| | |
|---|---|
| १. सौर | २. नारसिंह (पद्मपुराण से सम्बन्धित) |
| ३. साङ्केय (वैष्णव पुराण से सम्बन्धित) | ४. बार्हस्पत्य (वायव्यपुराण से सम्बन्धित) |
| ५. दुर्वासा (भागवत से संबन्धित) | ६. नारदोक्त (भविष्यपुराण से सम्बन्धित) |
| ७. कपिल | ८. मानव |
| ९. उशनसेरित | १०. ब्रह्माण्ड |
| ११. वारुण | १२. कालिका |
| १३. माहेश्वर | १४. साम्ब |
| १५. सौर | १६. पराशर |
| १७. भागवत | १८. कौर्म। |

३५. स्कन्द पुराण की सौरसंहिता, द्रष्टव्य, वही, भाग १, पृ० ७।

३६. स्कन्दपुराण—५ (३) रेवाखण्ड—१ पृष्ठ ४६-५२, द्रष्टव्य, भाग १, पृष्ठ ७।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



( ट )[३७]

| | |
|---|---|
| १. सूर्य (ब्रह्मपुराण का खिल) | २. नारसिंह (पद्मपुराण से सम्बन्धित) |
| ३. नान्द पुराण | ४. शिवधर्म |
| ५. दुर्वासा | ६. नारदोक्त |
| ७. कपिल | ८. मानव |
| ९. उशनसेरित | १०. ब्रह्माण्ड |
| ११. वारुण | १२. कालिका |
| १३. माहेश्वर | १४. साम्ब |
| १५. सौर्य | १६. पराशर |
| १७. भागवत | १८. कोर्म । |

( ड )[३८]

| | |
|---|---|
| १. आद्य | २. नारसिंह |
| ६. स्कन्द | ४. शिवधर्म |
| ५. नारदोक्त | ६. दुर्वाससोक्त |
| ७. कपिल | ८. मानव |
| ९. उशनसेरित | १०. ब्रह्माण्ड |
| ११. वारुण | १२. अन्यत् कलिकार्ह्यम् |
| १३. माहेश्वर | १४. साम्ब |
| १५. सौर | १६. पराशरोक्त |
| १७. मारीच | १८. भार्गव । |

( ढ )[३९]

| | |
|---|---|
| १. आद्य | २. नारसिंह |

३७. रेवा माहात्म्य जो कि स्कन्दपुराण के रेवाखण्ड से बहुत साम्य होने के बावजूद भी अपने को वायुपुराण का एक खण्ड, उल्लिखित करता है। द्रष्टव्य, वही, भाग १, पृष्ठ ८।

३८. स्कन्द पुराण—७ (प्रभास खण्ड) २।११-१५, द्रष्टव्य, वही, भाग १, पृष्ठ ८-९।

३९. स्कन्द पुराण की सूत संहिता—१ ; ब–१८ शिव माहात्म्य खण्ड, द्रष्टव्य, वही, भाग १, पृष्ठ ९।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



३. नान्द ४. शिवधर्म
५. दुर्वासा ६. नारदीय
७. कपिल ८. मानव
९. उशनसेरित १०. ब्रह्माण्ड
११. वारुण १२. विशिष्टं कलि पुराणं
१३. वाशिष्ठ लैंग (माहेश्वर) १४. साम्बपुराण
१५. सौरम्महद्भुतम् १६. पराशर
१७. मारीच १८. भार्गव।

(त)[४०]

१. आद्य २. नारसिंह
३. स्कन्द ४. शिवधर्म
५. दुर्वाससोक्त ६. नारदोक्त
७. कपिल ८. वामन
९. उशनसेरित १०. ब्रह्माण्ड
११. वारुण १२. कालिका
१३. माहेश्वर १४. साम्ब
१५. सौर ६६. पराशरोक्तमपरं
१७. मारीच १८. भार्गव।

(थ)[४१]

१. आद्य २. नारसिंह
३. स्कन्द ४. दुर्वासा
५. नारदीय अन्यत् ६. कपिल
७. मानव ८. औसन प्रोक्त
९. ब्राह्माण्ड अन्यत् १०. वारुण
११. कालिका १६. माहेश

४०. गरुड़ पुराण—१।२२३। १७-६०, द्रष्टव्य, वही, भाग १, पृष्ठ ९।

४१. पद्मपुराण, पाताल खण्ड ३।९४ ब-९८, द्रष्टव्य, वही, भाग १, पृष्ठ १०।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



१३. साम्ब
१४. सौर
१५. पराशर
१६. मारीच
१७. भार्गव
१८. कौमार।

(द)[४२]

१. सनत्कुमार
२. नारसिंह
३. नारदीय
४. शिव
५. दौर्वाससमुत्तमम्
६. कपिल
७. मानव
८. औसनस
९. वारुण
१०. कालिक
११. साम्ब
१२. नन्दीकृत
१३. सौर्य
१४. पराशरप्रोक्त
१५. अतिविशिष्टं
१६. माहेश्वर
१७. भार्गव
१८. सविस्तारम् वाशिष्ठ।

(ध)[४३]

१. आदिपुराण
२. आदित्य
३. बृहन्नारदीय
४. नारदीय
५. नन्दीश्वरपुराण
६. बृहन्नान्दीश्वर
७. साम्ब
८. क्रियायोगसार
९. कालिक
१०. धर्म-पुराण
११. विष्णुधर्मोत्तर
१२. शिवधर्म
१३. विष्णुधर्म
१४. वामन
१५. वारुण
१६. नारसिंह
१७. भार्गव
१८. उत्तमम्बृहद्धर्म।

(न)[४४]

१. आद्य
२. नारसिंह
३. नान्द
४. शिवधर्म

---

४२. देवीभागवत, १।३।१३-१६, द्रष्टव्य, वही, भाग १, पृ० १०।

४३. बृहद्धर्म, १।२५।२३-२६, द्रष्टव्य, वही, भाग १, पृ० १०।

४४. पराशर-उपपुराण, १।२८-३१, द्रष्टव्य, वही, भाग १, पृ० १०-११।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



| | |
|---|---|
| ५. दुर्वासा | ६. नारदीयक |
| ७. कपिल | ८. मानव |
| ९. उशनसेरित | १०. ब्रह्माण्ड |
| ११. वारुण | १२. कलिपराण |
| १३. वाशिष्ठ लैङ्ग | १४. साम्ब |
| १५. सौर | १६. पराशर |
| १७. मारीच | १८. भार्गव । |

(प)[४५]

| | |
|---|---|
| १. सनत्कुमार | २. नारसिंह |
| ३. नारदीय | ४. शिव |
| ५. अनुत्तमंदुर्वासा | ६. कापिल |
| ७. पुण्यम् मानव | ८. औसनस |
| ९. वारुण | १०. कालिकाख्य |
| ११. साम्ब | १२. नान्दीकृत |
| १३. सौर्य | १४. पराशर |
| १५. अतिविशिष्टं आदित्य | १६. माहेश्वर |
| ६७. भार्गवाख्य | १८. विशिष्टंवाशिष्ठ |

(फ)[४६]

| | |
|---|---|
| १. आद्य | २. नारदीय |
| ३. नारसिंह | ४. शिवधर्म |
| ५. दुर्वासा | ६. कापिलेय |
| ७. मानव | ८. शौक्र |
| ९. वारुण | १०. ब्रह्माण्ड |
| ११. कालीपुराण | १२. वाशिष्ठ लैङ्ग |
| १३. महेश | १४. साम्ब |

---

४५. विन्ध्य-माहात्म्य, अ० ४, द्रष्टव्य, वही, भाग १, पृ० ११ ।

४६. मित्र मिश्र के वीरमित्रोदय परिभाषा प्रकाश, पृ० १४ में उद्धृत ब्रह्म-वैवर्त्त; द्रष्टव्य, वही, भाग १, पृ० ११-१२, ।



CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



१५. सौर १६. पाराशर्य
१७. मारीच १८. भार्गव ।

(ब)[४७]

१. सनत्कुमार २. नान्द
३. नारसिंह ४. दुर्वासा
५. शिवधर्म ६. कापिल्य
७. मानव ८. शौक्र
९. वारुण १०. वाशिष्ठ
११. साम्ब १२. काली पुराण
१३. महेश १४. पराशर
१५. भार्गव १६. मारीच
१७. सौर १८. ब्रह्माण्ड

(म)[४८]

१. आद्य २. नारसिंह
३. नान्द ४. शिवधर्म
५. दुर्वासा ६. नारदीय
७. कापिल ८. मानव
९. उशनसेरित १०. ब्रह्माण्ड
११. वारुण १२. कालि-पुराण
१३. वाशिष्ठ लैंग (माहेश्वर) १४. साम्बपुराण
१५. सौर १६. पराशर
१७. मारीच १८. भार्गव ।

(म)[४९]

१. बृहन्नारसिंह २. बृहद्वैष्णव
३. गारुड़ ४. बृहन्नारदीय

---

४७. गोपालदास के भक्ति रत्नाकर में उद्धृत ब्रह्मवैवर्त, द्रष्टव्य, भाग १, पृ० १२।

४८. मधुसूदन, सरस्वती का प्रस्थान भेद, पृ० १० में उद्धृत श्लोक, द्रष्टव्य, वही, भाग १, पृ० १२।

४९. एकाम्रपुराण १।२० ब-२३, द्रष्टव्य, वही, भाग १, पृ० १३।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



| | |
|---|---|
| ५. नारदीय | ६. प्रभाषक |
| ७. लीलावती-पुराण | ८. देवी |
| ९. कालिका | १०. आखेटक |
| ११. वृहन्नान्दी | १२. नन्दिकेश्वर |
| १३. एकाम्र | १४. एक पाद |
| १५. लघु भागवत | १६. मृत्युञ्जय |
| १७. अंगिरस | १८. साम्ब । |

( य )[५०]

| | |
|---|---|
| १. आद्य | २. नारसिंह |
| ३. नारदीयक | ४. वाशिष्ठ लैंग |
| ५. मारीच | ६. नन्दाख्य |
| ७. भार्गव | ८. माहेश्वर |
| ९. औसनस | १०. आदित्य |
| ११. गणेशक | १२. कालीय |
| १३. कपिल | १४. दुर्वासा |
| १५. शिवधर्म | १६. पराशरोक्त |
| १७. साम्ब | १८. वारुण । |

## सौर-ग्रन्थ

एवंविध उल्लिखित विभिन्न स्रोतों की नामश्रृंखला के सम्यक् अवलोकन से यह तथ्य सुस्पष्ट हो जाता है कि उक्त सभी सूचियों में साम्बपुराण का उल्लेख बिना किसी अपवाद के निरन्तर किया गया है जो इस पुराण की प्राचीनता एवं लोकप्रियता का द्योतक है।

सौरसम्प्रदाय का उल्लेख भविष्य, स्कन्द, ब्रह्म, वराह, अग्नि तथा गरुड़ पुराणों में भी उपलब्ध होता है। इन सभी पुराणों ने साम्बपुराण से सामग्री ग्रहण किया था।[५१] इस प्रकार साम्बपुराण को सौरार्चन के मौलिक एव आद्य ग्रन्थ के रूप में मान्यता प्रदान की जा सकती है। सौर धर्म से सम्बन्धित अन्य

५०. वारुणोपपुराण, अ० ६, द्रष्टव्य, वही, भाग १, पृ० १३।

५१. श्रीवास्तव, वी० सी०, सन वरशिप इन एन्शियन्ट इण्डिया, पृ० २३२।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



पुराणों के नाम भी प्राप्त होते हैं जैसे, मार्त्तण्ड पुराण, आदित्यपुराण, भास्कर पुराण तथा सूर्य पुराण। ये पुराण अनुपलब्ध हैं।[५२] उत्तर सौर (लघु पुराण) सूर्य-पूजा से सम्बन्धित है जिसका विवरण काल-निर्णय,[५३] नित्याकर-प्रदीप[५४] तथा कालसार[५५] में प्राप्त होता है। सौर-धर्म तथा सौर धर्मोत्तर उपपुराणों में भी सूर्य-पूजा का उल्लेख प्राप्त होता है।[५६] इस प्रकार हमें एक विशाल सौर साहित्य की जानकारी प्राप्त होती है। परन्तु इन उप-पुराणों में साम्बपुराण के अतिरिक्त अन्य कोई भी ग्रन्थ उपलब्ध नहीं है।

## साम्बपुराण की पाण्डुलिपियाँ

साम्बपुराण की कुछ पाण्डुलिपियाँ उपलब्ध हैं जिनका विवरण अधोलिखित रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। एशियाटिक सोसाइटी बंगाल के पुस्तकालय में साम्बपुराण की चार पाण्डुलिपियाँ रखी हुयी हैं। पं० हरप्रसाद शास्त्री ने एशियाटिक सोसाइटी कैटलाग, भाग ५, कलकत्ता १९२८ में ४०९१, ४०९२, ४०९३ तथा ४०९४ के अन्तर्गत उनका विवरण प्रतिपादित किया है। ४०९१ संख्या की पाण्डुलिपि में २८८६ श्लोक हैं। लिपि नागर है। यह इण्डिया आफिस की पाण्डुलिपि संख्या ३६१९ से पर्याप्त साम्य रखती है। इण्डिया आफिस की पाण्डुलिपि का दूसरा प्रारम्भिक श्लोक तिमिर किरकिरात : इस पाण्डुलिपि में अनुपलब्ध है। इसमें साम्बपुराण के लिए शाम्बपुराण का व्यवहार हुआ है। इसके अन्त में अधोलिखित श्लोक प्राप्त होता है,

> "चतुष्टं साधयोन्नित्यं एकैकस्य पृथक्-पृथक्।
> क्षुरिकादि शलाकान्तां मार्गान्तिश्चैव साधकः ।।

४०९२ संख्या की पाण्डुलिपि में ३२०० श्लोक हैं। लिपि मैथिल है। प्रत्येक पृष्ठ पर १३ पंक्तियाँ हैं। तिथि शक संवत् १७६४ है। इसमें ७५ अध्याय

---

५२. पाण्डेय, एल० पी०, सन वरशिप इन एन्शियन्ट इण्डिया, पृ० १५२-५३।

५३. काल-निर्णय, पृ० ५४-५५।

५४. नित्याकर-प्रदीप, पृ० ९२।

५५. कालसार, पृ० २३०।

५६. हाजरा, स्टडीज, भाग १, पृ० ३४७, द्रष्टव्य, पाण्डेय, एल० पी०, सनवरशिप इन ऐन्शियन्ट इण्डिया, पृ० १५४।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



हैं किन्तु प्रकाशित संस्करण में ८४ अध्याय हैं। दोनों में विषयवस्तु के दृष्टिकोण से कोई भी भेद नहीं है। प० बद्रीनारायण मिश्र, दौलतगंज छपरा (बिहार) इसके लेखक हैं। इसमें अध्याय ५२-७४ को ज्ञानोत्तर शीर्षक के अन्तर्गत प्रतिपादित किया गया है। इसके अन्त में अधोलिखित श्लोक प्राप्त होता है :—

'अष्टादश पुराणानां श्रवणेयत्फलं लभेत्।
तत्फलं समवाप्नोति सत्य-सत्यं वदामिते ।।'

४०९३ संख्या की पाण्डुलिपि में ८३ अध्याय हैं। लिपि नागर है। तिथि विक्रम संवत् १९३० है। इण्डिया आफिस कैटलाग सख्या ६६१९ से यह पर्याप्त साम्य रखती है। इसके लेखक चित्रसेन मिश्र हैं। इसके प्रारम्भ में अधोलिखित श्लोक प्राप्त होता है;

"श्रीगणेशायनमः"
"तिमिरकिरकिरातः प्रत्यहं सप्रभातः।
कमलविमल बन्धुः पुण्यकारुण्यसिन्धुः।
भुवनभवनदीपः कृष्टयामप्रतीपः
सुरमुनिसेवः पातु वो भानुदेवः।"

अन्त में अधोलिखित श्लोक प्राप्त होता है,

'तेषां हि वांछितं सर्वं प्रदास्यति हि भास्करः
न तेषां च कुले शाम्ब कुष्ट व्याधिभयंभवेत्।
एतत्सर्वं समाख्यातं भास्करेण महात्मना।
पृच्छतो मम शाम्बोहिस पुण्येन महीतले ।।

४०९४ संख्या की चतुर्थ पाण्डुलिपि का तिथि विक्रम संवत् १८७९ है। इसकी लिपि नागर है। इसके प्रारम्भ में अधोलिखित श्लोक प्राप्त होता है;

'श्रीगणेशाय नमः ।।'
मेधाच्छन्नोयदा सूर्य्यः श्राद्धादौ यज्ञ कर्मणि।
शाकद्वीपी द्विजस्तम स्थापनीयः प्रयत्नतः ।।
शाकद्वीपी द्विजोयत्र सूर्य्यो न संशयः।
सूर्य्योऽग्निर्न ब्राह्मणो यत्र यज्ञादिक क्रिया ।।

इसका अन्त अधोलिखित पुष्पिका से होता है :

**'इति श्री शाम्बपुराणे शाकद्विपि द्विजराज माहात्म्यं नाम सप्तमोऽध्यायः।'**

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



संस्कृत कालेज कलकत्ता में भी साम्बपुराण की एक पाण्डुलिपि उपलब्ध है। इसे शास्त्री एवं गुई के कैटलाग में संख्या २१४ प्राप्त है। इसे साम्बपुराण कहा गया है। इसमें ३५०० श्लोक हैं। इसकी तिथि अज्ञात है। इसके प्रारम्भ में अधोलिखित श्लोक प्राप्त होता है :—

"श्री गणेशायनमः। श्री सरस्वत्यै नमः ओं नमः सूर्याय।<br>
नमः सवित्रे जगदेकचक्षुषे जगत् प्रसूति नाश हेतवे।<br>
त्रयीमयाय त्रिगुणात्मधारिणे विरञ्चि नारायण शङ्करात्मने नमः ॥'

समाप्ति में अधोलिखित श्लीक प्राप्त होता है.

'करुण विमलमूर्ति धूतपापप्रचण्डो।<br>
वलित सकल भोगोयाति लोकं च विष्णो ॥'

संस्कृत कालेज बनारस में साम्बपुराण की एक पाण्डुलिपि उपलब्ध है। गोपीनाथ कविराज के कैटलाग में इस पाण्डुलिपि का उल्लेख किया गया है।

तन्जौर महाराजा सरफोजी के सरस्वती महल लाइब्रेरी में साम्बपुराण की (पी० पी० एस० शास्त्री के कैटलाग संख्या १०५८४ की) एक पाण्डुलिपि उपलब्ध है। इसमें १९३ पृष्ठ हैं। प्रत्येक पृष्ठ पर १३ पंक्तियाँ हैं। इसकी लिपि देवनागरी है। इसके प्रारम्भ में अधोलिखित श्लोक प्राप्त होता है;

श्रीगणेशाय नमः।<br>
नमस्सवित्रे जगदेकचक्षुषे<br>
जगतप्रसूति स्थिति नाश हेतवे ॥<br>
त्रयीमयाय त्रिगुणात्मधारिणे।<br>
विरञ्चि नारायण शङ्करात्मने ॥

समाप्ति में अधोलिखित श्लोक उपलब्ध होता है,

'करुणविमलमूर्ति धातु पाप प्रपंचः।<br>
वलित सकल भोगो याति लोकं च विष्णोः ॥'

इण्डिया आफिस लन्दन पुस्तकालय में साम्बपुराण की दो पाण्डुलिपियाँ (कैटलाग संख्या ३६१९ तथा ३६२०) सुरक्षित हैं। इनमें पर्याप्त साम्य है। एशियाटिक सोसाइटी कलकत्ता तथा संस्कृत कालेज, कलकत्ता की पाण्डुलिपियों से भी यह समानता रखती है। वेंकटेश्वर प्रेस वम्बई से प्रकाशित साम्बपुराण

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



तथा इस पाण्डुलिप में साम्य है मात्र अध्यायों में कुछ अन्तर प्राप्त होता है। प्रकाशित संस्करण में ८४ अध्याय हैं जबकि इसमें केवल ७० अध्याय ही हैं। इस पाण्डुलिपि में ४८ अध्याय तथा २२ उपभाग प्राप्त होते हैं। उप भागों को पटल कहा गया है। ये सब ज्ञानोत्तर शीर्षकान्तर्गत उल्लिखित किए गए हैं। इसका अन्तिम श्लोक कलकत्ता संस्कृत कालेज की पाण्डुलिपि के समान है।

कीथ ने इण्डिया आफिस लाइबेरी में प्राप्त साम्बपुराण की एक पाण्डुलिपि का उल्लेख संख्या ६८३६ के अन्तर्गत किया है। यह १८वीं शताब्दी ई० में लिखी गयी थी। इसकी समाप्ति अधोलिखित श्लोक से होती है :

'कारणात् भिन्न प्रपंचस्सत्य इति ब्रूमः।
वाचारम्भ श्रुत्वा मृतघट दृष्टान्तेन निवर्तनीयः।'

इस पाण्डुलिपि में अनेक अशुद्धियाँ हैं।

गङ्गानाथ केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ, इलाहाबाद में भी साम्बपुराण की एक पाण्डुलिपि सुरक्षित है जो पं० बलदेव, (ब्राह्मण टोली) सहसाराम, रोहतास, बिहार से प्राप्त हुयी थी। इसके लेखक नन्दसिंह हैं। तिथि सम्वत् १८६७ है। इस पाण्डुलिपि के विषयवस्तु को ४९ अध्यायों तथा २ पटलों में विभाजित किया गया है। शेष सामग्री को ज्ञानोत्तर अभिधानान्तर्गत प्रतिपादित किया गया है। इस पाण्डुलिपि का प्रारम्भ अधोलिखित श्लोक से होता है।

॥ श्रीगणेशायनमः ॥
ॐ नमः सवित्रे जगदेक चक्षुषे
जगत्प्रसूतिस्थिति नाश हेतवे
त्रयीमयाय त्रिगुणात्मधारिणे
विरञ्चि नारायण शङ्करात्मने।

अन्त में अधोलिखित श्लोक प्राप्त होता है :—

'ज्ञानेन केवलेनास्य योगेनापि च भावयेत्।
कर्माणि प्राक्तेवापि क्वचित्प्रायं सुशास्त्रतः॥'

साम्बपुराण का प्रकाशन एक पाण्डुलिपि के अधार पर वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई से १८९९ में हुआ था। इस संस्करण में अनेक त्रुटियाँ हैं।

**साम्ब पुराण की विषय-वस्तु**

प्रोफेसर विनोदचन्द्र श्रीवास्तव ने साम्बपुराण के अनुवाद में अधोलिखित विषयों को प्रतिपादित किया है।[५७] अनुक्रमणिका-कथन, परमब्रह्म माहात्म्य-सूर्य

---

५७. श्रीवास्तव, विनोदचन्द्र, साम्बपुराण (हिन्दी अनुवाद) विषय-सूची।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



की श्रेष्ठता, साम्ब-शाप, द्वादशमृत्यूपाख्यान, सूर्य की तपस्या का रहस्य, भक्त्युपस्थान, सर्वव्यापित्वनिरूपण, सर्वव्यापकत्ववर्णन, सूर्यनिगमन, राज्ञीनिक्षुभोत्पत्ति, सूर्य सन्तान विवरण, सूर्य-रूप सम्पादन, ब्रह्मा द्वारा सूर्य का स्तवन, ब्रह्मभाषित-स्तव, ब्रह्मकृत स्तोत्र, सूर्य के अनुचर, माहेश्वर-स्तोत्र, देवताख्यापन, व्योमत्पत्ति, चार लोकपालकी नगरियाँ, आदित्य-रथ-वर्णन, सोमवृद्धिक्षय, राहुग्रहणविचार, रोगापनयन, स्वतराजवर्णन, मगानान, मगन्याजकभोजक विचार, मोक्षज्ञान, सूर्यप्रतिमालक्षण, दारुपरीक्षा, प्रतिमालक्षण, प्रतिमाकल्प, ध्वजारोपण, देव-यात्रा-विधि, देवयात्रा अग्निधूपविधि, अग्निविधान, सूर्य-पूजाफल, दीक्षामण्डल, यज्ञस्थान की विधि, दीक्षा-विधान, यात्रा-नियम, सूर्य-मूर्ति का उदय, सूर्य-भक्त के लिए आचार, छत्र-पादुकादान, सप्तमीकल्प, जपविधि, मुद्रालक्षण, सूर्यानुष्ठानात्मक योगज्ञान, पूजा-विधान, सूर्य-रहस्य, पूजा-विधि-निरूपण, अष्टपुष्पिका, सम्वत्सर वर्णन, सूर्य-रहस्य, बीजोत्तर, बीजप्रसव, बीजस्वरप्रसव, सोमसूत्र, शरीरसाधन, कार्यसिद्धि-विधान, साधक के दारुण रोग का नाश, अभिचार मंत्र, अंगप्रत्यय योगभेद, नराव्रत, योग का उपदेश, सर्वसामान्य साधन, तत्वानुसार पथ वर्णन, ज्ञानदान, बीजप्रसव, दिक्शक्तिस्थ बीजचक्र, बीजप्रसव, विसर्जनविधि, सन्यासमार्ग, सम्वत्सरशरीर-पूजाविधि, मन्त्रतत्वरहस्य, ज्ञानमार्ग, सूर्यपूजाज्ञान।

## सौर-धर्म का ऐतिहासिक अनुशीलन

साम्बपुराण का मुख्य विषय मग-परम्परा से प्रभावित सौर-धर्म-प्रतिपादन है। प्राचीन काल में सूर्य-पूजा की एक विश्वव्यापी परम्परा रही है।[५८] सौरोपासना भारतीय धर्मानुष्ठान की एक मौलिक विशेषता रही जिसे नवीन पाषाण काल[५९] से लेकर हिन्दू-काल की समाप्ति तक अनेक प्रजापतियों, भाषाभाषियों एवं परम्पराओं ने समय-समय पर समृद्धिशाली बनाया है।[६०] भारत के आदि-कालीन समाज में सूर्य की पूजा अनेक प्रतीकों के माध्यम से होती थी।[६१] ऋग्वैदिक काल में सूर्य के नैसर्गिक रूप की उपासना का प्राधान्य था। सूर्य के

५८. टेलर, ई० बी०, रेलिजन इन प्रिमिटिव कल्चर, पृ० ३७२, अल्काट, डब्लू० टी०, द सन लोर आफ आल एजेज, पृ० १४१-२०२।

५९, सांकलिया, एच० डी०, प्री हिस्ट्री एण्ड प्रोटो हिस्ट्री इन इण्डिया एण्ड पाकिस्तान, पृ० १५२।

६०. श्रीवास्तव वी० सी०, सन वरशिप इन ऐंशियण्ट इण्डिया, पृ० ३४१।

६१. पाण्डेय, एल० पी०, सन वरशिप इन ऐंशियन्ट इण्डिया, पृ० २, ४।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



उसी नैसर्गिक स्वरूप के परिप्रेक्ष्य में ऋग्वेद में उसका यशोगान दिन-निर्माता, प्रकाश एवं उष्णता के उत्पादक तथा उर्वरता एवं वनस्पतियों के कारक के रूप में किया गया है।[६२] इस स्वरूप की अवधारणा के साथ-साथ सूर्य की आध्यात्मिक एवं नैतिक मान्यता का भी विकास हो रहा था। उस समय सूर्योपासना वैदिक यज्ञ और ऋचाओं के माध्यम से होती थी। उसके विभिन्न रूपों की उपासना सूर्य, सवितृ, मित्र, पूषन, विष्णु, विवस्वत, आश्विन और आदित्य आदि नामों के अन्तर्गत होती थीं।[६३] उत्तरवैदिक काल में सूर्योपासना पूर्णतया अनुष्ठानात्मक एवं आध्यात्मिक हो गई थी। सूर्य का तादात्म्य प्राण, आत्मा, ब्रह्म, प्रजापति आदि से स्थापित किया जाने लगा था। उन्हें रोग-विनाशक के रूप में भी प्रतिष्ठित किया गया था। सूर्य के लिए आदित्य नाम का सर्वविदित प्रचलन हो गया था और ये आदित्य संख्या में बारह माने जाते थे जिन्हें वर्ष के बारह महीनों से भी सम्बन्धित किया जाता था। सूर्य का समय के साथ यह तादात्म्य उत्तरवैदिक सौरोपासना की एक प्रमुख विशेषता कही जा सकती है।[६३] सौरोपासना का शास्त्रीय स्वरूप वेदोत्तर काल में ही हमारे सम्मुख प्रस्तुत होता है। वेदोत्तर काल में आर्य तथा अनार्य परम्परा के पारस्परिक आदान-प्रदान के परिणामस्वरूप एक सौर-सम्प्रदाय का उद्भव हुआ जिसका सर्वप्रथम विवरण महाभारत में प्राप्त होता है।[६४] इस काल की एक और प्रमुख विशेषता सूर्यदेव का मानवीकरण है।[६६] अनेक स्थलों पर महाभारत में सूर्य मानव के रूप में प्रत्यक्ष अवतरित हुए हैं। छठीं शताब्दी ई० पू० से द्वितीय शताब्दी ई० पू० के काल तक सौर्य-संस्कृति का सामाजिक क्षेत्र बहुत विस्तृत हो चुका था जिसके अन्तर्गत भारत के निम्नवर्गीय समाज से लेकर उच्चवर्गीय समाज

---

६२. ऋग्वेद १।११५।६,

अद्या देवा उदितः सूर्यस्य निरहंसः पिपृता निरवद्यात्।
तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथ्वीउत द्यौ ॥

६३. साम्बपुराण, अ० ४, ६, राय, एस० एन०, पौराणिक धर्म एवं समाज, पृ० ४८, श्रीवास्तव, वी० सी०, सन वरशिप इन एंशियण्ट इण्डिया, पृ० ३४४।

६४. श्रीवास्तव, वी० सी०, वही, पृ० ३४६।

६५ महाभारत, ७।८२।१६, सहस्रानुचरान सौरान्सहस्रमचाष्ट चापरान् ॥

६६. विष्णुपुराण, ४।१३।१५, ततस्तमाताम्रोज्ज्वलम्
ह्स्ववपुषमीषादापिंगलनयनमादित्यमद्राक्षीत्।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



के विभिन्न लोगों द्वारा सूर्य की पूजा का प्राधान्य हो गया था।[६७] मगपुरोहितों की उपस्थिति एवं हेलेनिस्टिक सभ्यता के प्रभाव के कारण भारतवर्ष में सौर-सम्प्रदायवादियों ने सूर्य की मूर्ति-पूजा का श्री गणेश किया। प्रारम्भ में सूर्य की मूर्त्तियों पर ईरानियन प्रभाव का आधिक्य था परन्तु गुप्तकाल में उनका राष्ट्रीयकरण हो गया। विदेशी परम्परा के राष्ट्रीयकरण हेतु ही यह आख्यान बनाया गया था।[६८] सूर्य-मूर्तियाँ उत्तर भारत तथा दक्षिण भारत दोनों ही क्षेत्रों से प्राप्त होती हैं किन्तु दोनों में निर्माणमूलक भिन्नता परिलक्षित होती है। दक्षिण भारत में प्राप्त सूर्य-मूर्तियाँ विभिन्न आयामों पर निर्मित की गईं .जब कि उत्तर भारतीय सूर्य-मूर्तियाँ मगों के प्रभाव में ईरानियन शैली पर निर्मित की गईं। इसके पश्चात् सातवीं शताब्दी ईसवी से बारहवीं शताब्दी ईसवी तक का काल सौर-संस्कृति का सर्वाधिक समृद्ध एवं भव्य काल माना जाता है। इस काल में सौरधर्म से सम्बन्धित विभिन्न पुराणों, उपपुराणों तथा अन्य ग्रन्थों का प्रणयन हुआ। मगों की परम्पराओं का राष्ट्रीयकरण हो चुका था तथा सौरधर्म को राजकीय संरक्षण भी प्राप्त हो गया था। थानेश्वर का वर्धन राजवंश सूर्य का महान् उपासक था। हर्ष स्वयमेव शैव तथा बाद में बौद्ध धर्म सम्पोषक हो गया था परन्तु अपनी पैतृक परम्परा के निर्वाह में उसने सूर्योपासना को संरक्षण प्रदान किया था।[६९] इसके पश्चात् भारतवर्ष के विभिन्न राजवंशों ने सौरधर्म को संरक्षण प्रदान किया था। उड़ीसा के पूर्वी गंग वंशज ने सौरधर्म को प्रश्रय प्रदान किया था। कोणार्क का सूर्य-मन्दिर उन्हीं के शासन-काल (१२-१३वीं शताब्दी ईसवी) में बना था।[७०] भारतीय धर्म की समन्वयशील प्रवृत्ति ने समाज में सौरोपासना के सन्दर्भ में भारतीय एवं विदेशी दोनों परम्पराओं को समन्वित करने का प्रयास किया था। भारत के मनीषियों तथा विद्वज्जनों ने सौरोपासना के प्राचीन एवं नवीन तत्वों को एक स्थान पर सुव्यवस्थित करने का प्रयास किया जिसका अभिव्यक्तीकरण साम्बपुराण के रूप में हुआ। साम्बपुराण में उपर्युक्त विवेचित परम्पराओं के प्रभाववश परिवर्तित सौरधर्म का विवरण प्राप्त होता है।

---

६७. श्रीवास्तव, वी० सी०, सन वरशिप इन ऐंशियन्ट इण्डिया, पृ० ३५१।

६८. बनर्जी, जे० एन०, मिथ्स एक्सप्लेनिंग सम एलायन ट्रेट्स आफ दि नार्थ इण्डियन सन आईकन्स, हिस्टारिकल क्वार्टली, पृ० २८।

६९. श्रीवास्तव, वी० सी०, सन वरशिप इन एन्शियन्ट इण्डिया, पृ० ३५६।

७०. वही, पृ० ३५९।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



## साम्ब पुराण की कथावस्तु

देवर्षिश्रेष्ठ नारद जी ऋषियों के साथ वासुदेव कृष्ण से मिलने के लिए द्वारकापुरी में आये[७१] नारद जी के सम्मान में प्रद्युम्न आदि समस्त यदुवंशी कुमारगण नारद का अभिवादन कर अर्घ्य तथा चरणोदक से सविधि आराधन किये। संयोगवशात् अवश्यम्भावी शाप से ज्ञानशून्य होकर कुमारसाम्ब अपने रूप-यौवन की गर्वोन्मत्तता के कारण मुनिवर नारद की अवज्ञा करने लगे।[७२] नारद जी ने रैवतक उपवन में जाकर भगवान् कृष्ण को उक्त अवज्ञा से अवगत कराया। उक्त सन्देश के प्रति श्रीकृष्ण के आश्वस्त न होने पर नारद जी ने साम्ब को अनुशासनपरक बनाने हेतु रैवतक उपवन में भेजा। वहाँ भगवान् कृष्ण अन्तःपुर की रमणियों के साथ जल-विहार कर रहे थे।[७३] साम्ब के यौवन तथा रूप-माधुर्य से गोपियाँ उनकी ओर आकृष्ट हो गईं। तत्काल क्रुद्ध होकर कृष्ण ने स्त्रियों को लुटेरों के द्वारा अपहृत किये जाने तथा मृत्यूपरान्त स्वर्ग-लोक न प्राप्त करने एवं साम्ब को कुष्ठरोग ग्रस्त होने का शाप दिया। साम्ब तत्काल कुष्ठरोग को प्राप्त हो गये।[७४] कुष्ठरोग के निवारणार्थ साम्ब ने

७०. साम्बपुराण, ३।१३,

वासुदेवं स वै द्रष्टुं नीत्वा द्वारवतीं पुरीम्।
आयात ऋषिभिः सार्द्धं क्रोधनोमुनिसत्तमः॥

७१. वही, ३।१५-१६,

साम्बस्त्ववश्यंभावीत्वात्तस्यशापस्यमोहितः॥
अवज्ञांकुरुतेनित्यंनारदस्यमहात्मनः ॥

७२. वही, ३।१७, ४२, २४,

एवंसंचितीयत्वातुवासुदेवंततोब्रवीत ।
अस्याह्मविनीतस्यकरिष्येविनयंभूशम्॥
नारदोप्यथतंसांबप्रेषयित्वात्वरान्वितः।
आजगामाथातत्रैवसांबस्यानुपदेनतु ॥
अनुभूयजलक्रीडांयानमासेवतेरहः ॥

७३. वही ३।४५ तंदृष्ट्वातुहरिः क्रुद्धः स्ताः शशापतदास्त्रियः।
यस्माद्धृतानिचेतांसिमामुक्तान्यत्रवः स्त्रियः॥
३।४६, पतिलोकात्परिभ्रष्टाः स्वर्गचापिगतेमयि।
भूत्वाह्यशरणायूयंदस्युहस्तंगमिष्यथ॥
३।५०, क्षुब्धाः सर्वास्तुतेतस्मात्वंकुष्ठरोगसवाप्स्यसि॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



चन्द्रभागा नदी के तट पर पंजाब में एक सूर्य-मन्दिर का निर्माण करवाया।[७५] साम्ब को उस मन्दिर में पौरोहित्य कर्म के सम्पादनार्थ कोई भी ब्राह्मण उपलब्ध न था। तदनन्तर साम्ब ने अठारह मगपरिवारों को लाकर उस मन्दिर में नियुक्त किया।[७६]

## मगों की उत्पत्ति एवं प्राचीनता

प्रारम्भिक साहित्य महाभारत तथा विष्णुपुराण में मगों को शकद्वीप की चार जातियों में उल्लिखित किया है किन्तु साम्ब-आख्यान का विवरण वहाँ अनुपलब्ध है।[७७] सामान्यतः यह स्वीकार किया जाता है कि मग ईरान के पुरोहित थे जो सूर्य एवं अग्नि की संयुक्त उपासना करते थे।[७८] यद्यपि ये पुरोहित मूलतः मीडिया के निवासी थे[७९] तथापि उनके ईरानियन होने तक कैल्डियन और बेबोलोनियन तत्वों का विशेष प्रभाव पड़ चुका था।[८०] शकद्वीप जहाँ से मगों के आगमन का उल्लेख पुराणों में विवेचित है, सम्भवतः पूर्वी ईरान में था।[८१] शकद्वीप की स्थिति पर विचार-वैषम्य है जिसका सुस्पष्ट विवेचन सामाजिक एवं आर्थिक अध्यायान्तर्गत ही प्रसंगानुकूल एव समीचीन होगा।

मगों की प्राचीनता के प्रश्न पर विद्वज्जनों में मतैक्य का अभाव है। मगों का भारत में आगमन तीन शाखाओं में हुआ। प्रथम शाखा शाखामनीषी आक्रान्ताओं के साथ उत्तर-पश्चिम भारत में पाँचवीं शताब्दी ई० पू० में आयी। मगों की दूसरी शाखा शक-कुषाण काल (द्वितीय शताब्दी ई० पू० से प्रथम शताब्दी ई०) में आयी। अन्तिम शाखा पारसियों के साथ सातवीं शताब्दी ईसवी में

---

७५. ३।५५ ततः शापाभिभूतेनसांबेनाराध्यभास्करम्।
पुनः सम्प्राप्यतद्रूपंस्वनाम्नार्कोनिवेशितः॥

७६. वही, ६।४८, अष्टादशकुलानीहमगानांवेदवादिनाम्॥

७७. महाभारत, ६।११।३६-३८; विष्णुपुराण २।४।६९-७०।

७८. भण्डारकर, कलेक्टेडवर्क्स, पृ० २१९, मजूमदार, आर० सी०, द एज आफ इम्पीरियल युनिटी, पृ० ४६५।

७९. मोल्टन, द ट्रेजर आफ मगी, पृ० ९।

८०. फ्रैंक, क्यूमॉन्ट, द मिस्टरीज आफ मिथ्; पृ० ३०-३१, मोल्टन, अर्ली जोरो आस्ट्रीनिज्म, पृ० १८७, १९१।

८१. मजूमदार; आर० सी०, वही, पृ० ४६५।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



आयी।[८२] पाँचवीं शताब्दी ई० के बाद से मगों का सौरोपासना के सन्दर्भ में भारतीय इतिहास के क्षितिज पर साहित्यिक एवं अभिलेखिक साक्ष्यों में उल्लेख प्राप्त होने लगता है।[८३] नेपाल से ५५० ईसवी की एक पाण्डुलिपि प्राप्त हुई है जिसमें मगों को ब्राह्मणों के समस्तरीय निरूपित किया गया है।[८४] इन समस्त साक्ष्यों के आलोक में यह निष्कर्ष प्रतिपादित किया जा सकता है कि पुरोहितों के एक विशिष्ट वर्ग अर्थात् शाकद्वीपीय ब्राह्मण मगों ने अपनी प्रचारात्मक परम्परा से सौरधर्म को विशिष्ट एवं महत्वपूर्ण बनाने का पूर्ण प्रयास किया था।

मगों का भारतीय समाज में विलय सौरोपासना प्रसङ्ग में विशिष्टतम अध्याय का प्रतिनिधित्व करता है। इस तथ्य से प्राचीन भारतीय समाज की गतिशीलता पर भी प्रकाश पड़ता है।[८५] मग-परम्परा ने सौरधर्म को सर्वाधिक प्रभावित किया जिसका उल्लेख उत्तरवर्ती पुराणों में प्राप्त है किन्तु राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में इस तथ्य को अल्पमहत्व की दृष्टि से देखा गया है। विष्णु, वायु, ब्रह्माण्ड और मत्स्य-पुराण[८६] में यह प्रतिपादित किया गया है कि सौरोपासना का विकास शतपथ ब्राह्मण[८७] की भाव-भूमि में हुआ है। यहाँ तक कि साम्ब-पुराण[८८] जिसमें मग पुरोहितों के उत्कृष्ट प्रभाव को मान्यता प्रदान की गई है, में वैदिक-परम्परा को उपेक्षित नहीं किया जा सका है। निष्कर्षरूपेण यह उल्लिखित किया जा सकता है कि मगों का भी पूर्णतः भारतीयकरण हो गया था।

मगों ने अपनी प्रबुद्धता तथा क्रियाशीलता के कारण सौर धर्म को व्यापक बनाने में विशेष सफलता अर्जित की। उन्होंने सूर्य-मूर्ति एवं मन्दिर के निर्माण

८२. श्रीवास्तव, वी० सी०, सन वरशिप इन एन्शियन्ट इण्डिया, पृ० ३५०।
८३. भण्डारकर, आर० जी०, वैष्णविज़्म शैविजम एण्ड माइनर रेलिजस सिस्टम्स, पृ० १५३-१५४।
८४. इण्डियन एण्टीक्वेरी, १९११, जनवरी, पृ० १८।
८५ यादव, बी० एन० एस०, समआस्पेक्ट्स आफ दि चेन्जिङ्ग आर्डर इन इण्डिया ड्यूरिंग द शक-कुषाण एज, कुषाण स्टडीज, इलाहाबाद, १९६८, पृ० ७६-७८।
८६. राय, एस एन०, अर्ली पौराणिक एकाउण्ट आफ सन एण्ड सोलर कल्ट, यूनिवर्सिटी आफ इलाहाबाद स्टडीज़, १९६३, पृ० ४१-४५।
८७. शतपथब्राह्मण, ७।४।१।१०
८८. हाजरा, स्टडीज, भाग १, पृ० ६३, साम्बपुराण, ६।१५, १२।८, १२।१३, २४।७, १९।१५, ३०।१८।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



में प्रभूत योगदान दिया। स्त्रियों तथा निम्नवर्गीय पुरुषों को भी इस धर्म के आचरण की स्वतंत्रता मगों के कारण ही प्राप्त हुई होगी। समग्ररूपेण इन कारकों ने सौरधर्म को समृद्ध एवं व्यापक बनाने में विशिष्ट तथा महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया होगा। सूर्यपूजक पुरोहितों को मग और भोजक इन दो श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है। साम्बपुराण के अन्तरंग साक्ष्य के आधार पर यह प्रस्तावित किया जा सकता है कि मग और भोजक एक थे। अन्तर मात्र इतना था कि मग 'म' अक्षर की पूजा करते थे जबकि भोजक अथवा याजक सूर्य की उपासना मन्त्रोच्चारण करते हुए धूप-दीप तथा अन्य उपहारों के माध्यम से करते थे। दोनों ही सूर्य के सकल और निष्कलरूप के उपासक थे।[८९]

## साम्ब पुराण में उल्लिखित सूर्य-मन्दिर

साम्बपुराण में सूर्य-पूजा के तीन प्रसिद्ध केन्द्रों का उल्लेख किया गया है। प्रथम स्थान को मूल स्थान, साम्बपुर, मैत्रवन इत्यादि अभिधाओं से अभिहित किया गया है।[९०] साम्ब-आख्यान के अनुसार यहाँ पर सर्वप्रथम सूर्य-मन्दिर की स्थापना की गई थी। इसे चन्द्रभागा नदी के तट पर स्थित मुल्तान से समीकृत किया जाता है।[९१] सौरोपासना का द्वितीय स्थान कालप्रिय कहा गया है जिसका तादात्म्य यमुना के दक्षिणी किनारे पर स्थित आधुनिक काल्पी के साथ स्थापित किया जाता है।[९२] इस कालप्रिय को कुछ विद्वान् कालप्रियनाथ[९३] से तथा कुछ

---

८९. साम्बपुराण, २७।१२, निष्कलः सकलश्चैवद्वैविध्यं तस्यकल्पितम्। द्रष्टव्य, स्टेटनकान, इण्डिशसोनन प्रीस्टेर साम्ब एण्ड देई शाकद्वीपीय ब्राह्मण, पृ० २७६-२८१।

९०. साम्बपुराण, ३।२, चन्द्रभागातटेरम्येपुरंयत्साम्बसंज्ञितम् ।
भूर्लोकेशाश्वतं स्थानं तत्रसूर्यस्य नित्यता ।।

९१. कनिंघम ए०, दि ऐंशियण्ट जियोग्राफी आफ इण्डिया, पृ० १९४-१९९, डे० ए० एन० एल०, जियोग्रैफिकल डिक्शनरी आफ ऐंशियण्ट एण्ड मेडिवल इण्डिया, पृ० १३३-३४।

९२. मिराशी, वी० वी०, थ्री ऐंशियण्टफेमस टेम्पुल्स आफ दि सन पुराण, भाग ८, संख्या १, पृ० ४२।

९३. मिराशी, वी० वी०, आइडेन्टीफिकेशन आफ कालप्रिय, स्टडीज इन इण्डोलाजी, भाग १, पृ० ३३, अल्टेकर; ए० एस०, राष्ट्रकूट एण्ड देयर टाइम्स, पृ० १०२।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



उज्जयिनी[९४] से समीकृत करते हैं। सौरोपासना का तृतीय स्थल सूर्य-कानन, उदयाचल, शुतीर, मुण्डीर, रविक्षेत्र, सूर्य-क्षेत्र अथवा मित्रवन को उल्लिखित किया गया है। ब्रह्म-पुराण इसे उत्कल में स्थित कोणादित्य या कोणार्क की संज्ञा प्रदान करता है।[९५] सामान्यतः यह उड़ीसा में पुरी के पास स्थित आधुनिक कोणार्क से समीकृत किया जाता है। साम्बपुराण के अन्तरंग साक्ष्य से भी यह समीकरण समर्थित है।[९६] इस पुराण के द्वितीय भाग का सम्बन्ध इसी स्थान से है। इन प्रवृत्तियों के परिप्रेक्ष्य में यह निष्कर्ष स्थापित होता है कि मग परम्परा से प्रभावित सौरधर्म उत्तर भारत में विकसित हो रहा था। साम्बपुराण में परवर्ती अध्यायों के समावेश से सौरधर्म के पूर्वी भारत में प्रसरित होने की सूचना प्राप्त होती है।[९७]

## सामाजिक एवं आर्थिक अवस्था

साम्बपुराण में मूलरूप से सौरधर्म की श्रेष्ठता एवं उसके सिद्धान्तों का विवरण प्राप्त होता है, परन्तु इसमें तत्कालीन सामाजिक परिवेश का भी सुस्पष्ट ज्ञान प्राप्त होता है। ऋग्वैदिक काल से वर्णाश्रम धर्म का जो स्रोत प्रवाहित हुआ, वह शनैः-शनैः पुष्ट होता हुआ अनेक शाखाओं-प्रशाखाओं में विभाजित होता गया। वर्णों में चातुर्वर्ण-परम्परा की प्रतिष्ठा इस काल में भी व्याप्त थी। साम्ब-पुराण में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र चारों वर्णों का विवरण प्राप्त होता है।[९८] साम्बपुराण में वर्ण के कमानुसार उनकी प्रस्थिति का निर्धारण किया

९४. काणे, पी० वी०, 'उत्तर रामचरित' (चतुर्थ संस्करण) (परिचय), त्रिपुरारी ए०, कमेण्टेटर आफ भवभूतीज मालतीमाधव।

९५. ब्रह्मपुराण, २८।३२, हाजरा, स्टडीज भाग १, पृ० १०६।

९६. साम्बपुराण, ४३।१, तस्मिस्तपोवनेदेशतीरेतुलक्षणोदधेः ॥
तिष्ठंतिये च संप्राप्तादेवदर्शनकांक्षिणः ॥

९७. हाजरा, स्टडीज, भाग, १, पृ० ६२।

९८. साम्बपुराण, ३३।३८
रथभगेद्विजभयंभग्नेक्षेक्षत्रियस्य च ॥
तुला भंगे तु वैश्यानां शम्याः शूद्रभयं भवेत् ॥
३४।४६, स्वस्त्यस्त्विह च विप्रेभ्यः स्वस्तिराज्ञे तथैव च।
गोभ्यः स्विस्ति प्रजाभ्यश्च जगतः शान्तिरस्तुवै ॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



गया है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र के लिए पृथक-पृथक रंगों का उल्लेख किया गया है। उन्हें क्रमशः श्वेत, लाल, पीले एवं काले रंगों से समीकृत किया गया है।[९९] वस्तुतः उत्तर वैदिक काल में चातुर्वर्णों के लिए क्रमशः एहि, आगच्छ, आद्रव एवं आधाव शब्दों का प्रयोग बुलाने के अर्थ में किया जाता था। उत्तर वैदिक स्तर-विन्यास का यह प्रक्रम साम्बपुराण में भी प्राप्त होता है। ब्राह्मणों को समाज में पूर्ण प्रतिष्ठा प्राप्त थी। उन्हें सर्वोत्कृष्ट महत्ता प्रदान की गई है। ब्राह्मणों को दान देने एवं भोजन कराने का विशेष पुण्य प्रतिपादित किया गया है। उनके तिरस्कार का निषेध किया गया है।[१००] ब्राह्मणों की प्रतिष्ठा पर आघात का साम्बपुराण में कोई विवरण नहीं प्राप्त होता। ब्राह्मणों के साथ-साथ क्षत्रियों का भी अधिक सम्माननीय स्थान समाज में था। उन्हें ब्राह्मणों के समस्तरीय भी समझा जाता था। ब्राह्मणों के साथ क्षत्रियों की पूजा का उल्लेख किया गया है।[१०१] ध्यातव्य है कि ब्राह्मण और क्षत्रिय को अन्य वर्णों से पृथक् परन्तु साथ-साथ प्रायः उल्लिखित किया गया है।[१०२] पूर्वमध्यकालीन प्रवृत्तियों के अनुसार व्यापार एवं वाणिज्य ह्रासोन्मुखी हो रहे थे। किसान, कामीगर और व्यापारी केवल अपने मूलस्थान से ही जुड़े रहने के कारण अर्थव्यवस्था में उल्लेखनीय प्रगति नहीं कर पा रहे थे। अतः इस कृत्य से सम्बन्धित वर्ग अर्थात् वैश्यों की स्थिति शोचनीय हो गई थी। उन्हें शूद्रों के साथ उन्हीं की श्रेणी में प्रायः उल्लिखित किया गया है। यह प्रवृत्ति जहाँ वैश्यों के पतन का संकेत करती है वहीं शूद्रों के उत्थान का भी उल्लेख करती है। शूद्रों में विभिन्न वर्गों की प्रवृत्ति प्रच-

---

९९. वही, ५२।६,

विप्रस्य व सुवाशुक्लालोहिताक्षत्रियस्य तु ।।
पीता वैश्यस्य विज्ञेयाकृष्णाशूद्रस्याकीर्तिता ।।

१००. वही, ४४।७,

ब्राह्मणक्षत्रियसर्पान्नावमन्येत् ।।

१०१. वही, ३४।६१,

ग्रहागावोनरेन्द्राश्चब्राह्मणाश्चविशेषतः ।
पूजिताः पूजयंतेनिदिहन्त्यपमानिताः ।।

१०२. वही, ६३।१३,

राजाविप्रस्तथावर्णाः साधनार्थंप्रतिष्ठताः ।
आपत्सुघातयेतीव्राविधिना घातकः स तु ।।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



हो गई थी। निर्वसित शूद्र अर्थात् चाण्डालों के विषय में साम्बपुराण में स्पष्ट उल्लेख प्राप्त होता है।[१०३]

वर्णों का जातियों के रूप में बहुगुणन पूर्वमध्यकालीन समाज की प्रमुखतम प्रवृत्ति थी। इस काल में प्रत्येक वर्ण में अनेक मिश्रण हुए; फलस्वरूप वर्ण अब जाति के रूप में प्रतिष्ठित होने लगे। साम्बपुराण वस्तुतः पूर्वमध्यकाल की उक्त प्रवृत्ति को भी विवक्षित करता है। इसमें वर्ण-संकरता के प्रमाण उपलब्ध हैं। पुनश्च 'जाति-बिरादर' की अवधारणा भी जन्म ले चुकी थी।[१०४] जातियों में बढ़ई[१०५] सुनार आदि का स्पष्ट उल्लेख प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त वर्गगत समाज का भी वर्णन प्राप्त होने लगता है जिसका प्रमुख आधार आर्थिक था।

साम्बपुराण में आश्रम-धर्म की प्रतिष्ठा के प्रति भी संकेत प्राप्त होता है, परन्तु उल्लेखनीय तत्व यह है कि इसमें राष्ट्रधर्म को प्रधानता दी गई है। सन्यासी को भी राष्ट्रीय संकट पड़ने पर स्वदेश वापस लौटकर राष्ट्रसेवा करने का संकेत किया गया है।[१०६] पूर्वमध्यकाल की राजनीतिक अस्थिरता के परिप्रेक्ष्य में राष्ट्रीयता को महत्व देने का यह एक स्तुत्य प्रयास था। इसके अतिरिक्त सामाजिक जीवन में षोडश संस्कारों का भी महत्व साम्बपुराण में प्रतिपादित किया गया है। स्त्रियों को भी सामाजिक सम्मानास्पद स्तर प्रदान किया गया है। उनके सरक्षण एवं सामाजिक सुरक्षा सम्बन्धी आचार-संहिता का उल्लेख भली-

१०३. वही, ६१।३-४

क्षेत्राच्चांडालसेनायाश्चाग्निहोत्रगृहस्तथा ॥
तस्मादपञ्चततूर्णमासवृद्धयैप्रकल्पयेत् ॥
क्षेत्राच्चांडालसेनाच्चतथाद्विजपराअपि ॥
क्रमवृद्ध च तत्सर्वेबन्धीयान्मिश्रतंक्रमात् ॥

१०४. वही, ४४।९

वृद्धबालातुरवैद्यजातिसम्बन्धिबांधवमातृ पितृभार्यादुहितृदासैर्विवादं न समाचरेत् ॥

१०५. वही, ४४।९

क्रुद्धंमंदातुरप्रेष्यगणिकापर्युषितावक्षुतनाद्यात् ॥
द्विषतश्चायुष्कामः सुवर्णकारान्नंपरिहरेत् ॥

१०६. वही, ७९।२,

प्रार्थितेपिनृपेनाथबलानांसंभवादपि ॥
जीर्णोविगतचेष्टोवासन्यासाद्विनिवर्त्तयेत् ॥



CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



भाँति किया गया है।[१०७] इसके अतिरिक्त जनसामान्य के लिए आचार-संहिता का भी सम्यक् उल्लेख किया गया है[१०८] जिसका आश्रय ग्रहण कर व्यक्ति सुख-पूर्वक जीवन-यापन कर सकता था। वैदिक आचार-विचार सम्पन्न भारतीय जन-मानस को साम्बपुराण की यह सांस्कृतिक देन थी।

साम्बपुराण से वस्तुतः तत्कालीन सामाजिक-परिवेश के बारे में पता चलता है। इसमें तत्कालीन लोगों के खान-पान, रहन-सहन, वेष-भूषा, एवं आमोद-प्रमोद का सामान्य विवरण उल्लिखित है। साम्बपुराण में शाकाहारी एवं मांसाहारी दोनों ही प्रकार के समाजों का वर्णन प्राप्त होता है। विभिन्न प्रकार के व्यंजनों के उल्लेख से सामाजिक रहन-सहन पर भी प्रकाश पड़ता है।

सूती एवं रेशमी दोनों प्रकार के वस्त्रों का प्रचलन था। विभिन्न प्रकार के वाद्य-यंत्रों द्वारा आमोद-प्रामोद किए जाते थे। संगीत विद्या एवं उसमें निष्णात गायकों का भी उल्लेख किया गया है।

साम्बपुराण से पूर्व मध्यकालीन ह्रासोन्मुखी अर्थ-व्यवस्था पर प्रकाश पड़ता है। स्वर्ण-दानादि प्रसंग पर विशेष जोर दिया गया है जो स्वर्णाभाव के तथ्य का पोषण करता है।[१०९] वैसे भी ६५० ई० से १००० ई० तक स्वर्ण-मुद्राओं का अभाव परिलक्षित होता है।[११०]

## सौरधर्म पर वैदिक एवं तान्त्रिक प्रभाव

साम्बपुराण में प्रतिपादित सौरधर्म पर वैदिक परम्पराओं, सांख्य एवं शैव मतों का प्रभाव परिलक्षित होता है। उत्तर कालीन अध्याय तन्त्रोपासना से पूर्णतया प्रभावित हैं। तन्त्रोपासना के मुद्रा, न्यास, अभिचार, बीज, गुरु-दीक्षा, मण्डल निर्माण, मारण, मोहन, स्तम्भन, वशीकरण, विद्वेषण तथा उच्चाटन आदि क्रियाओं से साम्बपुराण के उत्तरकालीन अध्याय भरे पड़े हैं।

१०७. वही, ४४।९,

सद्योध्यानाभयब्राह्मणीयथाशक्तितोदद्यात् ।

१०८. साम्बपुराण, अ० ४४ में सामाजिक-विधान, आचार-विचार तथा विधि-निषेध का सम्यक् विवेचन प्राप्त होता है।

१०९. साम्बपुराण, ३९।३०

हेमपात्रंप्रगृह्यादौरौप्यमौदुम्बरं क्रमात् ।

११०. शर्मा, रामशरण, पूर्व मध्यकालीन भारत में सामाजिक परिवर्तन, पृ० ५१

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



निष्कर्षतया यह प्रतिपादित किया जा सकता है कि साम्बपुराण में विवेचित सौरधर्म ने अपनी सरलता तथा समन्वयशीलता के कारण पूर्व-मध्यकाल में एक विशिष्ट एवं महत्वपूर्ण धर्म की मान्यता प्राप्त कर लिया था। कुष्ठरोग से मुक्ति की मान्यता ने इस धर्म की विशिष्टता को और भी द्विगुणित कर दिया था। वैदिक एवं पौराणिक परम्परा में भी सूर्य को रोगनाशक बताया गया है।[१११] उग्रदेव ने कुष्ठरोग से मुक्ति-हेतु २१ दिन का सूर्यानुष्ठान किया था। मयूर ने भी ( ७वीं शती ई० ) इसी रोग से मुक्ति हेतु सूर्यशतक की रचना की थी।[११२] इन सब कारणों से सूर्य की महत्ता में पर्याप्त वृद्धि हो रही थी।

---

१११. ऋग्वेद १।५०, १२, १०, ३७।४ तथा ७, तैत्तिरीय संहिता ४।४, ४।३, २।३, ७, अथर्ववेद १।२२।

द्रष्टव्य—करमवेलकर, अथर्ववेद एण्ड आयुर्वेद, पञ्चविश ब्राह्मण।

११२. कीथ, ए० बी०, ए हिस्ट्री ऑफ संस्कृत लिटरेचर, पृ० २०९।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS

# २

# साम्बपुराण का काल-निर्धारण

## साम्बपुराण के अन्तरङ्ग साक्ष्य

साम्बपुराण के प्रतिपाद्य विषय के सन्दर्भ में यह उल्लिखित किया जा चुका है कि पुराण या उपपुराण युगविशेष तथा व्यक्ति विशेष की कृतियाँ नहीं हैं। वस्तुतः ये अनेक व्यक्तियों के दीर्घकालिक प्रणयन, परिवर्तन और परिवर्द्धन के मूर्त्तिमान स्वरूप हैं। समसामयिक परम्पराओं और मूल्यों की जीवन्तता का बोध कराने हेतु समय-समय पर इनमें प्रक्षिप्तांश सन्निहित किए गए हैं। मत्स्यपुराण स्वयमेव इस धारणा की सम्पुष्टि करता है।[1] अतः पुराणों को काल-चक्र की सीमित अल्पावधि में आबद्ध करना कथमपि सम्भव नहीं। साम्बपुराण भी इस मन्तव्य का अपवाद नहीं है।

साम्बपुराण में मग-परम्परा से प्रभावित सौरधर्म का निरूपण प्राप्त होता है। सूर्य-माहात्म्य का प्रतिपादन जितनी श्रेष्ठता से साम्बपुराण में किया गया है, वह अन्यत्र दुर्लभ है। भविष्यपुराण, ब्रह्मपुराण तथा स्कन्दपुराण (प्रभास खण्ड) में साम्बपुराण के कतिपय समताद्योतक उल्लेख प्राप्त होते हैं। उनसे साम्बपुराण के कालनिर्धारण में सहायता प्राप्त होती है। भविष्य, ब्रह्म तथा स्कन्द पुराण को आधुनिकतम पुराण के रूप में व्यवहृत किया जाता है। डा० हाजरा महोदय की धारणानुसार भविष्य पुराण तथा ब्रह्मपुराण ने साम्बपुराण से सौरधर्म विषयक सामग्री ग्रहण किया है। इस मान्यता के पक्ष में अधोलिखित तर्क प्रस्तुत किये जा सकते हैं।

मत्स्यपुराण[2] (५३।६१) के अनुसार जिस समय साम्ब-कथा भविष्यपुराण

---

१. मत्स्यपुराण, ५३।८।९;

कालेनाग्रहणंदृष्ट्वा पुराणस्य ततो नृप।
व्यासरूपमहंकृत्वा संहरामि युगे-युगे ॥

२. वही, ५३।६१,

यत्रसाम्बं पुरस्कृत्य भविष्येपि कथानकम्।
प्रोच्यते तत् पुनर्लोके साम्बमेतन्मुनिव्रताः ॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



में प्रतिपादित की गयी थी, साम्बपुराण एक स्वतन्त्र पौराणिक ग्रन्थ की मान्यता प्राप्त कर चुका था। वराहपुराण (अध्याय १७७) में संकेत आता है कि साम्ब ने भविष्यपुराण को नवीन बना दिया जिससे प्रतीत होता है कि मूलतः भविष्य पुराण में साम्ब-कथा का अभाव था।[३] बाद में साम्ब-कथा के कतिपय अंशों को भविष्यपुराण में समाविष्ट किया गया। भविष्यपुराण में मूलतया १४००० श्लोक थे जिसमें ब्रह्मा के पूजा की सर्वोच्च महत्ता प्रतिपादित थी।[४] इसमें साम्ब-कथा अनुपलब्ध थी। परवर्ती स्तर पर प्रक्षिप्तांशों के समावेश से भविष्यपुराण एक लाख श्लोकों का संग्रह हो गया।[५] एशियाटिक सोसाइटी बंगाल के पुस्तकालय में भविष्यपुराण की एक पाण्डुलिपि है जिसमें ब्रह्म, वैष्णव, शैव, त्वष्टा (सौर) तथा प्रतिसर्ग नामक पाँच पर्वन् हैं।[६] यह हस्तलिखित प्रति प्रकाशित भविष्यपुराण की अपेक्षा बहुत छोटी है और इसमें साम्ब-कथा का अभाव है। भविष्यपुराण १।९३ में साम्बपुराण अध्याय ३८ के बहुत श्लोकों को उद्धृत किया गया है। भविष्यपुराण एवं साम्बपुराण दोनों ही ग्रन्थों में दान की महत्ता प्रतिपादित की गयी है।[७] संज्ञा-आख्यान का विवरण भविष्यपुराण में दो स्थानों पर (अध्याय १।४७ और १।७९) उपलब्ध होता है। इन अध्यायों में अध्याय ७९ के अधिकांश श्लोक साम्बपुराण के अध्याय १०-११ के श्लोकों से पर्याप्त साम्य रखते हैं। संज्ञा-आख्यान का विवरण भी प्राप्त होता है।[८] किन्तु भविष्य-पुराण १।४७ में संज्ञा आख्यान भिन्न रूप में प्रतिपादित है। अतः इन दोनों वैषम्यमूलक विवरणों से यह संकेत प्राप्त होता है कि ये भिन्न-भिन्न विवरण सुनिश्चित रूपेण एक व्यक्ति द्वारा न लिखे गए होंगे।

---

३. हाजरा, स्टडीज, भाग १, पृष्ठ ६९-७०।

४. नारदीयपुराण, १।११०।११ अ।

एषु पञ्चेषु पर्वसु ब्रह्मणो महिमाधिकः।

५. भविष्यपुराण, १।१०४ ब—१०७ अ,

स्कन्द शत सहस्रं तु लोकानां ज्ञातमवेहि।
भविष्यमेतद् ऋषिणां लक्षार्धं संख्ययाकृतम्॥

६. हाजरा, स्टडीज, भाग १, पृ० ७१।

७. भविष्यपुराण, १।९३।७१।

भविष्यं साम्ब संज्ञानं वा दत्वा सूर्याय पुस्तकम्।
राजसूयश्वमेधाभ्याम् फलं प्राप्नोति मानवाः॥

८. साम्बपुराण, अ० १०-११।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



भविष्यपुराण १।५२ से साम्बपुराण के श्लोक उपलब्ध होने लगते हैं। मूलतया १।५२, १।५१ का विकास है। इसके प्रणेता वासुदेव हैं जिन्हें सर्वप्रथम १।४८-५१ में प्रस्तुत किया गया है। भविष्यपुराण के १।४८-४९ पर तान्त्रिक प्रभाव परिलक्षित होता है। भविष्यपुराण ने जिस समय साम्बपुराण से सामग्री ग्रहण किया, उस समय उसमें प्रतिपादित सौरधर्म तन्त्रोपासना से पूर्णतया प्रभावित हो रहा था। साम्बपुराण के अध्याय १-१५, १६ (१।२४), १८।२१, २४।३८, तथा ४६ तान्त्रिक प्रभाव से मुक्त हैं। अतः निष्कर्ष स्थापित किया जा सकता है कि भविष्यपुराण के ये अंश (१।५१-५२) साम्बपुराण के मूल भाग के बाद लिखे गए होंगे।[९] साम्बपुराण अध्याय ८ के अनेक श्लोक भविष्यपुराण में तीन भिन्न स्थानों में संग्रहीत हैं जिनसे यह स्पष्ट होता है कि भविष्यपुराण, साम्बपुराण का ऋणी है। साम्बपुराण में सूर्य के विभिन्न नामों की व्युत्पत्ति प्राप्त होती है।[१०] भविष्यपुराण में एवंविध संज्ञामूलक विवरण नहीं प्राप्त होता। साम्बपुराण तथा भविष्यपुराण के संज्ञा-आख्यान भिन्न-भिन्न हैं। साम्बपुराण के अध्याय १० और ११ के अधिकांश श्लोक भविष्यपुराण १।७९ में संग्रहीत हैं परन्तु भविष्यपुराण में साम्बपुराण के ११।२।१२ अ के श्लोक नहीं प्राप्त होते।[११] अन्य साक्ष्यों के आधार पर भी यह कहा जा सकता है कि भविष्यपुराण में साम्बपुराण से सामग्री ग्रहण की गयी है। भविष्यपुराण ने वृहत्संहिता से अनेक श्लोकों को ग्रहण किया है परन्तु साम्बपुराण के एक भी पंक्ति की समानार्थी पंक्ति वृहत्संहिता में नहीं प्राप्त होती जबकि साम्बपुराण के अध्याय ८।२९ और ३१ के श्लोक भविष्यपुराण में मिलते हैं। अतः स्पष्ट होता है कि साम्ब-कथा भविष्यपुराण ने साम्बपुराण से ग्रहण किया तथा वृहत्संहिता से सामग्री ग्रहण कर उस अध्याय का विस्तार किया। भविष्यपुराण १।६६ में साम्बपुराण की ओर संकेत प्राप्त होता है। भविष्य पुराण में मगों के आगमन का संकेत तीन उपभागों में प्राप्त होता है जिनमें तृतीय भाग प्रथम से सीधा सम्बन्धित है। परन्तु द्वितीय भाग बिल्कुल ही पृथक है। द्वितीय भाग साम्बपुराण में अनुपलब्ध है जबकि प्रथम एवं तृतीय भाग साम्ब-पुराण में प्राप्त होते हैं।

भविष्यपुराण के ही तुल्य ब्रह्मपुराण और साम्बपुराण के भी अनेक श्लोक परस्पर साम्य रखते हैं। ब्रह्मपुराण में कोणादित्य अथवा कोणार्क का उल्लेख प्राप्त

---

९. हाजरा, स्टडीज, भाग १, पृ० ७४।

१०. साम्बपुराण, अ० ९।

११. हाजरा, स्टडीज, भाग १, पृ० ७५।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj, Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



है।[१२] साम्बपुराण एवं भविष्यपुराण इसे 'मित्रवन' के रूप में उल्लिखित करते हैं। साम्ब, भविष्य एवं ब्रह्मपुराण के साम्यमूलक स्थलों के आधार पर यह प्रस्तावित किया जा सकता है कि ब्रह्मपुराण ने भी साम्बपुराण से सामग्री ग्रहण की थी। उदाहरणार्थ ब्रह्म २९, साम्बपुराण ३८ और भविष्यपुराण १।८०-८२ तथा ९३ को लिया जा सकता है। सुस्पष्टतः यह कहा जा सकता है कि भविष्यपुराण की तुलना में ( १।८०-८२ और ९३ ) ब्रह्मपुराण २९ तथा साम्बपुराण ३८ में अपेक्षाकृत अधिक साम्य है।

स्कन्दपुराण ( प्रभास खण्ड ) में भविष्य, ब्रह्म तथा साम्बपुराण के अनेक समताद्योतक श्लोक प्राप्त होते हैं। स्कन्दपुराण ७।१००-१०१ तथा भविष्यपुराण १।७२, ७३ तथा ७८ के न केवल श्लोकों अपितु (७।१।१००) विषय-सूची में भी पर्याप्त साम्य है। स्कन्दपुराण में उल्लेख आता है कि साम्ब को दुर्वासा ऋषि ने कुष्ठ रोग से ग्रस्त होने का शाप दिया था। भविष्यपुराण में (१।७२) दुर्वासा द्वारा शाप दिये जाने का विवरण प्राप्त होता है। परन्तु साम्बपुराण अध्याय ३ जो स्कन्दपुराण से पर्याप्त साम्य रखता है, दुर्वासा के एवंविध आख्यान की चर्चा तक नहीं करता। इस उपपुराण में महाभारत से भी आख्यान ग्रहण किए गए हैं। यह अनेक पुराणों यथा स्कन्द, ब्रह्माण्ड, वायु तथा मार्कण्डेयपुराण की चर्चा करता है।[१३] साम्ब-शाप का उल्लेख भागवत में भी आता है किन्तु इन दोनों ही कृतियों में साम्ब ऋषि विश्वामित्र, कण्व तथा नारद द्वारा शापित बताए गए हैं न कि दुर्वासा द्वारा। अतः इस आधार पर साम्बपुराण की तिथि ५०० ई० से पूर्व नहीं रखी जा सकती।[१४] पुनश्च १०३० ई० में अल्बरूनी ने साम्बपुराण की कतिपय पंक्तियों को उद्धृत किया है।[१५] बाद में बल्लालसेन, नन्दघाटिया तथा सर्वानन्द इत्यादि ने भी साम्बपुराण की कुछ पंक्तियों का आश्रय प्राप्त किया है। यह पहले ही प्रतिपादित किया जा चुका है कि स्कन्दपुराण, भविष्यपुराण तथा ब्रह्मपुराण पर समाधारित है। ब्रह्मपुराण की तिथि ९५० ई० से १२०० ई० के मध्य मानी जाती है।[१६] यह तथ्य भी सुनिश्चित हो चुका है कि भविष्यपुराण ने साम्बपुराण

---

१२. ब्रह्मपुराण, २८।१-२, हाजरा, स्टडीज, भाग १, पृ० ८२।
१३. वही, भाग १, पृ० ८९।
१४. वही, भाग १, पृ० ८९।
१५. साचू, अल्बरूनीज इण्डिया, १, पृ० १३०।
१६. हाजरा, पौराणिक रिकर्ड्स ऑन हिन्दू राइट्स एण्ड कस्टम्स, पृ० १५३-१५६।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



से सामग्री ग्रहण किया था। यह क्रम ९५० ई० के बाद का नहीं हो सकता; क्योंकि साम्ब-आख्यान भविष्यपुराण से सामग्री ग्रहण कर बल्लालसेन तथा हेमाद्रि आदि ने भी इस कथा का उल्लेख किया।[१७] वराहपुराण ( अध्याय १७७ ) की तिथि १५०० ई० के बाद स्वीकार की जाती है।[१८] ऐसी स्थिति में साम्बपुराण की तिथि कथमपि ८०० ई० के बाद नहीं रखी जा सकती।[१९] इस प्रकार साम्ब-पुराण की संरचना का काल ५०० ई० से ८०० ई० का सन्धिबोधक स्तर ही रहा होगा। उपपुराणों की सूची में भी इस उपपुराण का उल्लेख आता है। जे० एन० फर्युहर ने भी साम्बपुराण का काल ५५० ई० से ९०० ई० के मध्य प्रस्तावित किया है।[२०] यद्यपि उन्होंने अपने तर्क के पक्ष में विशिष्ट साक्ष्यों का आश्रय नहीं लिया है।

## विद्वानों के विचार

ध्यातव्य है कि साम्बपुराण के सभी अध्यायों की तिथि एक ही नहीं थी। हाजरा महोदय ने तिथि-निर्धारण करते समय साम्बपुराण को दो समूहों में विभा-जित किया है।[२१] प्रथम समूह के अन्तर्गत अध्याय १ (श्लोक १७-२५ के अतिरिक्त) २-१५, १६, १८-२३, २४-३२, ३४-३८, ४६ और ८४ आते हैं। यह साम्बपुराण का मूल भाग है जिसकी रचना ५०० ई० से ८०० ई० के मध्य की गई थी। विशेषतः इसी समय के प्रारम्भ में अध्याय १७, २२, २३ भी आते हैं परन्तु इसका समय उन्होंने ९५० ई० के बाद माना है। अध्याय ३३ का रचना काल ७०० ई० से ९५० ई० के मध्य माना जाता है। अध्याय ४४-४५ का रचनाकाल ९००-१०५० के मध्य स्थापित किया जाता है।[२२] द्वितीय समूह के अध्याय ३९-४३, ४७-८३ हैं, इनमें अनेक इकाइयाँ हैं जैसे ३९-४१, ४२-४३ ४७-५२, ५३-५५

१७. हाजरा, स्टडीज, भाग, १ पृ० ९०।

१८. हाजरा महोदय ने अध्याय १७७ की तिथि १५०० ई० के बाद रखा है, द्रष्टव्य, पौराणिक रिकर्ड्स, पृ० १८०।

१९. स्टडीज, भाग १, पृ० ९१।

२०. फर्युहर, जे० एन०, आउटलाइन आफ दि रेलिजस लिटरेचर आफ इण्डिया, पृ० २०५।

२१. हाजरा, दि साम्बपुराण थ्रू दि एजेज, जर्नल आफ एशियाटिक सोसाइटी, लेटर्स, भाग १८ (२)।

२२. स्टडीज, भाग १, पृष्ठ ९३।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



(श्लोक १।६७ तक) एवं ८३। ये सभी अध्याय तान्त्रिक प्रभाव से पूर्णतया मुक्त हैं। द्वितीय समूह के अध्याय भविष्यपुराण में नहीं प्राप्त होते हैं। इसलिए ऐसा प्रतीत होता है कि इन अध्यायों को बल्लालसेन के बाद ही समाविष्ट किया गया होगा अन्यथा वह साम्बपुराण की पंक्तियों को कभी भी उद्धृत न करता।[२३] तन्त्रदर्शन के प्रति वह बड़ा ही असहिष्णु था। तान्त्रिक परम्पराओं से प्रभावित इन अध्यायों को सम्भवतः १५०० ई० के पूर्व ही समाविष्ट किया गया होगा; क्योंकि गदाधर ने साम्बपुराण की एक पंक्ति उद्धृत किया है जिसमें उपासक को पूजा के पूर्व न्यास-अनुपालन का निर्देश है।[२४] मित्र मिश्र ने सुस्पष्टतः प्रतिपादित किया है कि एक स्थल पर संकेत प्राप्त होता है कि जिन उपासकों ने वैदिक मार्ग का अनुपालन नहीं किया है, उन्हें उस मार्ग पर पहुँचने के लिए तान्त्रिक परम्परा का आश्रय लेने हेतु निर्दिष्ट किया गया है।[२५] मूलतया इन परवर्ती अध्यायों की तिथि १२५०-१५०० ई० के मध्य स्थापित की जाती है।[२६] स्टेटनक्रान ने हाजरा के मत को स्वीकार किया है तथापि उनकी धारणा है कि साम्बपुराण का मूल भाग पाँचवीं शती ईसवी के उपरान्त नहीं रखा जा सकता। हाजरा की यह भी विचारधारा कि साम्बपुराण के अनेक मूल श्लोक अब उसमें अनुपलब्ध हैं, समीचीन प्रतीत होती है।

## बहिरङ्ग साक्ष्य

कूर्मपुराण ( १।१।१६-२० ), स्कन्दपुराण, गरुड़ पुराण तथा पद्मपुराण (पाताल खण्ड में) में अठारह उपपुराणों की नामावली दी गयी है, जिसका विवेचन प्रतिपाद्य विषय के सन्दर्भ में पहले ही किया जा चुका है। इन स्रोतों में साम्बपुराण का निर्विवाद रूप से निरन्तर उल्लेख प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त

२३. जिन पुराणों एवं उपपुराणों में तान्त्रिक प्रभाव दृष्टिगत होते हैं उन्हें बल्लालसेन ने पूर्णतया या आंशिक रूप से अप्रामाणिक सिद्ध किया है। द्रष्टव्य, दानसागर, पृ० ७ श्लोक ५९, ६३ एवं ६७।

२४. गदाधर, कालसार, पृ० १२६;
एवम् न्यासविधिं। प्रायश्चित्ते ततः पूजां समाचरेत् ॥

२५. मित्र मिश्र, वीरमित्रोदय, पृ० २३;
श्रुतिभ्रष्टाः श्रुतिप्रोक्ता प्रायश्चित्तेभ्यमागतः।
क्रमेण श्रुतिसिध्यर्थम् मनुष्यास्तंत्रमाश्रयेत् ॥

२६. हाजरा, स्टडीज, भाग १, पृ० ९३।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



साम्बपुराण अध्याय २६१, ब्रह्मपुराण अध्याय ३२ तथा पद्मपुराण, सृष्टि खण्ड में सूर्यप्रतिमा-लक्षण प्रतिपादित किए गए हैं। उल्लेखनीय है कि इन स्थलों पर सूर्य-प्रतिमा के जो लक्षण विवेचित हैं, वे साम्बपुराण के प्रतिमालक्षणों से पर्याप्त साम्य रखते हैं। साम्बपुराण में विवेचित प्रतिमालक्षण मग-परम्परा से प्रभावित सौरधर्म का भारतीय स्वरूप है। अतः उपर्युक्त महापुराणों, साम्बपुराण एवं सौर-धर्म से सम्बन्धित अध्यायों की तिथि, साम्बपुराण के काल-निर्धारण में अवश्य ही सहायक सिद्ध होगी। कूर्मपुराण अठारह उपपुराणों की सूची का उल्लेख करता है। कूर्मपुराण के उक्त स्थल (१।१।१६-२०) की तिथि हाजरा महोदय ने ५५०–६५० ई० निश्चित की है।[२७] पद्मपुराण (पाताल खण्ड), जिसमें साम्बपुराण का नामांकन है, की तिथि उन्होंने छठी शताब्दी ई० के बाद निर्धारित किया है।[२८] स्कन्दपुराण के बारे में निष्कर्षरूपेण यह कहा जा सकता है कि उसकी संरचना ७०० ई० के बाद हुयी थी। इसी प्रकार मत्स्यपुराण अध्याय २६१, जिसमें सूर्य-प्रतिमालक्षण-विवेचन साम्बपुराण की प्रतिमा-परम्परा से साम्य रखता है, का काल ५५०–६५० ई० निर्धारित किया गया है।[२९] पद्मपुराण, सृष्टि खण्ड जिसमें सूर्य-प्रतिमा-लक्षण विवेचित हैं, की तिथि ६०० ई० निश्चित की गयी है।[३०] ब्रह्मपुराण अध्याय ३२, जो सूर्य-प्रतिमा-लक्षण-विवेचन से सम्बन्धित है, की तिथि ९५०–१२०० ई० निर्धारित की गयी है।[३१] उक्त तथ्यों के आलोक में यह निष्कर्ष स्थापित किया जा सकता है कि ५५०–६५० ई० के मध्य साम्ब-आख्यान जन समुदाय में सुप्रचलित हो चुका था और इसी अन्तराल में साम्बपुराण का प्रणयन भी हुआ होगा।

## पञ्चवीर की अवधारणा तथा चतुर्व्यूह से साम्ब का निष्कासन

महाभारत में वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न, साम्ब और अनिरुद्ध का उल्लेख पञ्चवीरों के रूप में किया गया है। वासुदेव कृष्ण अपने भाइयों एवं पुत्रों के साथ वृष्णिवंश में पूजा प्राप्त करते थे। वे वृष्णि-जाति के नायक के रूप में प्रति-

२७. हाजरा, पौराणिक रिकर्ड्स, पृ० १७८।

२८. वही, पृ० १८२।

२९. वही, पृ० १७६।

३०. वही, पृष्ठ १२३।

३१. वही, पृ० १८५।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



ष्ठित थे।[३२] द्रौपदी के स्वयंवर में भी उक्त पञ्चवीरों ने भाग लिया था।[३३] इस प्रकार महाभारत में 'पञ्चवीर' अवधारणा वीर-पूजा एवं सामाजिक प्रतिष्ठा से सम्बन्धित थी। कुछ समय उपरान्त महाभारत काल में ही चतुर्व्यूह की धारणा विकसित हुयी जिसके अन्तर्गत वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न तथा अनिरुद्ध की उपासना का विधान था।[३४] साम्ब को चतुर्व्यूह से निष्कासित कर दिया गया। भागवत पुराण में वासुदेव के मानवी रूप कृष्ण की चतुर्व्यूहान्तर्गत उपासना का उल्लेख प्राप्त होता है।[३५]

विष्णु के चतुर्व्यूह के आधार पर उनकी चौबीस मूर्तियों का प्रादुर्भाव हुआ। महाभारत के अनुशासन-पर्व में विष्णु-सहस्त्रानाम विवेचित हैं।[३६] इस संज्ञा-शृङ्खला में चौबीस नाम अधिक महत्वपूर्ण हैं। वे नाम क्रमशः केशव, नारायण, माधव, गोविन्द, विष्णु, मधुसूदन, त्रिविक्रम, वामन, श्रीधर, हृषीकेश, पद्मनाभ, दामोदर, वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न, अनिरुद्ध, पुरुषोत्तम, अधोगज नृसिंह, अच्युत, जनार्दन, उपेन्द्र, हरि तथा कृष्ण हैं। इन चौबीस रूपों में भी वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न तथा अनिरुद्ध मुख्य हैं क्योंकि ये ही शक्तिमय व्यूह की रचना करते हैं। आगम ग्रन्थ इन्हें दशावतारों से भी अधिक महत्वपूर्ण मानते हैं।[३७] विष्णुधर्मोत्तर में भी विष्णु की चतुर्मूर्ति का विवरण प्राप्त होता है जिसमें विष्णु के चारों मुख वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न तथा अनिरुद्ध के द्योतक बताए गए हैं।[३८] ध्यातव्य है कि इन सभी स्थलों पर साम्ब का उल्लेख अनुपलब्ध है। साम्ब का एवंविध निष्कासन भागवतपुराण तक बना रहा। साम्ब के निष्कासन के पीछे

३२. महाभारत, ५।२०, ४७

३३. महाभारत, ६।६१, ६६

३४. श्रीमद्भागवत में उल्लेख आता है कि पाँचरात्र विधि से उपासना करने वाले भक्त चतुर्व्यूह के रूप में विष्णु की उपासना करते थे, द्रष्टव्य, श्रीमद्भावत, ११।६।१० यः सात्वतैः समविभूतय आत्मवद्भिः।
व्यूहेऽर्चितः सवनशः स्वरतिक्रमाय।।

३५. श्रीमद्भागवत १०।१६।४५, नमः कृष्णाय रामाय वसुदेव सुताय च।
प्रद्युम्नायनिरुद्धाय सात्वतां पतये नमः।।

३६. महाभारत, अनुशासन पर्व, १४९।१२-१११

३७. राव, गोपीनाथ, इलीमेन्ट्स आफ हिन्दू आइकनोग्राफी, भाग १, खण्ड १, पृ० २३९।

३८. मिश्र, इन्दुमती, प्रतिमा-विज्ञान, पृ० १२७।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



मूल कारण यह रहा होगा कि वे शूद्रा जाम्बवती के गर्भ से प्रादुर्भूत थे।[३९] भागवत पुराण चूँकि भागवत या वैष्णव धर्म की पारम्परिक मर्यादा एवं उत्कृष्टता का प्रतिनिधिभूत ग्रन्थ था अतः इसमें साम्ब को चतुर्व्यूहान्तर्गत स्थान नहीं दिया गया। भागवतपुराण का रचनाकाल ५०० ई० से ५५० ई० के सन्धिमूलक स्तर पर रखा जाता है।[४०] अतः यह स्पष्ट हो जाता है कि ५५० ई० तक साम्ब-आख्यान अधिक ख्याति एवं सम्मान को न प्राप्त कर सका होगा। इस प्रकार साम्बपुराण की रचना ५५० ई० के बाद ही हुयी होगी।

## पुरातात्त्विक प्रमाण

विष्णुधर्मोत्तर द्वारा प्रतिपादित चतुर्मूर्ति की सम्पुष्टि पुरातत्त्वीय प्रमाण से भी होती है। बनर्जी महोदय ने विष्णु की एक चतुर्मूर्ति का उल्लेख किया है जो काश्मीर से प्राप्त हुई है। विष्णुधर्मोत्तर द्वारा विवेचित मूर्ति विष्णु की चतुर्मूर्ति से पर्याप्त साम्य रखती है। इस मूर्ति में चार मुख हैं जो वासुदेव (सौम्य), संकर्षण (सिंह वाला), प्रद्युम्न (वाराह मुख) तथा अनिरुद्ध (कपिल मुख) के ही रूप हैं। बनर्जी महोदय ने इस मूर्ति को पूर्वमध्यकालीन घोषित किया है।[४१] इस प्रकार उपलब्ध पुरातत्त्वीय प्रमाण से भी निष्कर्ष स्थापित होता है कि साम्ब की स्थिति लगभग ५५० ई० तक ख्यातिपूर्ण नहीं थी। उल्लेखनीय है कि बृहत्संहिता में साम्ब को पुनः प्रतिष्ठा प्राप्त हो गयी।[४२] विष्णुधर्मोत्तर[४३] तथा वैखानसागम[४४] भी इस तथ्य की पुष्टि करते हैं। बृहत्संहिता की तिथि ५०५ ई०–५८७ ई० निश्चित हुई है।[४५] चूँकि भागवतपुराण (५००–५५० ई०) में साम्ब का स्थान अधिक उपेक्षित था और फिर बृहत्संहिता (५०५–५८७ ई०) में उन्हें देव-तुल्य प्रतिष्ठा प्राप्त हुई। अतः यह तथ्य स्थापित किया जा सकता है कि साम्ब की सम्मानजनक स्थिति ५५० ई० के बाद ही स्थापित हुई होगी और इस प्रकार उसे

---

३९. हरिवंश पुराण २।१०३।६; जाम्बवत्याः सुतो जज्ञे साम्बः समितिशोभनः।

४०. हाजरा, पौराणिक रिकर्ड्स पृ० ५५।

४१. बनर्जी, जे० एन०, द डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी, पृ० ४०८-९।

४२. बृहत्संहिता (अनूदित, शास्त्री, वी० एस) १९४७, ५८।४०

४३. विष्णुधर्मोत्तर पुराण (विष्णुधर्मोत्तर पुराण के रूप में उद्धृत)।

४४. वैखानसागम (संस्करण, शास्त्री, के० एस०) त्रिवेन्द्रम, १९३५, पटल ५९।

४५. काणे, पी० वी०, हिस्ट्री आफ धर्मशास्त्र, भाग १ (क्रोनोलाजिकल टेबुल्) पृ० ११।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



पूर्ण प्रतिष्ठा प्राप्त करने में अवश्य ही कम से कम पचास वर्ष का समय लगा होगा। अतः इस आधार पर साम्बपुराण की रचना-तिथि ६०० ई० के बाद ही निर्धारित होती है।

भविष्य पुराण ने बृहत्संहिता से सामग्री ग्रहण किया था तथा इसी प्रकार वह साम्बपुराण से भी विशेषतः प्रभावित था। उल्लेखनीय है कि बृहत्संहिता ने साम्बपुराण से कोई सामग्री नहीं ग्रहण किया है और न वह उससे कथमपि प्रभावित ही है। भविष्यपुराण की भाँति स्कन्द एवं ब्रह्मपुराण भी बृहत्संहिता एवं साम्बपुराण दोनों से सामग्री ग्रहण किए हैं। हाजरा महोदय स्कन्दपुराण की तिथि ७०० ईसवी के पूर्व नहीं स्वीकार करते।[४६] सौरोपासना से सम्बन्धित आख्यान के सन्दर्भ में ब्रह्मपुराण का काल ६५० से १२०० ई० स्वीकार किया जाता है।[४७] इसी प्रकार भविष्यपुराण के वे अध्याय जो साम्ब-आख्यान से सम्बन्धित हैं, ७०० ई० के बाद के ही हैं। ७०० ई० के आस-पास तथा उसके बाद लिखे गए उक्त पुराणों ने चूँकि साम्बपुराण से सामग्री ग्रहण किया था और स्वाभाविकरूपेण सामग्री ग्रहण करने में एक शताब्दी का समय अवश्य लगा होगा। अतः साम्बपुराण की रचना तिथि ६०० ई० उक्त तथ्य से भी सर्वथा समर्थित होती है। पुराणों के उपर्युक्त तिथि-विवेचन तथा बृहत्संहिता की संरचना के उक्त तथ्यालोक के सन्दर्भ में यह धारणा सुस्थापित की जा सकती है कि साम्बपुराग के पूर्ववर्त्ती मूल भाग की संरचना ६०० ई० से ८०० ई० के मध्य हुई होगी।

सारांशतः यह प्रतिपादित किया जा सकता है कि साम्बपुराण के अन्तःसाक्ष्य तथा बहिःसाक्ष्य प्रमाणों के आधार पर सुनिश्चित की गयी कालावधि साम्बपुराण के काल-निर्धारण-क्रम में नवीन तथ्य का उद्घाटन करती है। अन्तरङ्ग तथा बहिरङ्ग प्रमाणों के आधार पर निर्धारित किया गया साम्बपुराण का काल विपश्चितों द्वारा निश्चित साम्बपुराण के काल ५०० ई० से एक शताब्दी पश्चात्, अर्थात् ६०० ई० निर्धारित होता है। उपरितम समय ८०० ई० तक सुस्थिर होता है। इस प्रकार पूर्ववर्ती मूल भाग की संरचना तिथि ६००-८०० ई० के सन्धिद्योतक स्तर पर ही निर्धारित होती है। परवर्ती अध्यायों की तिथि के के प्रसङ्ग में हाजरा आदि के मतों का ही पोषण होता है। तन्त्रोपासना से प्रभावित होने के कारण इन अध्यायों की तिथि अनेक इकाइयों में विभाजित होती हुई १५०० ई० तक पहुँच जाती है।

---

४६. हाजरा, पौराणिक रिकर्ड्स, पृ० १६५।

४७. वही, पृ० १८७।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS

# ३

# साम्बपुराण में वर्णित सामाजिक एवं आर्थिक अवस्था

## वर्णाश्रम व्यवस्था एवं वैदिक परम्परा

संस्कृति मानव-मनीषा की सर्वोत्कृष्ट उपलब्धि है जो उसे पाशविक प्रवृत्तियों से सर्वदा पृथक् रखकर अनवरत मानवोचित कृत्य करने हेतु प्रेरणा प्रदान करती रहती है। कर्तृत्व मानव-स्वभाव है। अतः विश्वब्रह्माण्ड के सभी स्त्री-पुरुष विभिन्न कर्म-क्षेत्रों में संलग्न पाये जाते हैं। समष्टिमूलक प्रक्रिया वस्तुतः व्यष्टिमूलक जीवन-विधाओं की समवेत स्वरूप होती हैं। अतः व्यष्टि एवं समष्टि अन्योन्याश्रित होते हैं। व्यक्तिगत मान्यताओं से विकसित सामुदायिक दृष्टिकोणों को शाश्वत स्वरूप प्रदान करने हेतु प्रायः समस्त संस्कृतियों के अपने-अपने पारस्परिक संकलन होते हैं। प्राचीन भारतीय परम्पराओं एवं मौलिक मान्यताओं से ऋग्वेद भरा पड़ा है। वह ऋषि-संस्कृति, भारतीय जीवन-विधा एवं उसकी चिन्तन-मनन प्रणाली पर सम्यक्रूपेण प्रकाश डालता है। ऋग्वेद आर्य एवं अनार्य परम्पराओं में विद्यमान मौलिक विभेद को स्पष्ट कर आर्यों के कर्म, विचार तथा अन्य महत्वमय पटलों को उद्घाटित करता है। भारतीय सामाजिक गतिविधि के उषःकाल से—उसकी प्रखरतम प्रस्थिति तक का ज्ञान हमें ऋग्वेद में समुपलब्ध होता है। भारतीय सामाजिक रचना में वर्णाश्रम-पद्धति अपना विशिष्ट महत्व रखती है। वर्णव्यवस्था की उत्पत्ति का प्रथम संकेत ऋग्वेद के पुरुष सूक्त में प्राप्त होता है।[1] पुरुष सूक्त में यह प्रतिपादित है कि परम-पुरुष के मुख से ब्राह्मण, भुजाओं से क्षत्रिय, उरु से वैश्य तथा चरणों से शूद्रों की उत्पत्ति हुई। चातुर्वर्ण्य की व्यवस्था समाज की आचार-संहिता एवं जीवन-शिला के सुदृढ़ीकरण हेतु

---

१. ऋग्वेद, पुरुष सूक्त, दशम मण्डल;

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्बाहू राजन्यः कृतः।
उरुतदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



प्रकल्पित की गयी थी। हमारे प्राचीन धर्म-ग्रन्थ सामाजिक व्यवस्था की मौलिकता के संरक्षण पर बल देते हैं और इसी मान्यता के कारण प्राचीन भारतीय शासक एवं शासित वर्ग 'वर्ण' एवं आश्रम-संज्ञक सामाजिक संस्थाओं के प्रति सचेष्ट होकर अपने कर्त्तव्यों का पालन करते थे।

वर्णाश्रम-व्यवस्था प्राचीन विश्व की सार्वभौमिक सत्ता ऋत से पृथक् नहीं थी। भारतीय मनीषियों-महर्षियों ने गहन चिन्तन-मनन के उपरान्त हिन्दू-सभ्यता तथा संस्कृति के संरक्षण-हेतु वर्णाश्रम-पद्धति को विशेष महत्वपूर्ण प्रतिपादित किया था। चातुर्वर्ण्य-पद्धति जहाँ समाज के उन्नयन पर बल देती थी, वहीं आश्रम-व्यवस्था व्यक्ति के आत्मोन्नयन तक ही सीमित थी। व्यष्टि एवं समष्टि के हितों का यह अभूतपूर्व समन्वय था। प्राचीन भारतीय समाज आश्रमादि के विधानों का तत्परता से पालन कर सुख-समृद्धि का अनुभव करता था। वर्ण एवं आश्रम का परस्पराक्षेपी सहयोग, सुख एवं समृद्धि हेतु आवश्यक भी था। इन संस्थाओं के सम्बल द्वारा हिन्दू समाज अपने पाथेय तक पहुँचना चाहता था। वस्तुस्थिति भी यह थी कि ये संस्थाएँ अप्रत्यक्ष रूप से अभ्युदय (सिद्धि) निःश्रेयस, भौतिक एवं आध्यात्मिक विकास हेतु सतत क्रियाशील थीं। मानव-जीवन के 'पुरुषार्थ' प्राप्ति में अत्यधिक सहायक होने के कारण ये सार्वकालिक एवं सार्वजनीन महत्ता भी प्राप्त कर चुकी थीं।

## साम्बपुराण में वर्णाश्रम-व्यवस्था

वर्णाश्रम-व्यवस्था की पूर्ण प्रतिष्ठा वस्तुतः उत्तर वैदिक काल एवं पुराण-युग में ही हो पायी थी। यह व्यवस्था मानव-जीवन के सर्वप्रमुख नियामकों में से एक थी। साम्बपुराण में भी ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र, चार वर्णों का उल्लेख प्राप्त होता है। पञ्चम वर्ण का भी उल्लेख मिलता है[३] जो सामाजिक दृष्टि से विशेष महत्वपूर्ण है। शुक्ल, रक्त, पीत तथा कृष्ण वर्णों को क्रमशः ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र से समीकृत किया गया है।[४] इससे तत्कालीन सामाजिक

२. साम्बपुराण, ३४।३८;
रथभंगेद्विजभयंभग्नेक्षे क्षत्रियस्य च।
तुला भंगे तु वैश्यानां शम्याः शूद्र भयंभवेत्॥

३. वही, ६९।१९; गणिकांशसर्ववर्णा वै पञ्चमं सार्वर्णिकम्।
द्रष्टव्य, घुरे, कास्ट क्लास एण्ड अकुपेशन, पृ० ७४।

४. वही, ५२।६; विप्रस्य व सुधाशुक्लालोहिताक्षत्रियस्य तु।
पीता वैश्यस्य विज्ञेया कृष्णा शूद्रस्यकीर्तिता॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



विन्यास पर प्रकाश पड़ता है। पूर्व-मध्यकालीन प्रवृत्तियों के प्रभावस्वरूप साम्बपुराण में वर्ण-संकर का भी संकेत प्राप्त होता है।[६] वर्ण-सांकर्य के परिणामस्वरूप साम्बपुराण में बढ़ई[७] तथा स्वर्णकार[८] जातियों का भी वर्णन आता है। वस्तुतः यह तात्कालिक प्रवृत्तियों की प्रतिच्छाया थी जो चातुर्वर्ण-व्यवस्था के अतिरिक्त समाज के वर्गगत एवं श्रेणीगत विभाजन के लिए उत्तरदायी थी।[९]

साम्बपुराण में ब्राह्मणों की प्रष्ठिात्मक स्थिति का उल्लेख प्राप्त होता है। वे समाज के लिए अत्यन्त पवित्र माने जाते थे। उन्हें कोई अपमानित नहीं कर सकता था[१०] उन्हें भोजन कराना तथा दान देना महान् पुण्य का कार्य समझा जाता था।[११] ब्राह्मणों तथा यज्ञों को समान महत्व दिया जाता था। किसी भी साधक को यज्ञों तथा विप्रों की पूजा से विरत होने पर हीन साधन वाला माना जाता था[१२] ब्राह्मण निन्दक को हीन जाति अर्थात् शूद्रों के तुल्य मानकर गर्हित किया जाता था।[१३]

---

५. प्रभु, पी० एन०, हिन्दू सोशल आर्गनाइजेशन, पृ० ३०२: घुरे, कास्ट क्लास ऐण्ड अकुपेशन, पृ० ७४।

६. साम्बपुराण, २६।३१; वैश्यास्तुमानसा ज्ञेयाः शूद्रास्तेषांतु मन्दगाः।
न तेषां संकर कश्चिद्वर्णाश्रमः क्वचित्॥

७. वही, ४४।९; क्रुद्धामंदातुरप्रेष्यगणिकापर्गुषितावक्षुतंनाद्यात्।

८. वही, ४४।६; द्विषश्चायुष्कामः सुवर्णकारान्नं परिहरेत्॥

९. मजूमदार, आर० सी०, द स्ट्रगिल फार इम्पायर, पृ० ४७४-७५।

१०. साम्बपुराण, ४४।६; ब्राह्मणक्षत्रिय सर्पान्नावमन्येत्॥

द्रष्टव्य—घुरे, कास्ट क्लास एण्ड अकुपेशन, पृ० ७४।

११. वही, ४५।३३, छत्रंद्विजाय ते दद्यात्संप्रेत्य तु सुखी भवेत॥
४६।३१-३२, ४५।३७, ३८, ३९, ३३।१५, ३४।१०, ३४।४२, ४५।२, ४६।३७ में भी इस प्रकार उल्लेख प्राप्त होते हैं।
द्रष्टव्य—घुरे, वही, पृ० ८७।

१२. वही, ६७।१३, समयक्षैस्ततो विप्रैरन्यथा हीनसाधन।
यादृशः साधको ज्ञेयः सहायतस्यतादृशः॥

१३. वही, ३९।१६;
वर्जयेत् हीन जातींश्च नास्तिका न शुचीनरान्न।
देव द्विजं गुरुं वापि ये च निन्दित सर्वदा॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



अभिलेखों से भी यह पता चलता है कि ब्राह्मणों को दान देने का विधान मुक्ति का सहज मार्ग माना जाता था और तत्कालीन समाज में इसका विशेष प्रचलन था।[१४] शिक्षक के रूप में उन्होंने प्राचीन भारतीय समाज के निर्माण में विशिष्ट भूमिका का निर्वाह किया था। वेद-पाठनादि से प्राप्त धन ही उनके जीविका का साधन था। परन्तु परिवार के और सदस्य अन्य आर्थिक स्रोतों का भी आश्रय प्राप्त करने लगे थे। इस समय तक ब्राह्मण कृषि-कर्म भी करने लगे थे। वे अब राजनीति तथा युद्ध में भी भाग लेने लगे थे।[१५] कुछ ब्राह्मण शासक तथा योद्धा बनकर क्षत्रिय के रूप में भी माने जाने लगे थे।[१६] ब्राह्मणों ने जैसा कि मनुस्मृति के आपद्धर्म में उल्लिखित है, अपने जीविकोपार्जनार्थ निम्न व्यवसायों को भी स्वीकार किया। अल्बरूनी ने प्रतिपादित किया है कि वे बाद में वैश्यों के माध्यम से व्यापार भी करने लगे।[१७] ब्राह्मण अपने धार्मिक कर्तव्यों को त्यागकर दस्तकारी, मद्य, दूध तथा नमक आदि बेचने का कार्य भी करने लगे थे।

पूर्वमध्यकाल में ब्राह्मणों की स्थिति अपेक्षाकृत चिन्तनीय होती जा रही थी। सामाजिक प्रतिष्ठा क्षीण होने के कारण वे आर्थिक विपन्नता के शिकार हो रहे थे। वैदिक पुरोहितों की संख्या अत्यल्प थी जब कि कर्मकाण्डी पुरोहितों की संख्या में निरन्तर वृद्धि हो रही थी। पुराण, हिन्दू-धर्म, तान्त्रिक साहित्य तथा अन्य धर्मों की लोकप्रियता बढ़ रही थी। वेदाध्ययन में ब्राह्मणों का वर्चस्व समाप्त सा हो रहा था। साम्बपुराण में उल्लेख आता है कि जो व्यक्ति विद्यावान न हो उसे गाय, सोना, भूमि, अश्व, गृह, अन्न, तिल और घृत दान में

---

१४. पाटिल, डी० आर०, कल्चरल हिस्ट्री **फ्राम द वायुपुराण**, पृ० १२८-१३०।

१५. चक्रवर्ती, पी० सी०, आर्ट आफ वार इन ऐन्शियन्ट इण्डिया, पृ० ७८।

१६. गुजरात का वास्तुपाल जिसके ३३०० (बन्दीजनम्) थे; नरनारायणनन्द महाकाव्य, पृ० ६।

१७. अल्बरूनीज इण्डिया, एडवार्ड सी० साचू द्वारा सम्पादित, दिल्ली १९६४, भाग २, पृ० १३२।



CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



नहीं लेना चाहिए।[१८] सुस्पष्ट है कि ब्राह्मण ही दानग्राही होता था। अतः दान-ग्रहणार्थ उसे वेद-ज्ञान-सम्पन्न एवं विद्वान् होना सामाजिक दृष्टिकोण से अनिवार्य माना जाता था। फिर भी ब्राह्मणों के विशिष्ट सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक तथा विधिक अधिकार इस समय तक सुरक्षित थे। समय-समय पर उन्हें अनुदान दिए जाते थे। सारांशतया यह कहा जा सकता है कि ब्राह्मणों की आपेक्षिक स्थिति अच्छी थी। वे अन्य वर्णों के लिए सम्मान के पात्र थे।

## मगों की उत्पत्ति

मगों को भी ब्राह्मणों के समान ही प्रतिष्ठा प्राप्त थी। वे ईरान के पुरोहित थे। प्राचीन भारतीय समाज में पुरोहितों को विशेष सम्मान प्रदान किया जाता था। पौरोहित्य कर्म के कारण मगों को विशेष महत्व प्राप्त था। महाभारत[१९] तथा विष्णुपुराण[२०] में मगों को शाकद्वीप की चार जातियों में उल्लिखित किया गया है। साम्बपुराण के अन्तरङ्ग साक्ष्य से जम्बुद्वीप (भारतवर्ष) में सूर्य-मन्दिर में पौरोहित्य कर्म के सम्पादनार्थ साम्ब द्वारा लाया गया था।[२१] मगों के आगमन तथा सूर्य-मन्दिरों से उनके तादात्म्य का उल्लेख भविष्य[२२] तथा ब्रह्म[२३] पुराण में भी प्राप्त होता है। साम्बपुराण में मगों को वेदवादी परम्परा के ब्राह्मणों

---

१८. साम्बपुराण, ४४।९,

अनध्यायिनं वर्जयेत् ।
वार्यन्नतिलदीपभूमिहिरण्यगृहवस्त्र गावश्च ।।

१९. महाभारत, ७।११।३६-३८।

२०. विष्णु पुराण २।४।६९-७०।

२१. साम्बपुराण, २६।२७-२८-२९,

विज्ञप्तेत्वथसांवेनप्रतिमातमुवाचह ।
न योग्यः परिचर्य्यायां जंबूद्वीपेममानघ ।।
ममपूजापरान्कृत्वाशाकद्वीपादिहानय ।
लवणोदात्परेपारेक्षीरोदेनसमावृतम् ।।
जंबूद्वीपात्परंतस्माच्छाकद्वीपइतिश्रुतः ।
तत्रपुण्याजनपदाश्चातुर्वण्य समाश्रिताः ।।

२२. भविष्यपुराण, १३९।

२३. ब्रह्मपुराण, २०।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



में रखा गया है।[२४] नेपाल से प्राप्त हुयी पाण्डुलिपि (५५० ई०) में भी उन्हें ब्राह्मणों के समान ही विशेष महत्व एवं सम्मान प्रदान किया गया है।[२५] टॉलमी (द्वितीय शताब्दी ई०) ने भी मगों को ब्राह्मण (ब्राह्मणोई मगोई) प्रतिपादित किया है।[२६] मग प्राचीन भारतीय समाज में सम्यक्रूपेण घुल-मिल गए थे। आज भी राजस्थान, उत्तर प्रदेश तथा उत्तर भारत के अन्य भागों में फैले हुए हैं।[२७] इन सभी तथ्यों से यही प्रमाणित होता है कि पुरोहितों के विशिष्ट वर्ग अर्थात् शाकद्वीपीय ब्राह्मण भक्तों ने अपनी अनवरत साधना से सौर धर्म को विशिष्ट एवं लोकप्रिय बनाने में उल्लेखनीय भूमिका का निर्वाह किया था।

मगों के तादात्म्य पर मत वैविध्य है। सामान्यतः यह स्वीकार किया जाता है कि पुराणों में उल्लिखित शाकद्वीपीय मग ईरान के मगी पुरोहित ही थे।[२८] मूलतः वे मीडियन पुरोहित जाति के थे।[२९] उन्हीं की शाखा के कतिपय लोग जरथुष्ट्र धर्म के प्रचार-प्रसार में भी संलग्न थे।[३०] उनके संयुक्त प्रयास के फलस्वरूप मिथ्रवाद का उदय हुआ। इस सम्प्रदाय पर वेबीलोनियन तथा चैल्डियन धर्मों का प्रभाव पहले ही पड़ चुका था।[३१] मगी सम्प्रदाय के लोग मिथ्र अभिधानान्तर्गत सूर्य एवं अग्नि की उपासना करते थे। मीडिया के अग्नि एवं सूर्य पूजक पुरोहितों पर निस्सन्देह भारत आगमन तक ईरानियन तत्वों का पर्याप्त प्रभाव पड़ चुका होगा।

---

२४. साम्बपुराण २६।४८, अष्टादशकुलानीहमगानांवेदवादिनाम्।

२५. इण्डियन एन्टीक्वेरी, १९११, जनवरी, पृ० १८।

२६. मैक्रेन्डिल, जे० डब्लू०, ऐन्शियन्ट इण्डिया ऐज डिस्क्राइब्ड बाई टॉलमी, पृ० १७०।

२७. मित्र, डी०, फॉरेन एलीमेन्ट्स इन इण्डियन पापुलेशन, पृ० ६१३-१५।

२८. भण्डारकर, कलेक्टेड वर्क्स, पृ० २१९, मजूमदार, आर० सी०, एज आफ इम्पीरियल यूनिटी, पृ० ४६५, मित्र, डी०, वही, पृ० ६१३-१५।

२९. मोल्टन, द ट्रेजर आफ मगी, पृ० ९, मोल्टन महोदय मगों को मीडिया की विविध निम्न जातियों से सम्बद्ध प्रतिपादित करते हैं।

३०. मोल्टन, वही, पृ० ९, १३, हेरोडोटस १।१०१।१३२।

३१. फ्रैंक, क्युमान्ट, द मिस्टरीज आफ मिथ्र, पृ० ३०, ३१; मोल्टन, अर्ली जॉरोअस्ट्रिनिज्म, पृ० १८७, १९१।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



## शाकद्वीप का तादात्म्य

शाकद्वीपीय स्थिति पर भी सुनिश्चित मत का अभाव है। डा० लालता-प्रसाद पाण्डेय ने शाकद्वीप को सौराष्ट्र से समीकृत किया है।[३२] उनकी धारणा है कि भविष्यपुराण में वर्णित शाकद्वीप स्कन्दपुराण में विवेचित प्रभास से पर्याप्त साम्य रखता है।[३३] पुनश्च, ब्रह्मपुराण में विवरण आता है कि विश्वकर्मा ने शाकद्वीप में सूर्य को खराद पर चढ़ाया।[३४] एक अन्य स्थल पर सूर्य के खरादने की क्रिया का उल्लेख जिसे प्रभास कहते हैं।[३५] इस तथ्य से भी शाकद्वीप का वास्तविक समीकरण सौराष्ट्र ही प्रतीत होता है। महाभारत तथा पुराणों में शाकद्वीपीय चार जातियों (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र) का उल्लेख प्राप्त होता है।[३६] साम्बपुराण में मगों की चार जातियों मग, मामग, मानस तथा मन्दग का विवरण आता है जो सुनिश्चतरूपेण भारतीय उत्पत्ति पर बल देता है।[३७] इस प्रकार सौराष्ट्र भारत में प्राचीन काल से ही सूर्य-पूजा का केन्द्र था।[३८] हो सकता है कि यह सौरराष्ट्र का संक्षिप्त रूप रहा हो। विजयोपरान्त शकों के वहाँ बस जाने पर शाकद्वीप संज्ञा हो गयी होगी। शकों को सई भी कहा जाता था।[३९] इसलिए इस क्षेत्र को पहले सैराष्ट्र और तदनन्तर सौराष्ट्र संज्ञा प्राप्त हुयी होगी। बाद में चलकर डा० पाण्डेय ने, पूर्वी ईरान में स्थित सीस्तान तथा शकस्थान से भी शाकद्वीप को समीकृत करने की

३२. पाण्डेय, एल० पी०, सन वरशिप इन ऐन्शियन्ट इण्डिया, पृ० १८४।

३३. स्कन्दपुराण, प्रभास खण्ड, अ० ९।

३४. ब्रह्मपुराण, अ० ३२।

३५. वही, अ० ८९।

३६. पाण्डेय, एल० पी०, पूर्वोद्धृत, पृ० १८५।

३७. साम्बपुराण, २६।३०-३१,

मगाश्चमामगाश्चैवमानसामन्दगास्तथा ।
मगाब्रह्मणभूयिष्ठामामगाः क्षत्रियास्तथा ।।
वैश्यास्तु मानसज्ञेयाः शूद्रास्तेषांतुमन्दगाः ।

३८. पाण्डेय, एल० पी०, पूर्वोद्धृत, पृ० १८५।

३९. काम्प्रिहेन्सिव हिस्ट्री आफ द मौर्याज एण्ड द सातवाहनाज, पृ० १८८-९, १९१-२, २२४।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



सम्भावना व्यक्त की है[४०] किन्तु उनका विशेष आग्रह सौराष्ट्र के तादात्म्य पर ही है। अरोरा महोदय ने सीस्तान को शकों का निवास-स्थान प्रतिपादित किया है जो अफगानिस्तान में था। सम्प्रति यह ईरान में स्थित है।[४१]

## साम्बपुराण का अन्तरङ्ग साक्ष्य

साम्बपुराण का आन्तरिक साक्ष्य जिसमें शाकद्वीपीय मगों को उच्चकोटि का सूर्यपूजक प्रतिपादित किया गया है, जम्बूद्वीप में लाने को निर्दिष्ट करता है।[४२] ध्यातव्य है कि जम्बूद्वीप का तात्पर्य भारत से था। किन्तु शाकद्वीप जो क्षीरसागर से घिरा था, ईरान में स्थित था। पुनश्च, यह आवश्यकनहीं है कि मात्र भारत में ही उस समय चार जातियों की व्यवस्था रही हो। ईरान में भी एवंविध जातियों का उल्लेख प्राप्त होता है। जब तक सौराष्ट्र से कोई पुरातात्त्विक साक्ष्य नहीं उपलब्ध हो जाता, इस मत को पुष्ट करने में कठिनाई प्रतीत होती है। पुनश्च, डॉ० पाण्डेय ने अव्यङ्ग, उदीच्यवेष आदि को भारतीय वेशभूषा प्रतिपादित कर मगों को भारतीय उत्पत्ति का निरूपित किया है किन्तु डॉ० उमाप्रसाद थपलियाल ने इस मत को परवर्ती ग्रन्थों पर आधारित बताकर निराकृत करने का प्रयास किया है।[४४]

शाकद्वीप पूर्वी ईरान में स्थित बताया जाता है।[४५] मूलस्थान में सूर्य-मन्दिर का निर्माण मगों ने किया था। सुनिश्चितरूपेण यह कार्य पूर्वी ईरान के शकों का ही था।

## भारत में मग पुरोहितों की प्राचीनता

मगों की प्राचीनता का प्रश्न भारत के सामाजिक-धार्मिक इतिहास की दृष्टि से अत्यन्त महत्वमय है। मगों के आगमन से सूर्योपासना-प्रसङ्ग में एक

---

४०. पाण्डेय, एल० पी०, सन वरशिप इन ऐन्शियन्ट इण्डिया पृ० १८६।

४१. अरोरा, आर० के०, द मगाज, सन वरशिप एण्ड द भविष्य पुराण, पुराणम् १३ (१), जनवरी १९७१ पृ० ५४। विस्तार के लिए द्रष्टव्य, फाउचर, लाविलेरूते दे लेन्दे दे बेवरीज ए टेक्साइल, पेरिस, १९४२-४७।

४२. साम्बपुराण २६।२८-३९,

ममपूजा परान्कृत्वाशाकद्वीपादिहानय।
लवणोदात्पारेक्षीरोदेन समावृतम् ॥
जंबुद्वीपात्परं तस्माच्छाकद्वीपइतिश्रुतः।
तत्रपुण्याजन पदाश्चातुर्वर्ण्यसमाश्रिताः ॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



नूतन अध्याय का प्रतिनिधित्व होने के साथ-साथ भारतीय समाज की गतिशीलता तथा ग्रहणशीलता पर विपुल प्रकाश पड़ता है।[४६] किन्तु भारत के ऐतिहासिक क्षितिज का यह अत्यन्त कष्टप्रद अध्याय है कि इतने महत्वपूर्ण पक्ष (सामाजिक-धार्मिक) को सामान्य एवं अल्प महत्व की पृष्ठभूमि में प्रतिपादित किया गया है। सामान्यतः यह स्वीकार किया जाता है कि मग शकों के साथ भारत में शक-कुषाण काल में प्रवेश किए।[४७] परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि मगों का आगमन कई धाराओं में हुआ। प्रथम लहर शाखामनीषी आक्रमणकारियों के साथ उत्तर पश्चिम भारत में पाँचवीं शताब्दी ई० पू० में आयी। दूसरी लहर शक कुषाण काल (द्वितीय शताब्दी ई० पू०—द्वितीय शताब्दी ई०) में आयी।[४८] इस तथ्य की सम्पुष्टि कनिष्क के उन सिक्कों से भी होती है, जिन पर मिथ्र-पूजा का अंकन उपलब्ध होता है।[४९] कुषाणों से पूर्व ईरानियन पद्धति की सूर्य-मूर्तियाँ भी नहीं प्राप्त होतीं।[५०] द्वितीय शताब्दी ई० के पूर्व सुनिश्चित साक्ष्यों का भी अभाव

४३. पाण्डेय, एल० पी०, सन वरशिप इन ऐन्शियन्ट इण्डिया, पृ० १७९-८४।

४४. थपलियाल, यू० पी०, फारेन एलीमेन्ट्स इन ऐन्शियन्ट इण्डियन सोसाइटी, पृ० १५०-५१।

४५. मित्र, डी, फॉरेन एलीमेन्ट्स इन इण्डियन पापुलेशन, पृष्ठ ६१३-१५ द्रष्टव्य, अरोरा, आर० के०, द मगाज, सनवरशिप एण्ड द भविष्यपुराण, पुराणम् १३ (१), जनवरी १९७१, पृ० ५४।

४६. यादव, बी० एन० एस०, सम आस्पेक्ट्स आफ द चेन्जिग आर्डर इन इण्डिया ड्यूरिंग द शक कुषाण एज, कुषाण स्टडीज, इलाहाबाद, १९६८, पृ० ७६-७८।

४७. चट्टोपाध्याय, सुधाकर, एकेमिनायड्स इन इण्डिया, पृ० ३०-३१।

४८. भण्डारकर महोदय की धारणानुसार मगों ने तृतीय शती ई० में भारत में प्रवेश किया था। वे कनिष्क के राज्यारोहण की तिथि भी तृतीय शताब्दी ई० ही मानते हैं जबकि कनिष्क के राज्यारोहण की तिथि सामान्यतः ७८ ई० स्वीकार की जाती है। द्रष्टव्य, भण्डारकर, कलेक्टेड वर्क्स, पृ० २२०।

४९. स्टीन, एम० ए०, जोरोआस्ट्रियन डिटीज ऑन इन्डो-शक क्वायन्स, बेबीलोनियन एँण्ड ओरियन्टल रिकार्ड, अगस्त १८८७, पृ० १५५-१५६।

५०. बनर्जी, जे० एन०, द डिवलपमेन्ट अफ हिन्दू आइकनोग्राफी, पृ० ४३२-४४२।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



परिलक्षित होता है।[५१] अन्तिम लहर पारसियों के साथ ७वीं शताब्दी ई० में आयी।

## पुरातात्त्विक एवं भौगोलिक साक्ष्य

अभिलेखिक साक्ष्यों से भी मगों के भारत आगमन पर प्रकाश पड़ता है। गोविन्दपुर (गया जिला) के अभिलेख में जिसकी तिथि ११३७-३८ ई० निर्धारित की गयी है, उल्लेख आता है कि मग भारत में साम्ब द्वारा लाए गए थे।[५२] अल्बरूनी (११वीं शताब्दी ई०) भारत में मग पुरोहितों की उपस्थिति का उल्लेख करता है।[५३] घटियाला अभिलेख जिसकी तिथि ८६१ ई० सुनिश्चित की गयी है, प्रतिपादित करता है कि यह एक मग ब्राह्मण द्वारा उत्कीर्ण किया गया था।[५४] हुन्डा अभिलेख जिसकी तिथि ७७४ ई० प्रतिपादित है,[५५] सूर्यद्विजः का उल्लेख करता है जिसका तादात्म्य मगों से स्थापित किया जाता है।[५६] परवर्ती पुराणों में पाँचवीं-छठीं शताब्दी ई० से उनका उल्लेख प्राप्त होने लगता है। वराहमिहिर ने मगों द्वारा सूर्य-मूर्ति एवं मन्दिरों के निर्माण तथा प्रतिष्ठा का निर्देश किया था।[५७] गुप्त एवं कुषाण काल की अनेक सूर्य-मूर्तियों में ईरानी विशेषताएँ परिलक्षित होती हैं जो मगों के भारतीय समाज में उपस्थित होने का समर्थन करती हैं। बसाढ़, भीटा, सुनेत तथा राजघाट से प्राप्त गुप्तकालीन मृण्मूर्तियाँ मग-प्रभाव की अभिव्यंजक हैं।[५८] विम कडफिसेस की मुद्राओं पर अंकित अग्नि-वेदी मग-

---

५१. मगों के सन्दर्भ में प्रारम्भिक साहित्यिक साक्ष्य टॉलमी का है (द्वितीय शताब्दी ई०) द्रष्टव्य, मैक्रेन्डेल, जे० डब्लू०, ऐन्शियन्ट इण्डिया ऐज डिस्क्राइब्ड बाई टॉलमी पृ० १७०।

५२. भण्डारकर, आर० जी०, वैष्णविज्म, शैविज्म, एण्ड माइनर रेलिजियस सिस्टम्स, पृ० १५३।

५३. साँचू, वही, भाग १, पृ० २१।

५४. एपिग्रैफिया इण्डिका, भाग ६, पृ० २७६।

५५. साहनी, दयाराम, एपिग्रैफिया इंडिका, भाग २२, पृ० ६८।

५६. भण्डारकर, आर० जी०, पूर्वोद्धृत, पृ० १५३-५४।

५७. बृहत्संहिता, ६०।१६,

५८. बनर्जी, जे० एन०, द डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी पृ० १९८-९९।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



प्रभाव को द्योतित करती है। पाँचाल से प्राप्त सूर्यमित्र तथा भानुमित्र की मुद्राएँ भी एवंविध प्रभाव की परिचायक हैं।[५६] अवन्ती की एक स्थानीय मुद्रा पर (द्वितीय शती ई० पू०–द्वितीय शती ई०) सूर्य-चित्रांकन है।[६०] साम्बपुराण में भी सूर्य की पताका का उल्लेख आता है[६१] जिससे मग-परम्परा से प्रभावित सौर-सम्प्रदाय के अस्तित्व पर प्रकाश पड़ता है।[६२] वराहमिहिर (छठीं शती ई०) ने भी अवन्ती में स्थित सौर-सम्प्रदाय पर मग-प्रभाव का उल्लेख किया है।[६३] इससे यह निष्कर्ष स्थापित होता है कि द्वितीय शताब्दी ई०पू० से द्वितीय शताब्दी ई० के मध्य मध्यभारत में मग-प्रभाव की सत्ता थी। मिश्र तत्त्वों को वाताश्वक की स्थानीय मुद्राओं पर देखा जा सकता है।[६४] अनेक हिन्दू-यूनानी मुद्राओं पर हिलियोस तथा मिथ्र चित्रित किए गए हैं जो यह संकेत करते हैं कि भारत-भूमि पर मगों का प्रभाव ई० पू० तृतीय-द्वितीय में फैल रहा था।[६५]

पश्चिमी पाकिस्तान में हाल के उत्खनन से अखमेनियन स्तरों पर वाल-मबात से सूर्य-पूजा से सम्बद्ध अग्नि-वेदिकाओं के कतिपय नमूने प्राप्त हुए हैं।[६६] प्रतीत होता है कि भारत के इस भाग में मिथ्र धर्म एक जीता-जागता धर्म था।

---

५९. श्रीवास्तव, वी० सी०, सोलर सिम्बल्स ऑन सूर्यमित्र एण्ड भानु मित्र क्वायन्स, जर्नल आफ द न्यूमेसमेटिक सोसाइटी आफ इण्डिया, ३१, १, पृ० ९।

६०. श्रीवास्तव, वी० सी०, द रेलिजयस स्टडी आफ ए सिम्बल ऑन ऐन अवन्ती क्वायन, मेमायर्स, २, बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी, १९६८, पृ० १३३-३६।

६१. साम्बपुराण, ३३।८, ब्रह्मणः पंकजंकार्यं खेव्योमस्मृतोध्वजे।
हंसोजलाधिपस्योक्तोधनदस्यनरोध्वजे ॥

६२. बृहज्जातक, २८।३, इण्डियन हिस्टारिकल, क्वार्टरली, ३ (सितम्बर १९४९), भाग २५, पृ० १७८।

६३. एलेन, कैटलाग आफ इंडियन क्वायन्स इन द ब्रिटिश म्यूजियम, पृ० ७६।

६४. बनर्जी, जे० एन०, द डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी पृ० १३९-४०।

६५. दानी, अहमद हसन, ऐन्शियन्ट पाकिस्तान, भाग ३।

६६. घिरशमन, आर०, ईरान, पृ० १५६।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



ईरानियन धर्म को मग पुरोहितों से कथमपि पृथक् नहीं किया जा सकता। मग पुरोहितों की उपस्थिति में अनुष्ठान सम्पन्न किए जाते थे। इन समस्त साक्ष्यों के परिप्रेक्ष्य में यह कहा जा सकता है कि मग भारत में प्रथम बार पाँचवीं शती ई० पू० में प्रवेश किए। मगों की दूसरी शाखा मौर्योत्तर काल में आयी। ऐसा प्रतीत होता है कि तृतीय शाखा जो जरथ्रुष्टधर्मानुयायी थी, इस्लाम धर्म के प्रचार-प्रसार के फलस्वरूप भारत में छठीं शताब्दी ई० के उपरान्त अर्थात् सातवीं शताब्दी ई० में आयी होगी। ये मग ही बाद में याजक के रूप में प्रसिद्ध हुए।[६७] अखमेनियन अभियान के साथ मगों के आगमन पर भौगोलिक एवं पुरातात्त्विक साक्ष्यों से भी विशेष प्रकाश पड़ता है। भौगोलिक विवरणों से ज्ञात होता है कि अतीत में भारत का ईरान के साथ व्यापारिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक सम्बन्ध था।[६८] इस तथ्य से भी यह मान्यता स्थिर हो जाती है कि मगों ने अखमेनियनों के साथ पश्चिमोत्तर भारत से प्रवेश किया होगा। पाँचवीं-चौथी शताब्दी ई० पू० में अनेक निरन्तर होने वाले अभियानों को स्थगित करने के लिए सौराष्ट्र में तुशाष्प को क्षत्रप नियुक्त किया था।[६९] मग इस क्षेत्र में निरन्तर कियाशील थे, जिसका उल्लेख साम्बपुराण में भी आता है।[७०] अखमेमिनयन साम्राज्य में मग-सम्प्रदाय का विशेष प्रचार-प्रसार था।[७१] पुनश्च, पाँचवीं शताब्दी ई० पू० में मध्य एशिया तथा भारत के घनिष्ट सम्पर्क के सम्बन्ध में पुरातात्त्विक प्रमाण भी

---

६७. साम्बपुराण, ३०।३२,

ब्राह्मणेभ्यस्ततोदत्वाथाजकेभ्यश्चदक्षिणाम् ।

याजक के लिए परवर्ती अध्यायों में भोजक शब्द उल्लिखित है।

६८. जैक्सन, कैम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया भाग १, पृ० ३३१।

हर्जफील्ड ई० ई०, अर्ली हिस्टारिकल कान्टैक्ट्स बिटवीन द ओल्ड ईरानियन इम्पायर एण्ड इण्डिया, एन्टीक, लीडेन, १९४७, पृ० १८०-८४।

६९. मुकर्जी, राधाकुमुद, अशोक, पृ० १६७।

७०. साम्बपुराण, २६।१४,

सन्निध्यंममपूर्वाह्ने उदितेरज्यते जनैः।
कालात्यये च मध्याह्ने सायाह्ने चात्रनित्यशः ॥

७१. घिरशमन, ईरान, पृ० १५६

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



उपलब्ध हैं।[७२] अतः पुराणों में उल्लिखित विवरण कि मग पहले छठीं, पाँचवीं शताब्दी ई० पू० में शाकद्वीप से भारत आए, उपर्युक्त सभी साक्ष्यों से सर्वथा समर्थित होता है।

## भारतीय समाज में मग पुरोहितों का विलय

ईसा की प्राथमिक शताब्दियों में मग पुरोहित प्रायः विशेष सम्मान्य नहीं थे। कारण कि भारत के रूढ़िवादी समाज में किसी भी विदेशी परम्परा को सम्यक् परीक्षणोपरान्त ही मान्यता प्रदान की जाती थी और इसीलिए उस परम्परा को स्थायी एवं लोकप्रिय होने में पर्याप्त समय लग जाता था। अस्तु कुषाणकालीन सूर्य-मूर्तियों से यह प्रकाश पड़ने लगता है कि इस समय तक उन्हें लोकप्रियता प्राप्त होने लगी थी। पूर्व गुप्तकालीन समाज ने भी उनकी लोकप्रियता स्वीकार कर ली थी। गुप्त सम्राट अपनी धार्मिक सहिष्णुता के लिए प्रख्यात ही थे। वे सभी धर्मों के प्रति सदय, सहिष्णु एवं अत्यन्त उदार थे। इस उदार प्रवृत्ति के फलस्वरूप मग-परम्परा को विशेष सम्बल प्राप्त हुआ। छठीं शताब्दी ई० के मध्य में मग भारतीय समाज में इस प्रकार घुल-मिल गए कि उन्हें पृथक् करना कठिन हो गया जिसका वर्णन साम्बपुराण में आता है और उसकी प्राचीनतम तिथि ६०० ई० निर्धारित की गयी है। नेपाल की पाण्डुलिपि में भी यह उल्लेख किया गया है कि मगों को ब्राह्मणों के समान ही महत्व प्रदान किया जाने लगा था।[७३]

मगों ने अपनी प्रचार-प्रसार परम्परा द्वारा सौरधर्म को अत्यन्त समृद्ध एवं लोकप्रिय बनाया। उनकी प्रचारात्मक प्रवृति तथा हिन्द–यूनानी, शक एवं कुषाणों के राजकीय संरक्षण से उन्हें विशेष सफलता प्राप्त हुयी।[७४] सूर्य-मूर्तियों एवं

---

७२. शर्मा, गोवर्द्धन राय, इंडियाज कान्टैक्ट विथ वेस्टर्न एन्ड सेन्ट्रल एशिया विथ स्पेशल रिफरेन्स टू कौसाम्बी, ६०० ई० पू०—५०० ई०।

७३. इंडियन एन्टीक्वेरी, १९११, पृ० १८।

७४. ब्लाच०, जेड० डी० एम० जी०, पृ० ७२३, उनकी धारणा थी कि सूर्य द्वारा कुष्ठ-रोग से मुक्ति का सिद्धान्त परसियन उत्पत्ति का है परन्तु ऋग्वेद एवं अथर्ववेद में कुष्ठ-रोग से मुक्ति का विवरण पहले से ही भारत में विद्यमान है। साम्बपुराण में भी एवंविध विवरण प्राप्त होता है।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



मन्दिरों के निर्माण में भी उनका विशेष योगदान था। इन कृत्यों में स्त्रियों तथा निम्न जातीय लोगों को भी भाग लेने का अवसर प्रदान किया जाता था।[७५] एवंभूत कारकों ने सुनिश्चितरूपेण सौर धर्म को लोकप्रिय बनाया होगा किन्तु मगों की अपनी निजी अस्मिता नहीं रह गयी थी। भारतीय समाज के साथ उनका पूर्ण सामंजस्य स्थापित हो गया था।

## मग एवं भोजक

सूर्योपासक पुरोहितों को मग एवं भोजक इन दो श्रेणियों में विभाजित किया गया है।[७६] साम्बपुराण के आन्तरिक साक्ष्य के आधार पर यह कहा जा सकता है कि मग और भोजक एक थे। अन्तर मात्र इतना था कि मग 'म' अक्षर की पूजा करते थे जबकि भोजक अथवा याजक सूर्य की पूजा धूप तथा दीप के माध्यम से करते थे। यह भी सम्भव है कि भोजक भारतीय परम्परा के पुरोहित रहे हों। दोनों ही सूर्य के सकल एवं निष्कल रूप के उपासक थे। बाद में वे देवलक ब्राह्मण के रूप में भी प्रसिद्ध हो गए।[७७] अशोक के अभिलेख में भी भोजक शब्द का ही उल्लेख आता है किन्तु यह सुस्पष्ट नहीं है कि विवेचित 'भोजक' अभिलेख के भोजक का ही द्योतक था या उसके सर्वथा भिन्न। स्टेटनक्रान ने वह विचार व्यक्त किया है कि भोजक और याजक दो भिन्न प्रकार के पुरोहित थे, क्योंकि उनके अनुसार साम्बपुराण के प्रथम समूह के अध्यायों में 'भोजक' का उल्लेख नहीं आता।[७८] भोजक शब्द मूल रूप में नहीं था। प्रकाशक ने भविष्य पुराण के प्रभाव में आकर भोजक शब्द को समाविष्ट कर दिया। प्रकाशित संस्करण में केवल दो बार भोजक का उल्लेख हुआ है जिसे स्टेटनक्रान अशुद्ध प्रतिपादित करते हैं, क्योंकि यह पाण्डुलिपि में नहीं प्राप्त होता। इन दोनों के भिन्न व्यक्तित्व के पक्ष में यह भी मत उल्लिखित किया गया है कि इनके उत्पत्ति, धार्मिक दृष्टिकोण एवं सामाजिक स्थिति में विशेष भेद है। स्टेटेनक्रान का यह मत औचित्यपूर्ण प्रतीत होता है।

---

७५. हाजरा, स्टडीज, भाग १, पृ० ३०।

७६. वही, पृ० ६७।

७७. महाभारत, अनुशासन पर्व ९०।१०, कुशीलवो देवलकी नक्षत्रैर्यश्च जीवति। इस प्रकार का संकेत मनुस्मृति ३।१६२ में भी प्राप्य है।

७८. स्टेटनक्रान, एच० वान, इंडिश्च सोनिनप्रीस्टेर साम्ब एण्ड देई शाकद्वीपीय ब्राह्मण, सारांश, पृष्ठ २७६-८१।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



## ब्राह्मण एवं क्षत्रियों की स्थिति

इस प्रकार मग पुरोहितों ने भारतीय समाज में अपना महत्वपूर्ण स्थान बना लिया था। ब्राह्मण माने जाने के कारण उन्हें प्रतिष्ठामूलक शीर्षस्थ स्थान प्राप्त था। वे उन सभी विशेषाधिकारों से युक्त हो गए थे जो पूर्व मध्यकालीन ब्राह्मणों को प्राप्त थे। ब्राह्मणों की स्थिति अत्यन्त गौरवपूर्ण तथा सम्मानास्पद थी। जैन एवं बौद्ध मत के तीक्ष्ण प्रहार के उपरान्त भी ब्राह्मणों की स्थिति में कोई अन्तर नहीं आया था। उन्हें समाज में सर्वोच्च स्थान इसलिए नहीं प्राप्त था कि वे वस्तुतः उच्च वर्ण के थे, प्रत्युत वे अपनी तपः शक्ति, पवित्रता तथा बौद्धिक उपलब्धियों के कारण भी सम्यक् समादृत थे।

चातुवर्ण्य-व्यवस्थान्तर्गत वैदिक काल से ही क्षत्रियों को समाज की सुरक्षा का दायित्व प्रदान किया गया था। इस परम्परा के निर्वाह के साथ-साथ पूर्वमध्य-काल में यदा-कदा वे कृषि एवं वाणिज्य में भी सक्रिय थे जो तत्कालीन प्रवृत्तियों की वर्ण विघटनात्मक प्रवृत्ति का ही एक अंग था। इस काल में क्षत्रिय समुदाय में शाखोपशाएँ होने के कारण राजपूतों का प्रादुर्भाव हुआ। उनमें जातीय एवं वंशीय स्वाभिमान का प्राधान्य था। वे महत्वाकांक्षी क्षत्रिय माने जाते थे। 'क्षत्रियो राजा उच्यते' का नियम पूर्व मध्यकाल में प्रचलित था।[७९] उन्हें सम्मान-जनक स्थान प्राप्त था। वे गाय और ब्राह्मण की पूज्य श्रेणी में आते थे।[८०] ब्राह्मणों के समान क्षत्रियों का भी अपमान निषिद्ध था।[८१] उन्हें निर्विघ्न मार्ग प्रदान करने का निर्देश था।[८२] देवता, ब्राह्मण, गुरु, राजा, स्नातक तथा आचार्य के साथ मैथुनवास निषिद्ध था।[८३] ब्राह्मण, गुरु, स्नातक, आचार्य आदि सभी ब्राह्मण समुदाय से सम्बन्वित हैं। इन सभी के साथ राजा (क्षत्रिय) का स्थान-निर्धारण उसकी समस्तरीय प्रतिष्ठा का द्योतक है।

---

७९. शर्मा, आर० एस०, पूर्व मध्यकालीन भारत में सामाजिक परिवर्तन, पृ० १९।

८०. साम्बपुराण, ३६।६१,

ग्रहागावो नरेन्द्राश्चब्राह्मणाश्चविशेषतः।
पूजिताः पूजयन्त्येतेनिदहन्त्यपमानिताः॥

८१. वही, ४४।७, ब्राह्मणक्षत्रियसर्पान्नावमन्येत्।

८२. वही, ४४।७, गोब्राह्मणक्षत्रियबृद्धभारतप्तगर्भिणीदुर्बलेभ्यः पंथा देयः।

८३. वही, ४४।९, न देवद्विजगुरुराजस्नातकाचार्य्यमैथुनवासः।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



## चतुर्व्यूह से साम्ब का निष्कासन

चतुर्व्यूह से साम्ब के निष्कासन द्वारा भी क्षत्रियों की सामाजिक स्थिति पर प्रकाश पड़ता है। महाभारत में वासुदेव को वृष्णि वंश का नायक कहा गया है।[८४] बाद में उनकी अपने परिवार के साथ उपासना होने लगी थी। द्रौपदी के स्वयंवर में संकर्षण, वासुदेव, प्रद्युम्न, साम्ब तथा अनिरुद्ध ने भाग लिया था।[८५] इन्हें पंचवीर की संज्ञा दी गयी है। बाद में चलकर महाभारत काल में ही चतुर्व्यूह की धारणा विकसित हुई। इस व्यूह से साम्ब को निष्कासित कर दिया गया था जिसकी पुष्टि विष्णुधर्मोत्तर पुराण[८६] तथा वैखानसागम[८७] से भी होती है।

उल्लेखनीय है कि पञ्चवीरों की वीर-पूजा प्रधान अवधारणा से साम्ब का निष्कासन क्यों हुआ ? साम्ब भगवान श्रीकृष्ण के द्वारा जाम्बवती से उत्पन्न हुए थे। जाम्बवती शूद्रा थी।[८८] अतः शूद्रा से उत्पन्न साम्ब को कृष्ण के अन्य कुलीन कुमारों के समस्तरीय प्रतिष्ठा-परम्परा प्रधान भागवत धर्म या वैष्णव सम्प्रदाय के लिए सह्य नहीं था। क्षत्रिय राजकुमारों की मर्यादा को सर्वोच्च रखने हेतु साम्ब को पञ्चवीरों से निष्कासित कर दिया जिनकी पुर्नप्रतिष्ठा बृहत्संहिता के समय में हुयी। बृहत्संहिता में साम्ब को देव के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है। ध्यातव्य है कि पञ्चवीरों से साम्ब का शूद्रा पुत्र होने के कारण निष्कासन जहाँ भागवत धर्म की चातुर्वर्ण्य-व्यवस्था की पारस्परिक मर्यादा की ओर संकेत करता है, वहीं यह साम्ब की पुर्नप्रतिष्ठा द्वारा सामाजिक गतिशीलता पर भी प्रकाश डालता है। परिणामस्वरूप साम्बपुराण जो बृहत्संहिता के बाद का प्रणयन है, में भी सामाजिक गतिशीलता के उल्लेख प्राप्त होते हैं।

## वैश्य एवं शूद्रों की स्थिति

चातुर्वर्ण्य-व्यवस्था के अन्तर्गत वैश्यों का कर्तव्य था कृषि एवं वाणिज्य का नियन्त्रण। इस क्षेत्र में पूर्व मध्यकाल तक उनका अधिकार पर्याप्त सीमा तक

---

८४. महाभारत, ५।२०।४७।

८५. वही, १।१७७।१६ तथा ६।६१।६६।

८६. विष्णुधर्मोत्तर पुराण (विष्णुधर्मोत्तरपुराणम् के रूप में सन्दर्भित)।

८७. वैखानसागम (संस्करण शास्त्री, के० एस०), त्रिवेन्द्रम, १६३५, पटल ५६।

८८. हरिवंशपुराण, २।१०३।६, जाम्बवत्याः सुतो जज्ञे साम्बः समितिशोभनः।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



समाप्त हो चुका था कारण कि ब्राह्मण तथा क्षत्रिय भी कृषि एवं वाणिज्य के क्षेत्र में क्रियाशील हो गए थे। उल्लेखनीय है कि सामन्तवादी प्रवृत्ति के अभ्युदय के फलस्वरूप वैश्यों की स्थिति अपेक्षाकृत क्षीण हुयी। अल्बरूनी ने प्रतिपादित किया है कि ग्यारहवीं शताब्दी ई० में वैश्यों एवं शूद्रों में कोई विशेष अन्तर नहीं रह गया था।[८९] प्रतीत होता है कि वैश्यों की सामाजिक तथा आर्थिक स्थिति काफी शोचनीय हो गयी थी। वर्ण-व्यवस्था में उपर्युक्त परिवर्तन न केवल भू-सम्पन्न कुलीन वर्ग के अभ्युदय के कारण प्रत्युत वैश्य एवं शूद्र के स्थान परिवर्तन के फलस्वरूप भी हुआ।[९०] गुप्तोत्तर युग में शूद्रों की स्थिति सम्मानजनक हो गयी थी। अब वे दास, कारीगर, खेतिहर, मजदूर ही नहीं नही प्रत्युत कृषक भी थे।[९१] एवंविध परिवर्तन कतिपय मध्यकालीन ग्रन्थों में भी परिलक्षित होता है। स्कन्दपुराण में शूद्र को अन्नद और गृहस्थ के रूप में उल्लिखित किया गया है।[९२] हेमचन्द्र कृत अभिधानचिन्तामणि में कृषि-कर्म करने वाले को कुटुम्बी अभिधा प्रदान की गयी है।[९३]

छठीं शताब्दी ई० तक वैश्यों का कृषक के रूप में अभिज्ञान लुप्त हो गया। स्कन्दपुराण में व्यापारियों के पतन की भविष्यवाणी प्राप्त होती है।[९४] ग्यारहवीं शताब्दी ई० तक उन्हें धर्मविधि तथा कानून से शूद्र समझा जाने लगा। अल्बरूनी के अनुसार वेद-पाठ के अपराध में वैश्य एवं शुद्र की जीभ काट ली जाती थी।[९५] वणिक के रूप में पाँचवीं शताब्दी ई० तक उनकी स्थिति सम्मानजनक थी। किन्तु गुप्तोत्तर युग में व्यापारिक ह्रास एवं अवरुद्ध अर्थ-व्यवस्था के कारण वैश्यों की स्थिति अच्छी नहीं रह गयी थी।

वैश्यों की स्थिति जहाँ ह्रासोन्मुखी हो रही थी, वहीं शूद्रों की स्थिति में अपेक्षाकृत सुधार हो रहा था। सत् एवं असत् शूद्रों की धारणा भी जन्म ले चुकी

---

८९. अल्बरूनीज इण्डिया, एडवार्ड सी साचू, १।१०१।

९०. शर्मा, आर०एस०, पूर्व मध्यकालीन भारत में सामाजिक परिवर्तन, पृ० १५।

९१. वाटर्स, टी०, आन युवानच्वाङ्स ट्रैवेल्स इन इण्डिया, सं० डेविड्स रायस और बुशेल, एस० डब्ल्यू (लन्दन, १९०४-५), १, १६८।

९२. स्कन्दपुराण, नगर खण्ड, ६।२४२।३१।

९३. ब्रह्म खण्ड, २।३९।२९१।९२।

९४. शर्मा, पूर्वोद्धृत, पृ० १६।

९५. बंगालौर इतिहास (आदि पर्व), कलकत्ता १९४८, पृ० ३४३।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



थी। उन्हें भोजयान तथा अभोजयान की कोटि में विभाजित किया गया था।[९६] चाण्डाल नगर या बस्ती से बाहर रहते थे। उन्हें निर्वासित शूद्र कहा जाता था। जो शूद्र पिता एवं ब्राह्मण माता से प्रादुर्भूत होते थे, उन्हें चाण्डाल माना जाता था।[९७] आर्थिक स्तर-विन्यास के आधार पर उन्हें आश्रित एवं अनाश्रित श्रेणी में भी विभाजित किया गया था। शूद्रों के लिए कुछ व्यवसाय निर्धारित कर दिये गए थे। वैश्यों को दस्तकार के रूप में उल्लिखित किया गया है। इससे न केवल वैश्यों के पतन प्रत्युत शूद्रों के सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति में सुधार का बोध होता है। मेधा तिथि ने शूद्रों को व्यक्तिगत साम्पत्तिक अधिकार दिए जाने का उल्लेख किया है।[९८] कुछ अभिलेखों में समृद्ध तेल-विक्रेताओं द्वारा मन्दिरों में अनुदान देने का उल्लेख है।[९९] पूर्व मध्यकाल में शूद्र मन्दिर निर्माण में भी भाग लेते थे।[१००] शूद्रों को पूर्त्त धर्मान्तर्गत सौर मन्दिर-निर्माण का अधिकार प्रदान किया गया था।[१०१] परम्परागत धारणा के आधार पर यह कहा जाता है कि शूद्रों को वेद, स्मृति तथा पुराणों के अध्ययन का अधिकार नहीं था।[१०२] किन्तु बाद में उन्हें ये अधिकार प्रदान कर दिए गए। मेधातिथि ने उन्हें शैक्षिक अधिकार यहाँ तक कि व्याकरण के शिक्षक होने की पूर्ण स्वतन्त्रता प्रदान कर दिया था।[१०३] संस्कारों के क्षेत्र में भी उन्हें पाक-यज्ञ तथा पञ्च महायज्ञ के सम्पादन की स्वतन्त्रता प्रदान की गयी। वृहद्धर्म में उल्लेख आता है कि शूद्रों को व्याकरण, शास्त्र तथा पुराणों के अध्ययन-अध्यापन की स्वतन्त्रता प्राप्त थी।[१०४] वे तान्त्रिक गायत्री मन्त्र का जाप कर सकते थे।

---

९६. काणे, पी० वी०, हिस्ट्री आफ धर्मशास्त्र, भाग २, पृ० १२२।
९७. वही, पृ० १२१।
९८. मेधातिथि, मनु, सं० झा, जी० एन०, पृ० २३१।
९९. याव, बी०एन०एस०, सोसाइटी एण्ड कल्चर इन नार्दर्न इण्डिया, पृ० ४३।
१००. शर्मा, दशरथ, राजस्थान थ्रू दि एजेज, पृ० २३१।
१०१. काणे, पी० वी०, हिस्ट्री आफ धर्मशास्त्र, भाग २, पृ० १५७, इस तथ्य को मग-परम्परा के सूर्य-सम्प्रदाय की लोकप्रियता का कारण प्रतिपादित किया जा सकता है।
१०२. यादव, बी० एन० एस०, सोसाइटी एण्ड कल्चर इन नार्दर्न इण्डिया।
१०३. मेधातिथि, मुन, ३।१५६।
१०४. हाजरा, स्टडीज इन द उपपुराणाज, भाग २, पृष्ठ ४४६।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



शूद्रों की स्थिति में यद्यपि पर्याप्त सुधार इस काल तक हो चुका था तथापि उनकी दशा पूर्णतया अप्रतिबन्धित नहीं थी। वे पूर्णरूपेण स्वतन्त्र नहीं थे। उनके ऊपर अब भी अनेक धार्मिक और सामाजिक प्रतिबन्ध थे। पूर्व मध्य-काल में तन्त्रोपासना का पर्याप्त प्रचार-प्रसार था। तान्त्रिक उपासना पद्धति में जाति-भेद का प्राधान्य नहीं था। तान्त्रिक उपासना को सरल एवं लोकप्रिय बनाने हेतु शूद्रों को इस परम्परा में महत्वपूर्ण स्थान दिया गया था। परन्तु यत्र-तत्र शूद्रों की धार्मिक एवं सामाजिक स्थिति पर प्रतिबन्ध के उल्लेख प्राप्त होते हैं। साम्बपुराण में उल्लेख आता है कि शूद्रों के साथ वार्तालाप नहीं करना चाहिए।[१०५] यह भी उल्लेख प्राप्त होता है कि अन्य वर्ण के लोग साधना के योग्य थे।[१०६]

यद्यपि शूद्रों को पूर्त धर्मान्तर्गत कतिपय अधिकार प्रदान कर दिये गए थे तथापि उन्हें बन्धन से मुक्ति पाने के निमित्त चतुर्थ आश्रम में प्रवेश की अनुमति नहीं थी।[१०७] इससे शूद्रों की हीन सामाजिक स्थिति का पता चलता है। ग्यारहवीं शताब्दी ई० में अल्बरूनी ने उल्लेख किया है कि यह दशा न केवल शूद्रों की प्रत्युत वैश्यों की भी थी।[१०८] साम्बपुराण में भी वैश्यों की स्थिति अपेक्षाकृत ह्रासोन्मुखी हो गयी थी। प्रायः ब्राह्मण और क्षत्रियों का एक साथ उल्लेख प्राप्त होता है तथा वैश्यों को सर्वदा शूद्रों के साथ ही उल्लिखित किया गया है।[१०९] इस परम्परा के पीछे तत्कालीन सामाजिक परिवर्तनों की विशिष्ट भूमिका थी। यशस्तिलक के अनुसार ब्राह्मणों ने शूद्रों को धार्मिक कृत्यों के अयोग्य बताया था।[११०] फिर भी बारहवीं शताब्दी के अन्तिम चरण तक शूद्रों को मोक्षाधिकार

१०५. साम्बपुराण, ६८।२३, न संभाषते वै शूद्रंप्रमादान्मंत्र साधकः।

१०६. वही, ६३।१३,

राजा विप्रस्तथावर्णाः साधनार्थं प्रतिष्ठिताः।

१०७. काणे, पी० वी०, हिस्ट्री आफ धर्मशास्त्र, भाग २, पृ० १६३।

१०८. साँचू, भाग १, पृ० १०४।

१०९. साम्बपुराण २६।३१,

वैश्यास्तु मानसा ज्ञेयाः शूद्रास्तेषां तु मन्दगाः।

११०. यशस्तिलक, पुस्तक ७, भाग ४३, हान्डीकी, के० के०, यशस्तिलक और भारतीय संस्कृति, पृ० ३३१।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



प्राप्त हो गया था।[१११] पूर्व मध्यकाल में बहुत से तान्त्रिक शिक्षक मछुवे, चर्मकार, रजक, स्वर्णकार तथा दर्जी (शूद्र) इत्यादि होते थे।[११२] एवंविध परिवर्तन नवीन धार्मिक जागृति हेतु विशिष्टतम सामाजिक कारक के रूप में सुदृढ़ पृष्ठभूमि का अन्वेषण कर रहा था।

## वर्ण-विभाजन तथा उप जातियों का प्रादुर्भाव

पूर्वमध्यकाल में वर्ण-विभाजन के फलस्वरूप अनेक जातियों तथा जन-जातियों का प्रादुर्भाव हुआ। दसवीं शताब्दी के एक बंगाल ताम्रपत्र में वृहत-छत्तिवन्ना नामक गांव का विवरण है जिसमें छत्तीस वर्णों के लोग रहते थे।[११३] विभाजन की प्रक्रिया ब्राह्मणों में सर्वाधिक प्राप्त होती है। विभाजन-प्रक्रिया में महत्वपूर्ण कारण दृढ़ स्थानीयता की भावना का विकास था। भूमिदान पत्रों में ब्राह्मणों के गोत्र तथा पूर्वज आदि का विवरण उपलब्ध होता है। अधिकांश भूदान-पत्रों में ब्राह्मणों के मूल निवास स्थान का सगर्व वर्णन है।[११४] गुप्तकाल से ब्राह्मणों का परिचय उनके द्वारा प्रस्तुत किया जाने लगा। उत्तरगुप्त-कालीन अभिलेखों में ब्राह्मणों के मातृभूमि की प्रशंसाएं प्राप्त होती हैं। ग्यारहवीं शताब्दी के एक अभिलेख में सिद्धल गांव को सर्वोत्तम ग्राम आर्यावर्त्त-भूषण तथा राढ़-लक्ष्मी उल्लिखित किया गया है।[११५]

परवर्त्ती मध्यकाल तक पश्चिम बंगाल में राढ़ के ब्राह्मण उप जातियों में बँट गए।[११६] इनमें से अनेक का विवरण तेरहवीं-चौदहवीं शताब्दियों के अभिलेखों में समुपलब्ध होता है। चौदहवीं शताब्दी में हरिसिंहदेव ने मैथिल ब्राह्मणों को १८० मूलों ( मूल स्थानों ) में विभाजित किया। इन मूलों की संख्या अन्ततः एक हजार

---

११. यादव, बी० एन० एस०, सोसाइटी एण्ड कल्चर इन नार्दर्न इंडिया, पृ० ४५

११२. पद्मपुराण, ५।३२।५०

११३. नियोगी, पुष्पा, ब्राह्मणिकसेटेलमेंन्ट्स इन डिफरेन्ट सब डिवीजन्स आफ बंगाल, पृष्ठ ३३

११४. शर्मा, आर० एस०, पूर्व मध्यकालीन भारत में सामाजिक परिवर्तन, पृष्ठ १८

११५. इंस्क्रिप्सन्स आफ बंगाल, ३, सं० ४ पद ३

११६. नियोगी, पुष्पा, पूर्वोद्धृत पृष्ठ ३३

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



तक हो गयी।[११७] इसी समय कायस्थ जाति का प्रादुर्भाव तथा उनका अनेक उपजातियों में विभाजन हुआ। बिहार के करण कायस्थों की भी मैथिलों की तरह मूल-सूची प्राप्त होती है। अम्बष्ठ कायस्थ के शताधिक उपजातियों का उल्लेख प्राप्त होता है।[११८] प्रतीत होता है कि ग्राम-धर्म की अवधारणा ब्राह्मणों, कायस्थों तथा अन्य शिक्षित हिन्दुओं में विशेष रूप से प्रचलित थी।

क्षत्रिय समुदाय में जाति-बहुगुणन विशेषतः राजपूतों के अभ्युदय के कारण हुआ। अभिलेखों में शासक राजवंशों को सूर्यवंशी और चन्द्रवंशी मानने की परम्परा लगभग सातवीं शताब्दी ई० से प्रारम्भ हुयी। ब्राह्मण वंशावली-लेखकों ने चालुक्य, चन्देल तथा पाल आदि स्थानीय जातियों को सम्माननीय क्षत्रियवंश का गौरव प्रदान किया। बैक्ट्रियाई, यूनानी, शक, पार्थियन आदि को द्वितीय श्रेणी के क्षत्रियों में परिगणित किया गया। क्षत्रियों में शाखोपशाखाएं पांचवीं-छठीं शताब्दी से विकसित होने लगीं, जब राजपूत के रूप में हूण एवं गुर्जर जैसी मध्य एशियाई जातियाँ इनकी श्रृंखला में समाविष्ट हुयीं। प्रतीत होता है कि सोंलकीं (चालुक्य) परमार, चाहमान, तोमर तथा गाहड़वाल आदि का मूल भी मध्य एशियाई ही था।[११९] परन्तु यह धारणा कि सभी विदेशियों को क्षत्रिय तथा राजपूत के रूप में स्वीकार कर लिया गया, समीचीन नहीं है। कारण कि कालक्रम में गुर्जरों का बहुगुणन ब्राह्मण, बनिया, कुम्हार, सोनार और यहां तक कि चरवाहा तथा कृषक (कुनबी) के रूप में भी हो गया जिन्हें लोग शूद्रों में परिगणित करते थे।[१२०]

पूर्वमध्यकाल में जातियों की सर्वाधिक संख्या शूद्रों में थी। मनु के विधि-ग्रंथ में इकसठ जातियाँ उल्लिखित हैं।[१२१] यादव प्रकाश की वैजयन्ती और हेमचन्द्र की अभिधान चिन्तामणि में शूद्र जाति की संख्या में विशेष वृद्धि का उल्लेख प्राप्त होता

११७. शर्मा, आर० एस०, पूर्व मध्यकालीन भारत में सामाजिक परिवर्तन, पृष्ठ १८

११८. शर्मा, आर० एस०, वही, पृष्ठ १९

११९. शर्मा, आर० एस०, वही, पृष्ठ २०

१२०. भण्डारकर, डी० आर०, फारेन इलीमेन्ट्स इन द पापुलेशन, जर्नल आफ द ऐन्शियन्ट हिस्ट्री १,३०१-३

१२१. मनुस्मृति, १०।१-५१

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



है।[१२२] विष्णुधर्मोत्तर पुराण में प्रतिपादित किया गया है कि वैश्य स्त्रियों और निम्नश्रेणी के पुरुषों के सम्पर्क से सहस्त्रों मिश्रित जातियों का प्रादुर्भाव हुआ यद्यपि इनके नाम नहीं उल्लिखित किए गए हैं।[१२३] ब्राह्मणीकृत राजाओं की विजय से शूद्र जाति की संख्या बहुगुणित हुयी। मध्यभारत के एक मध्यकालीन अभिलेख में शबर, पुलिन्द तथा भिल्ल आदि के दमन का उल्लेख है।[१२४] ८६१ ई० के एक अभिलेख में उल्लिखित है कि प्रतिहार राजा कक्कुक ने जोधपुर के पास आभीरों के एक गाँव पर अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिया था[१२५] इस प्रक्रिया में सफलता ब्राह्मणों की उत्कृष्ट भौतिक संस्कृति के कारण प्राप्त हुयी होगी। कारण कि ब्राह्मणों ने निरक्षर लोगों को न केवल नई लिपि, भाषा तथा कर्मकाण्ड ही प्रत्युत उन्हें हल से खेती, नई फसल, मौसम तथा पशुवन की रक्षा आदि से भी सुपरिचित कराया होगा।[१२६] जन जाति अनेक वर्णों और जातियों में विभाजित हो गयी। आभीर बाह्मण. आभीर क्षत्रिय, आभीर वैश्य, आभीर महाशूद्र तथा सोनार आदि के सम्बन्ध में भी उल्लेख प्राप्त होता है।[१२७] प्रतीत होता है कि अधिकांश आभीर शूद्र के रूप में ही मान्यता प्राप्त किए होंगे। ये अपने जातिधर्म के प्रति पूर्णतः श्रद्धालु थे। आभीर, अंगारी, अम्बष्ठ, भिल्ल, चाण्डाल तथा कोंच आदि को ब्रह्मवैवर्त्तपुराण तथा अन्य ग्रन्थों में मिश्रित जाति के रूप में उल्लिखित किया गया।[१२८] ब्राह्मणिक व्यवस्था में उन्हें सत् या असत् शूद्र के रूप में स्थान प्रदान किया गया।

मध्यकालीन विधि-ग्रन्थों में अछूतों का उल्लेख गोभक्षक के रूप में हुआ है। इन्हें अंत्यज, वराट, वरुड, भिल्ल, चाण्डाल, नट तथा रजक आदि के रूप मे

---

१२२. शर्मा, आर० एस०, पूर्वोद्धृत, पृष्ठ २०

१२३. विष्णुधर्मोत्तर पुराण, २।८१।२

१२४. एपिग्रैफिया इण्डिका, १, सं० ३८, २ पद २२

१२५. सूर्यवंशी, भगवान सिंह, द आभीराज-देयर हिस्ट्री एण्ड कल्चर, पृष्ठ ३९-४०।

१२६. शर्मा, आर० एस०, पूर्वोद्धृत, पृष्ठ २१।

१२७. भण्डारकर, डी० आर०, फारेन इलीमेन्ट्स इन द पापुलेशन, पृष्ठ २८६-८८.

१२८. ब्रह्मवैवर्त्तपुराण, ब्रह्म खण्ड, १०।१७।१३६

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



प्रतिपादित किया गया है।[१२९] अल्बरूनी ने तन्तुवाय, चाण्डाल, डोम तथा हाँड़ी आदि का वर्णन किया है।[१३०] ब्राह्मणीकरण के कारण अछूतों की संख्या में पर्याप्त वृद्धि हुयी। इस काल में कुछ विशेष प्रकार के कारीगर तथा शिकारी अछूत बना दिये गए। कुछ शूद्र सामाजिक ढाँचे में वैश्यों का स्थान ग्रहण कर चुके थे। शूद्रों के बहुगुणन के पीछे शिल्प जाति का आधार क्रियाशील था। गुप्तोत्तर युग में व्यापार एवं वाणिज्य का ह्रास होने लगा था। व्यापारियों एवं शिल्पियों का अपना वर्ग बन गया था। इन संघों का प्रधान कार्य गलत काम करने वालों को अपमानित, निन्दित और जाति-बहिष्कृत भी करना था।[१३१] नापित, मोदक, तांबूलिक, मालाकार, सूत्रकार तथा चित्रकार आदि जिन्हें मध्यकालीन ग्रन्थों में मिश्रित जातियों के रूप में उल्लिखित किया गया है, विभिन्न शिल्पों से उत्पन्न होने वाली जातियाँ हैं।[१३२] प्राचीन ग्रन्थों में शिल्पीग्राम का वर्णन आता है। कुमारपद्रक[१३] नामक ग्रामों में कुम्हार जाति के लोग रहते रहे होंगे।

जातियों के विस्तार में एक अन्य महत्वपूर्ण कारक क्रियाशील था और वह था उच्च और निम्न वर्णों के बीच उसका धार्मिक सम्बन्ध। धार्मिक सम्प्रदायों के भेदोपभेद के कारण जातिकों में बहुगुणन हुआ। शैव, वैष्णव, बौद्ध और जैन धर्म अनेक सम्प्रदायों में विभाजित हो गए। धार्मिक सम्प्रदायों का मूल उद्देश्य जाति मूलक वैषम्य को समाप्त करना था परन्तु यह एक ऐतिहासिक आश्चर्य ही कहा जायगा कि जाति-व्यवस्था ने उन्हें ही आत्मसात कर लिया। परन्तु सामाजिक और आर्थिक ढांचे में मौलिक परिवर्तन के बिना ऐसा होना स्वाभाविक ही था, क्योंकि आद्य सुधारकों के सुधारवादी धर्मोत्साह तथा आदर्शवाद के जीवन्त शक्ति का पुष्ट आधार नहीं था।[१३४]

---

१२९. उपाध्याय, वासुदेव, सोसिओ-रेलिजस कंडीशन आफ नार्थ इण्डिया (७००-१२०० ई०), पृष्ठ ९२

१३०. सांचू, वही १।१०१–१०२

१३१. मजूमदार, बी० पी०, सोशियो इकोनामिक हिस्ट्री आफ नार्दर्न इण्डिया (१०३०-११९४ ई०), पृष्ठ २११

१३२. ब्रह्मवैवर्त्तपुराण, ब्रह्म खण्ड, १०।१७।१३६

१३३. पुष्पा, नियोगी, ब्रह्माणिक सेटेलमेन्ट्स इन डिफरेन्ट सब डिवीजनन्स आफ बंगाल, पृष्ठ ५३

१३४. शर्मा, आर० एस०, पूर्वोद्धृत, पृष्ठ २५

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



## स्त्री-दशा

पूर्वमध्यकाल वस्तुतः भारतीय समाज में संक्रमण का काल था। अन्य महत्वपूर्ण परिवर्त्तनों के साथ स्त्रियों की सामाजिक स्थिति में भी उल्लेखनीय परिवर्तन हुआ। गुप्तकालीन स्त्रियोंकी सम्माननीय दशा को गुप्तोत्तरयुग में सामाजिक आघात- प्रतिघात सहने पड़े। उनका नैतिक एवं आध्यात्मिक महत्व क्षीण हो रहा था।[१३५] अब उनका उपनयन संस्कार भी नहीं होता था। परन्तु दैवीशक्ति से समीकृत किये जाने के कारण तांत्रिक उपासना में उन्हे विशेष प्रतिष्ठा प्राप्त थी।[१३६] तांत्रिक उपासना काफी सरल एवं लोकप्रिय थी। अतः स्त्रियों की प्रतिष्ठा को इसके द्वारा पर्याप्त बल प्राप्त हुआ। साम्बपुराण में एक विशिष्ट प्रकार की तांत्रिक गायत्री का उल्लेख है जिसे शूद्र एवं स्त्रियां भी जप सकती थीं।[१३७] साम्बपुराण भी पूर्वमध्यकालीन ग्रन्थ होने के कारण एक ओर जहां स्त्रियों की निम्नश्रेणी के विषय में उल्लेख करता है, वहीं उनकी सामाजिक सुरक्षा का भी आग्रह करता है। दुर्भाग्यशालिनी स्त्री को यज्ञ में हवन करने से निषिद्ध किया गया है। ऐसा करनेवाली स्त्री नरकगामिनी होती है।[१३८] दुर्भाग्यशालिनी स्त्री से तात्पर्य विधवा स्त्री से लिया जा सकता है जो स्पष्टतया विधवाओं की हीन दशा का द्योतक है। इसके साथ-साथ स्त्रियों की प्रस्थिति उनके वर्णानुसार भी निर्धारित होती थी। साधना के लिए शुद्ध वर्ण एवं विशुद्ध वंशोद्भवा स्त्री को अधिक उपयुक्त बताया गया है।[१३९] शुद्ध वर्णीया स्त्रियों के उल्लेख से उनके सामाजिक स्तर

---

१३५. प्रबोध, अङ्क १, भाग २७

१३६. यादव, बी० एन० एस०, सोसाइटी एण्ड कल्चर इन नार्दर्न इण्डिया, पृ० ७१।

१३७. साम्बपुराण, ३९।३३, ॐ परायविद्महेतेजोरूपायधीमहितन्नस्तेजःप्रचोदयात् ॥ तुलनीय महानिर्वाण तंत्र का ब्रह्मगायत्री मंत्र ३।१०९-१११ परमेश्वराय विद्महे परतत्त्वायधीमहि, तन्नोब्रह्मा प्रचोदयात्।

१३८. वही ३७।३४, नैवाकल्याणीयुवतिर्नाल्पविद्योनबालिशः ।
होतास्यादग्निहोत्रस्यनार्त्तोनासंस्कृतस्तथा ॥

१३९. वही, ६६।५,
जितेन्द्रियः प्रशांतात्माकांष्ठमौनीसुयन्त्रितः ।
शुद्धा वर्णां समादाय पत्नीं शुद्धकुलात्मजाम् ॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



विन्यास का भी द्योतन होता है।[१४०] इसके अतिरिक्त स्त्रियों में वेश्याओं का भी उल्लेख आया है जिन्हें सामाजिक दृष्टिकोण से अच्छा नहीं समझा जाता था।[१४१] वेश्यापुत्रों को शूद्र की श्रेणी में रखा गया है। इसी के साथ साम्बपुराण में ऐसे भी स्थल उपलब्ध होते हैं जो स्त्रियों की सुरक्षात्मक स्थिति का संकेत करते हैं। स्त्रियों को शारीरिक दण्ड न देने का उल्लेख किया गया है।[१४२] उनके साथ झगड़ा न करने का भी निर्देश दिया गया है।[१४३] कन्या, बांझ, अज्ञात, गर्भिणी, अंगहीन, वृद्धा, सन्यासिनी, प्रतिव्रता, अपने से ऊंचे वर्ण वाली' अत्यन्त निकृष्ट वर्ण वाली, पीलिया रोग वाली, कोढ़िन, योगिनी, चकत्तों के दाग वाली अपने ही कुल में उत्पन्न हुई ज्ञाति सम्बन्धहीन और मिर्गी के रोगवाली लड़की आदि को अगम्य स्त्रियां निरुपित करते हुए उनके साथ सम्बन्ध स्थापित न करने को कहा गया है।[१४४] यह भी उल्लेख आता है कि राजा की स्त्री, अपनी सखी, वैद्य की स्त्री, कन्या, वृद्धा, मृत्यु की शरण में गई हुई ब्राह्मणी और बन्ध्या इनसे सम्बन्ध न करे।[१४५] रजस्वला स्त्री से संभोग न करने को भी निर्दिष्ट किया है।[१४६]

उल्लेखनीय है कि उपर्युक्त विवरण स्त्रियों की द्वैध प्रस्थिति को स्पष्ट करता है। इसमें कुछ स्त्रियों को सम्बन्ध के योग्य बताया गया है तथा कुछ को

---

१४०. मजूमदार, आर० सी०, द स्ट्रगिल फार इम्पायर, पृ० ४७८-७९

१४१. साम्बपुराण, ४४।६,

क्रुद्धमंदातुरप्रेष्यगणिका विद्वज्जुगुप्सितस्तेन तक्षक वार्धुषिक कदर्य दीक्षितम्।

१४२. वही, ४४।६, इच्छामपि कुर्वता दारारक्ष्याः।

क्रुद्धोपिनहन्यात्‌अन्यत्रभार्यापुत्रदास-दासीशिष्यभातृभ्यः॥

१४३. वही, ४४।९, गोब्राह्मणस्त्रीषु न शूरः स्यात्।

१४४. वही, ४४।९,

कन्याबन्धकीमज्ञातांगर्भिणीव्यंगांवृद्धांप्रव्रजितां

परिव्रर्तांवर्णोत्कृष्टानिकृष्टवर्णा पिंगलं कुष्ठिनीं योगिनींचित्रिणीं।

स्वकुशलजांज्ञातिसम्बन्धहीनामपस्माणीं च वर्जयेत्॥

१४५. वही, ४४।६, राजसखिवैद्यबालवृद्धमृत्युशरणागत।

सम्बन्धिब्राह्मणीतदन्येपांस्त्रयंवन्ध्यां च वर्जयेत्॥

१४६. वही, ४४।६, पत्नीं रजस्वलांनाभिगच्छेत्।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



नहीं। यह स्त्रियों के स्तर विन्यास का द्योतक है। साथ ही साथ ऐसा निर्देश करके स्त्रियों की सामाजिक सुरक्षा तथा उनके संरक्षण को भी प्रमुखता प्रदान की गई है। उक्त निष्कर्ष साम्बपुराण के इस वर्णन से भी सम्पुष्ट होता है कि सुखपूर्वक सोई हुई, भोजन करती हुई, जम्हाई लेती हुई, रति-क्रीड़ा में लिप्त एवं नग्न स्त्री को नहीं देखना चाहिए।[१४७] ध्यातव्य है कि यह द्वैधमूलक स्थिति तत्कालीन सामाजिक परिवेश की ही परिणाम थी। साम्बपुराण में सच्चे साधक के लिए स्त्री को बंधक स्वरूप बताया गया है जिसमें शूद्रा स्त्री तथा पराई स्त्री को भी सम्मिलित किया गया है।[१४८] यह तथ्य भी स्त्रियों की हीन स्थिति का द्योतक है। क्षेमेन्द्र के अनुसार कट्टरपन्थी भारतीय समाज ने स्त्रियों के प्रति तान्त्रिक उपासना की मान्यता नहीं प्रदान किया था।[१४९] स्त्रियों के साम्पत्तिक अधिकार अभी सुरक्षित थे जिसे 'स्त्री-धन' भी कहा गया है।[१५०] पारिवारिक सम्पत्ति में भी उन्हें विशिष्टांश प्राप्त था।[१५१]

## समाज में प्रचलित भोजन, वस्त्र, वाद्य एवं अन्य उपकरण

साम्बपुराण में शाकाहारी एवं मांसाहारी दोनों प्रकार के भोजन की प्रमुखता वाले समाज का उल्लेख प्राप्त होता है। खिचड़ी, खीर, दूध, मधु, घी, लड्डू, मालपुआ और बरा आदि भोज्य पदार्थों के द्वारा पूजा का विवरण मिलता

---

१४७. वही, ४४।६, नतामीक्षतेत्सुखा ीनाममंक्षुवतीं स्पष्ट-
मैथुनांजृम्भमाणांचपरस्त्रियंच नग्नाम्।

१४८. वही, ६४।२९, असन्देहात्तुसिद्धयन्तिबुद्धयायोगाः सुमन्त्रिणः।
स्त्रीलोलास्तुनसिद्धयन्तितथाचार्थविचिन्तकाः ॥

६४।३०, स्त्रीभार्याशूद्रभार्यायां तथान्या सु च संरता।
क्रियालोपी चानुरोधी व्यसनी तृष्णयाहतः ॥

१४९. यादव, बी० एन० एस०, सोसाइटी एण्ड कल्चर इन नार्दर्न इण्डिया, पृ० ७२।

१५०. जॉली, हिस्ट्री आफ हिन्दू ला, पार्टीशन इनहेरिटेन्स एण्ड एडाप्शन, पृ० २२८।

१५१. यादव, बी० एन० एस०, पूर्वोद्धृत, पृ० ७२।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



है।[१५२] परन्तु ध्यातव्य है कि खिचड़ी, खीर, मांस जैसे निर्मित आहार तथा बरा अपने लिए न बनाने का निर्देश दिया गया है। दही और सत्तू भी भोज्य पदार्थ थे।[१५३] मांसाहारी भोजन भी लोकप्रिय था। स्थल-स्थल पर मांसाहारी भोजन के विषय में विवरण प्राप्त होता है। बकरी, गाय, मयूर, सूखे हुए तथा बासी मांस खाने को वर्जित किया गया है।[१५४] खिचड़ी, खीर, मालपुआ और मांस मिश्रित चावल को देव-बलि के लिए सर्वाधिक उपयुक्त बताया गया है।[१५५] वारुण व्रत में मत्स्य, आग्नेयव्रत में कपिलागाय का घृत, वायुसम्बन्धी व्रत में वायु-भक्षण तथा सफेद बकरी के दुग्ध-पान का विधान था।[१५६]

वस्त्र सामान्य प्रकृति के होते थे। सफेद वस्त्रों के पहनने पर विशेष बल दिया जाता था।[१५७] रेशम, कपास तथा ऊनी सूत के वस्त्रों को लोग धारण करते थे।[१५८] जीर्ण, मलिन तथा अन्य द्वारा धारण किये वस्त्रों को लोग नहीं धारण

---

१५२. साम्बपुराण, ३२।४५, ४६,

ततस्तदुपहारार्थं संभारैप्रावसमाहृतैः ।
मोदकोल्लापि कायूपशष्कुलीभूतशीषकैः ॥

कृसरैः पायसोन्मिश्रैः सर्वदिक्षुक्षिपेद्बलिंग ।
तर्पयेत्क्षीरमध्वाज्यैः स्तूयात्स्तोत्रैश्चभास्करम् ॥

१५३. वही, ४४।७, दध्यनुपानंशुक्लाशनेन कार्यम् ।

१५४. वही, ४४।७, अजागव्यमायूरशुष्कपर्युषितमांसं च ।

१५५. वही, ३८।५१,

कृसरैः पायसापूपैः पललोमिश्रितोदनैः ।
बलिंदत्वातुसूर्यायसर्वकाममवाप्नुयात् ॥

१५६. वही, ६१।५९,

मत्स्यादयश्चदद्यंतेव्रतेवारुणसंज्ञके ।
कपिलंघृतमाग्नेयेभुंजंव्रतमाचरेत ॥

१५७. वही, ४४।९, शुक्लवस्त्रधारीस्यात् ।

१५८. वही, ५५।१६, विवृत्तंग्रन्थिरहितंक्षौमंकार्पासमाविकम् ॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj, Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



करते थे।[१५९] चाँदी, स्वर्ण तथा ताम्र के आभूषण पहने जाते थे। मुकुट, वलय, अंगद, हार, अव्यंग, पदबन्ध, कटिभूषण आदि के उल्लेख से ज्ञात होता है कि ये जन सामान्य के प्रिय आभूषण थे।[१६०] उपानत[१६१] का प्रयोग ईरानियन[१६२] प्रभाव को प्रकट करता है। दाढ़ी, केश एवं नखों के बड़ा न होने का उल्लेख है। पताका, तोरण, ध्वज एवं मालादि से अलंकरण किया जाता था। मनोरंजन हेतु तरह-तरह के वाद्य एवं नृत्य प्रचलित थे। मादक तथा मधुर संगीत लोकप्रिय थे। एकतारा, वीणा, वेणु, दुर्दर, नगाड़ा, ढोल, मृदंग, तथासा, देवदुन्दुभी तथा शंख आदि विभिन्न वाद्ययंत्र प्रयुक्त होते थे।[१६३] गन्धर्वों के गीत और अप्सराओं के नृत्यों को मोहक बताया गया है जो नृत्य एवं गीत की लोकप्रियता का द्योतक है।[१६४] द्यूत-क्रीड़ा को स्पष्ट रूप से निषिद्ध किया गया है।[१६५] उस समय परशु, तलवार, शूल, शक्ति, गदा, चक्र, धनुष और फावड़े इत्यादि अस्त्रों का भी प्रयोग होता

---

१५९. वही, ४४।७,

न च जीर्णमलिनंसतिसंभवे अन्य-
शय्यामन्यद्रव्ययामन्यदेयतार्चायाम् ।

१६०. वही, ४६।३६,

कुण्डलांगदभूषाढ्यैर्गायमानोप्सरोगणैः ।

१६१. वही, ४४।१०,

सूर्यब्रिमित्तछत्रोपानहौ च दद्यात् ।

१६२. वही, ४४।१०,

श्मश्रुकेशनखान्नदीर्धान्नविभ्रयात् ।

१६३. वही, १२।२२,

प्रावाद्यन्तस्ततस्तंत्रीवीणावेण्वादिदर्दुरा ।
पणवाः पुष्कराश्चैव मृदङ्ग पटहास्तथा ।।

वही, १२।२३,

देवदुन्दुभयः शंखाः शतशोऽथ सहस्रशः ।

१६४. वही, १२।२४,

गायद्भिश्चैवगन्धर्वनृत्यद्भश्चसरोगणैः ।
तूर्य्यवादित्रघोषैश्चसर्वकोलाहलीकृताम् ।।

१६५. वही, ४४।९, न द्यूतं क्रीडेत् ।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



था।[१६६] नाप की कोई वैज्ञानिक प्रणाली प्रचलित नहीं थी। कई स्थलों पर नाप की इकाई के रूप में अंगुल का प्रयोग प्राप्त होता है।[१६७] एक स्थल पर रत्नि[१६८] का भी प्रयोग सम्भवतः लम्बाई की नाप के लिए हुआ है।

**प्रचलित संस्कार**

समाज में प्रचलित संस्कारों का विधान प्राच्य-परम्परानुसार ही सम्मान्य एवं श्रद्धेय था। संस्कारों का प्रयोजन वस्तुतः सामाजिक पवित्रता को अक्षुण्ण रखने तथा संस्कृति के संरक्षण हेतु था। षोडश संस्कारों का नियमित विधान था परन्तु गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नामकरण, अन्नप्राशन, चूड़ाकर्म तथा उपनयन संस्कार का विशिष्ट महत्व था।[१६९] साम्बपुराण में उल्लिखित वर्ण एवं जाति की प्रस्थिति से ज्ञात होता है कि अनुलोम एवं प्रतिलोम दोनों प्रकार के विवाह प्रचलित थे। यज्ञादि भी समय-समय पर सम्पादित किये जाते थे। विनाशकारी एवं जादू-टोने के कार्यों में सिद्धि-हेतु यज्ञादि का आश्रय लिया जाता था।[१७०] श्राद्ध में पितरों के लिए और पूजा में देवी के लिए मांस की बलि का

---

१६६. वही १५।२३,

शूलंशक्तिंगदांचक्रशरासनपरश्वधान् ।
दैवतेभ्योददौकृत्वाविश्वकर्म्मामहामतिः ।।

१६७. वही, ५५।६५-६६,

चतुर्विंशतिरगुष्ठ परिमाणंस्त्रुवस्यतु ।
वृत्तंतस्यापिनिर्दिष्टंखातद्यंगुलेमव च ।

१६८. वही, ३६।१२,

रत्निमात्रमधः खातांसमंतात्पंचविशकम् ।
कृत्वातुसुसमंदेशप्रागुदवाप्लपवनंशुभम् ।।

१६९. वही, ५५।६१-६२

गर्भाधानंपंसवनंसीमन्तोन्नयनंतथा ।
जातकर्मतथानामकरणाचाशनक्रियाम् ।।
चूडापनयनंस्नानंपानीयन्चक्रतूनपि ।
कुशेनाङ्पराभृगुज्यंकुप्यादिवसहृदा ।।

द्रष्टव्य, पाण्डेय, राजबली, हिन्दू संस्कार; महानिर्वाण-तंत्र, अ० ८।

१७०. वही, ५६।३,

तथाचादिपदैस्तत्वंप्रतिलोमोविधीयते ।
योनिमुख्यानियानिस्युः सर्वसृष्टिप्रवृत्तये ।।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



विधान था।[१७१] नैतिक जीवन पर विशेष बल दिया जाता था। पौराणिक धर्म-साधना की एक अभिन्न कड़ी इसकी नीतिपरक विचारधारा थी। गाय, राजा तथा ब्राह्मण के प्रति सम्मान भारतीय जीवन का एक अभिन्न विश्वास बन गया था।[१७२]

**आर्थिक अवस्था**

पूर्वमध्यकालीन भारत में हुए सामाजिक परिवर्तनों के पीछे कतिपय आर्थिक कारक क्रियाशील रहे हैं। इस काल की अर्थव्यवस्था का महत्वपूर्ण परिवर्तन भू-राजस्व तथा भूमि का विस्तृत पैमाने पर हस्तान्तरण है। इसकी सम्पुष्टि ताम्रपत्रों पर अभिलिखित अधिकार-पत्रों से होती है। ग्यारहवीं तथा बारहवीं शताब्दियों में विशेषतः उत्तर भारत के राजपूत राज्यों में ग्राम और भू-राजस्व प्रदान किए गए।[१७३] सामन्तोपसामन्तीकरण के कारण आर्थिक इकाइयों का आकार बहुत छोटा हो गया था।

इस काल में वाणिज्य पतनोन्मुख हुआ। सिक्कों की अल्पता से इस तथ्य पर प्रभूत प्रकाश पड़ता है। गुप्तकाल में स्वर्ण की बहुतायत थी। गुप्तोत्तर युग में स्वर्ण का ह्रास हो गया। ६५० ई० से १००० ई० तक स्वर्ण-मुद्राओं का अभाव ही परिलक्षित होता है।[१७४] साम्बपुराण भी पूर्वमध्यकालीन ह्रासोन्मुखी अर्थ-व्यवस्था का परिचय देता है। कई स्थलों पर स्वर्णदान को विशेष महत्त्वपूर्ण प्रतिपादित किया गया है।[१७५] सुनिश्चित रूपेण उस समय स्वर्णाभाव रहा होगा। इसीलिए स्वर्णदान का विशेष माहात्म्य उल्लिखित है।

---

१७१. मार्कण्डेयपुराण, २९।२, ८९।२०, द्रष्टव्य, देसाई, एन० वाई०, ऐन्शियन्ट इण्डियन सोसाइटी, रेलिजन एण्ड माइथालाजी ऐज डिपिक्टेड इन दि मार्कण्डेयपुराण, पृ० ५५।

१७२. मजूमदार, आर० सी०, द स्ट्रगिल फार इम्पायर, पृ० ४९३, विज्ञानेश्वर, अपरार्क, याज्ञवल्क्य स्मृति, ३।२६४-२६५, प्रायश्चित प्रकरण, २८।३३, तुलनीय साम्बपुराण ४४।७-१०।

१७३. शर्मा, आर० एस०, इण्डियन फ्यूडॉलिज्म, (लगभग ३००-१२०० ई०) अ० ५।

१७४. शर्मा, आर०एस०, पूर्वमध्यकालीन भारत में सामाजिक परिवर्तन, पृ०५।

१७५. साम्बपुराण, ३९।३०, हेमपात्रंप्रगृह्यादौ रौप्यमौदुम्बरं क्रमात्॥ ३०।२, ३२।३७, ३३।६, ३४।२३, ४७।६ तथा ४७.९ में भी स्वर्ण का उल्लेख प्राप्त होता है।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



सारांशतः यह वर्णन किया जा सकता है कि साम्बपुराण में एक पूर्ण विकसित समाज का विवेचन प्राप्त होता है। आश्रम-व्यवस्था महत्वपूर्ण मानी जाती थी। चातुर्वर्ण्यधारणा भी समाज में प्रचलित थी। ब्राह्मणों को सम्मान दिया जाता था। पुरोहित परम्परा में आने के कारण शाकद्वीपीय मग ब्राह्मण विशेष सम्मान्य थे। क्षत्रियों का स्थान ब्राह्मणों के पश्चात् आता था। पूर्व-मध्यकाल में अनेक समाजार्थिक परिवर्तन हो रहे थे। जातियों के प्रादुर्भाव के बाद उसमें भी शाखोपशाखाएँ विकसित हो रही थीं। वैश्यों का पतन तथा शूद्रों का उत्थान हो रहा था। शूद्रों के उत्थान में धार्मिक कारण अधिक सहायक थे। स्त्रियों के धार्मिक तथा साम्पत्तिक अधिकार अभी सुरक्षित थे। स्वर्ण-मुद्राओं के अभाव से पूर्व-मध्यकालीन ह्रासोन्मुखी अर्थ-व्यवस्था का परिचय प्राप्त होता है।

—: ० :—

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS

४

# साम्बपुराण में धार्मिक एवं दार्शनिक विवेचन

भारतीय जीवन-विधा में धर्म का अत्यन्त महत्वमय स्थान रहा है। भारतीय मनीषा ने धर्म की विशिष्ट उपादेयता प्रतिपादित कर उसके प्रश्रय से यहाँ के सामाजिक जीवन को संयमशील एवं अनुशासनपरक बनाने में विशिष्ट भूमिका का निर्वाह किया था। निखिल विश्व-सस्कृति का यदि अनुशीलन-परिशीलन किया जाय तो सुनिश्चितरूपेण यह प्रतिपादित किया जा सकता है कि धर्म ने विश्व-समाज की जीवन-पद्धति को सर्वतोभावेन प्रभावित किया था। प्राचीन विश्व की समुन्नत संस्कृति एवं मिस्री जीवन के समस्त पक्ष धर्मानुप्राणित थे। ऐतिहासिक प्रवृत्तियों के आलोक में निस्सन्देह यह स्थापित किया जा सकता है कि अतीत में धर्म ने सामाजिक एकता की स्थापना में महत्वमयी भूमिका निभायी थी।

सौर धर्म ने भी भारतीय जीवन को सर्वविध प्रभावित कर रखा था। सौरोपासना भारतीय जीवन की प्रमुखतम विशेषता थी। सूर्य-पूजा विभिन्न कालों में विविध उपहारों एवं विधियों से की जाती थी। वैदिक काल में अन्य देवों की भाँति सौरोपासना स्तुति गीतियों तथा उपहारों से की जाती थी।[१] स्तुतिगीतियों के माध्यम से देवर्चन वैदिक उपासना पद्धति की मूलभूत विशेषता थी। ऋग्वेद एवं समग्र उत्तर वैदिक वाङ्मय में स्तुतिगीतिपरक अन्तरङ्ग साक्ष्य सहज प्राप्य हैं। आश्विन की आराधना स्तुति-गीतियों तथा उपहारों से होती थी।[२] सौरोपासना भी मित्र, वरुण,[३] आदित्य,[४] सवितृ[५] तथा पूषनादि[६] अभिधानान्तर्गत पूर्व वर्णित विधि से होती थी। ब्राह्मण ग्रन्थों, श्रौत सूत्रों तथा गृह सूत्रों में सौरो-

१. विल्सन, एच० एच०, ऋग्वेद, भाग १, पृ० २१-२३
२. वही, १।११७।१
३. वही, १।१५१।३
४. वही, २।२७।१
५. वही, ३।६२।३
६. वही, ६।६२।५

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



पासना से सम्बन्धित स्तुतिगीतियाँ उपलब्ध होती हैं।[७] जाप द्वारा भी सौरोपासना होने लगी थी।[८] सन्ध्योपासना, सन्ध्या, अथवा सन्ध्यावन्दन से तत्कालीन सूर्य-पूजा पद्धति पर प्रकाश पड़ता है। सन्ध्यावन्दन, गायत्री-जप,[९] अर्घ्य,[१०] आचमन,[११] प्राणायाम,[१२] मार्जन,[१३] अघमर्षण[१४] तथा उपस्थान[१५] के द्वारा सम्पादित होता था। सन्ध्या का विधान हर गृहस्थ द्विज के लिए था। पूजा में सोमरस अर्पित किया जाता था।[१६] वैदिक उपासनान्तर्गत अन्य देवताओं के लिए भी सोमरस की व्यवस्था थी।

तैत्तिरीय संहिता में सूर्य-नमस्कार तथा ध्यान को महत्ता दी गयी है। सूर्य के अश्व भी नमस्कार-योग्य उल्लिखित किए गए हैं।[१७] परवर्त्ती हिन्दू-धर्म में सूर्य-नमस्कार को एक विशिष्ट पूजा-पद्धति की मान्यता प्रदान की गयी है। ऋग्वेद में भी एवंविध उल्लेख प्राप्त होता है।[१८] उपनिषदों में सौरोपासना-सन्दर्भ में ध्यान केन्द्रित करने के अनेक संकेत उपलब्ध होते हैं।[१९]

७. शाङ्खायन गृह्य सूत्र, २।५, ३।८।७, ३।६।१।३, ५।५, ६।४।१, ६।६।१, इस प्रकार के सन्दर्भ सभी गृह्य सूत्रों में प्राप्त होते हैं—द्रष्टव्य, काणे, पी० वी०, हिस्ट्री आफ धर्मशास्त्र, भाग २, पृ० ३१५-२१।

८. गौतमधर्मसूत्र, १।१२।५५

९. आपस्तम्ब धर्मसूत्र, १।१।९२३, २६।१४, २७।१, गौतम धर्म सूत्र, १।१२। ५५, बौधायन धर्मसूत्र, २।५।८।११, २०।१०।१७-१४

१०. वही, ५।३२

११. आपस्तम्ब धर्मसूत्र, १।५।१५, २।११, १६।१।६, गौतमधर्म सूत्र, १।३५-४०

१२. गौतमधर्म सूत्र, १।५०, बौधायन धर्मसूत्र ४।१।३०, वशिष्ठ धर्मसूत्र २५।१३

१३. वशिष्ठ गृह्य सूत्र २।४।२

१४. बौधायन धर्मसूत्र ३।५।१-७

१५. वही, २।४।७।११

१६. ऋग्वेद, १०।१७०।१

१७. वही, १।११५।३

१८. वही, १।११५।३, नमस्यन्तो दिव आ पृष्ठमस्थुः परिद्यावापृथ्वीयन्ति सद्यः।

१९. छान्दोग्य उपनिषद्, ३।९

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



ऋग्वैदिक समाज में सूर्य-पूजा प्रत्येक घर में होती थी। सामूहिक पूजा तथा मन्दिर के उल्लेख ऋग्वेद में अप्राप्य हैं।[२०] ऋग्वेद में सूर्य-पूजा के तीन समय का उल्लेख किया गया है। आश्विन की पूजा दिन में तीन बार की जाती थी।[२१] सवितृ की प्रातः तथा सायं पूजा का विधान था।[२२] विष्णु की पूजा का भी त्रैकालिक विधान था।[२३]

ऐतरेय ब्राह्मण में सूर्य-पूजा का वर्णन अग्निष्टोम-क्रम में किया गया है। स्तुतिगीति को सूर्य की गति के अनुसार प्रस्तुत करने का विधान था।[२४] औपनिषदिक वाङ्मय में सूर्य-पूजा के स्पष्ट उल्लेख प्राप्त होते हैं। कौषीतकि उपनिषद् में त्रैकालिक सूर्य-वन्दन का प्रतिपादन किया गया है।[२५] छान्दोग्य उपनिषद् सूर्य-पूजा सात बार किए जाने का वर्णन करता है। प्रतीत होता है कि सन्ध्या पहले प्रातः एवं सायं वेला में होती थी; किन्तु बाद में मध्याह्न में भी होने लगी।[२६]

महाकाव्य काल में सूर्य-पूजा क्रमागत वैदिक मान्यताओं के आधार पर ही होती थी। विदेशी प्रभाववश कुछ परिवर्तन भी परिलक्षित होते हैं। महाभारत तथा रामायण में सूर्य-नमस्कार का उल्लेख प्राप्त होता है।[२७] महाकाव्यकालीन

---

२०. ऋग्वेद के ७।३६।१ में महत्वपूर्ण उल्लेख प्राप्त होता है जहाँ पर सूर्य के सम्बन्ध में कहा गया है कि प्रार्थनाएँ यज्ञशाला से प्रारम्भ होती थीं—

प्र ब्रह्मैतु सदनात् तस्य वि रश्मिभिः ससृजे सूर्यो गाः।

२१. वही, १।३४।१

२२. वही, १।३५।१०, ४।५४।१

२३. वही, १।१५६।५

२४. ऐतरेय ब्राह्मण, ३।४४

२५. कोषीतकि उपनिषद् २।७,

अथातः सर्वजितः कौषीतकेस्त्रीण्युपासनानि भवन्ति।

२६. गोभिल गृह्यसूत्र, ४।६।२ अत्रि, अपरार्क द्वारा उद्धरित पृ० ४९, त्रैकालिक सन्ध्या का विधान प्रतिपादित है।

२७. महाभारत, ३।३।६८, रामायण, ६।१०५।१६-२०

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



जप वैदिक जप से भिन्न था। महाकाव्यकालीनजप-विधि में देवता के नाम पर विशेष बल दिया जाता था जबकि वैदिक पूजा-पद्धति के अन्तर्गत प्रशंसापरक एवं प्रार्थनात्मक स्तुतिगीतियों की पुनरावृत्ति की जाती थी। इस काल में सौरोपासना पुष्प, माला तथा दीप आदि से होने लगी थी।[२८] सूर्य-प्रतिमा का स्पष्ट उल्लेख इन महाकाव्यों में अप्राप्य है।[२९] परन्तु उनके मानवीकरण के संक्षिप्त साक्ष्यप्राप्त होने लगते हैं।[३०]

प्रारम्भिक पुराणों में प्रतिपादित सौरोपासना वैदिक पद्धति का ही पुर्नस्मरण कराती है। पौराणिक समाज सूर्य की वैदिक धारणा का ही पोषक था।[३१] भक्ति, पूजा तथा सम्प्रदायवाद भी इस समय के सौरोपासना की प्रमुख विशेषताएं थीं जो वैदिक पूजा-परम्परा में अप्राप्य हैं। सूर्य-पूजा गायत्री मन्त्र से की जाती थी।[३२] सन्ध्योपासना भी प्रचलित थी।[३३] मूलतः प्रारम्भिक पौराणिक समाज वैदिक सूर्य-पूजा पद्धति का ही सपोषक था।

परवर्ती पुराणों में विवेचित सौरोपासना वैदिक परम्परा, ईरानियन प्रभाव, तन्त्रोपासना, शैवदर्शन तथा विविध मान्यताओं के मञ्जुल समन्वय की परिणाम थी। साम्बपुराण में सूर्य-पूजा प्रसङ्ग में इन तथ्यों का विस्तृत विवेचन प्राप्त होता है। प्रतिपाद्य पुराण के प्रथम समूह के अध्यायों में सूर्य की प्रतिमा-पूजा का विवरण उल्लिखित है।[३४] सूर्य-मन्दिर भी तत्कालीन जन सामान्य की श्रद्धा के केन्द्र थे।[३५] साम्बपुराण में वर्णित समाज में स्वर्ण, रजत, ताम्र, मृत्तिका, शिला, वृक्ष

---

२८. महाभारत, ३।३।३३, पुष्पोपहारैरबलिभिर्चियत्वा दिवाकरम्।

२९. हापकिन्स, ई० डब्लू०, एपिक माइथालाजी, पृ० ७२-७३

३०. श्रीवास्तव, वी० सी०, सन वरशिप इन ऐन्शियन्ट इण्डिया, पृ० १९९

३१. साम्बपुराण में बताया गया है कि प्रारम्भ में सूर्य की पूजा उसके नैसर्गिक रूप में होती थी—२९।२, न पुराप्रतिमाह्यासीत्पूज्यतेमंडलेरविः।
यथैतन्मंडलव्योम्निस्थीयतेसवितुस्तदा ॥

३२. विष्णुपुराण, २।८।५३

३३. वही, २।८।५८

३४. साम्बपुराण, २९।४, सर्वलोकहितार्थाय सूर्यस्य पुरुषाकृतिः।
प्रतिमा स्थापनं चैव प्रमाणं च विधानतः॥

३५. वही, ३२।६०, यः प्रासादंरचयति पुमान्देवतानांप्रयत्नात्कीर्तिः।
तस्य भवति विपुला वंशमार्गानुजाता॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



तथा चित्र की निर्मित सप्तविध मूर्तियों द्वारा सूर्य-पूजा का विधान था।[३६] शास्त्र समर्थित कर्मकाण्ड से मूर्ति की प्राण-प्रतिष्ठा करने का विधान था।[३७] समुद्र, गङ्गा, यमुना, सरस्वती, चन्द्रभागा, सिन्धु, पुष्कर तथा पर्वत से निसृत प्रपात से श्रेष्ठ जल, स्वर्ण, रजत, ताम्र तथा मृत्तिका के कलशों में लाकर, तदनन्तर मणि-रत्नों, बीजौषधियों, सुगन्धित मालाओं, स्थल पर उगने वाले कमलों, चन्दन, अनेक प्रकार के सुगन्ध, ब्राह्मी, सुवर्चला, नागरमोथा, विष्णुक्रान्ता, शतावरी, दूब शंख-पुष्पी, प्रियंगु, नील, बरगद, पीपल और शिरीष के पुष्पों तथा कुशों से युक्त, अक्षत, स्वर्ण तथा समस्त औषधियों के साथ गायत्री मन्त्र से सूर्य को स्नान कराना चाहिए।[३८] इसके पश्चात् पके ईंटों की वेदी को कुशयुक्त करके, मूर्ति को वेदी

---

३६. वही, ३०।२, कांचनीराजतीताम्रीपार्थिवाशैलजा तथा।
वार्क्षी वालेख्या गायन्ति मूर्ति स्थानानि सप्त वै॥

३७. वही ३२।१, अतोधिवासनं कार्यविधिदृष्टेन कर्मणा।

देवता-प्रतिष्ठा पुराणों तथा निबन्धों में सम्यकरूपेण विवेचित है, मत्स्यपुराण, २६४।६६, अग्निपुराण, ६० तथा ६६, रघुनन्दनदेवप्रतिष्ठा-तत्व, पृ० ५०५, धर्मसिन्धु, पृ० ३३३।३३४, वैखानसस्मार्तसूत्र, ४।१०-१५, ध्यातव्य है कि मत्स्यपुराण में प्राणप्रतिष्ठा का उल्लेख नहीं किया गया है।

३८. वही, ३२।१, सामुद्रंतोयमाहृत्यजाह्नव्ययामुनं तथा।
३२।२, सारस्वतंजलंपुण्यंचान्द्रभागंससैंधवम्।
पौष्करंचजलंश्रेष्ठंगिरिप्रस्रवणोदकम्॥
३२।३, अन्यद्वाशुचियत्तोयंनदीनदतडागजम्।
यथाशक्त्यातदाहृत्यकलशैः कांचनादिभिः॥
३२।४, ततस्तुमणिरत्नानिसर्वबीजौषधीस्तथा।
सुगंधानि च माल्यानिस्थलजान्यंबुजानिच॥
३२।५, चंदनानिचमुख्यानिगंधांश्चविविधान्वरान्।
ब्राह्मीसुवर्चलांमुस्तांविष्णुक्रांतांशतावरीम्॥
३२।६, दूर्वाचशंखपुष्पींचप्रियंगूरजनींवचाम्।
संभृत्यैतांस्तुसंभारान्नानाकर्मविधानवित्॥
३२।७, वटाश्वत्थशिरीक्षाणांपल्लवैः कुशसंयुतैः।
कलशोपरिविन्यस्तैर्देयंस्नानोदकरवैः॥
३२।८, कांचनैराजतैस्ताम्रैर्मन्मयैः कलशैस्तथा।
साक्षतैस्सहिरण्यैश्चसर्वौषधिसमन्वितैः॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



पर स्थापित कर, वस्त्रादि से सज्जित कर उपवास द्वारा प्रतिमा का अभिषेक करना चाहिए।[३९] मस्तक पर समस्त औषधियाँ एवं आमलक चढ़ाकर जल छिड़कते हुए ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश द्वारा सूर्य देवता के अभिषेक का आवाहन करना चाहिए।[४०] अभिषेक-क्रिया में मरुत, लोकपाल, विद्याधरगण, नागगण, हिमाचल, हैमकूटादि पर्वत, आकाशचारी सप्तर्षि,[४१] अष्टमङ्गल,[४२] तथा वसुगण[४३] का भी आवाहन करना चाहिए।[४४] तत्पश्चात् वर्धनिका उठाकर 'आचमस्व' कहकर सूर्य के सामने तीस बार जल गिराना चाहिए।[४५] पवित्र स्थान में लेप करके, चावल

---

३९. वही, ३२।९, १०, गायत्रीपरिपूतैस्तैरष्टभिः स्नापयेद्रविम् ।
कुशोत्तरांस्ततः कृत्वावेदीपक्वेष्टकामयीम् ।।
तस्यांवेद्यांसमारोप्य परिधाप्य च वाससी ।
प्रतिमांभिषचेतसोपवासः प्रयत्नतः ।।

४०. वही, ३२।११-१२,
मूर्ध्निसर्वौषधीन्दत्वातथैवामलकानिच ।
वाक्यमुच्चारयेदेवमुपर्यवकिरन्जलम् ।।
देवास्त्वामभिषिचंतुब्रह्माविष्णुशिवादयः ।
व्योमगंगांबुपूर्णेनआद्येनकलशेनतु ।।

४१. हाजरा, आर० सी०, स्टडीज, भाग १, पृ० ६, सप्तर्षि में मारीच, अत्रि. अंगिरस, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु और वशिष्ठ उल्लिखित हैं।

४२. आप्टे, संस्कृत हिन्दी कोश, पृ० १३४, कुछ विद्वान् मृगराज, वृषनाग, कलश, व्यजन, वैजयन्ती, भेरी, एवं दीप तथा कुछ ब्राह्मण, गऊ, हुताशन, हिरण्य, सर्पि, आदित्य, जल और राजा को अष्टमङ्गल में परिगणित करते हैं।

४३. वसु एक प्रकार के देवता है जिनकी संख्या आठ बतायी गयी है, आप, ध्रुव, सोम, धर या ध्रुव अनिल, अनल, प्रत्यूष एवं प्रभास।

४४. साम्बपुराण, ३२।१४, विद्याध्राअभिषिचतुलोकपलाः समागताः।
३२।१६, हिमवन्देमकूटाद्याभिषिचतुपर्वताः ।
३२।१८, सप्तमेनाभिषिचंतुऋषयः सप्तखेचराः ।
वसवश्चाभिषिचंतुकलेशनाष्टमेषते ।।
३२।१९, अष्टमंगलयुक्तेनदेवदेवनमोस्तुते ।
स्नापयित्वाक्रमेणैवस्नानकर्मविधानवित् ।।

४५. वही, ३२।२०, ततोवार्द्धनिकांगृह्यवारिधारांसमुत्सृजेत ।
त्रिशँत्तुपुरतोऽर्कस्यआचमनस्वेतिचब्रुवन् ।।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



और पंचराग से चौक देकर, पताका, तोरण, ध्वज, माला तथा पुष्प राशि से अलंकृत करके सूर्य की मधुपर्क, पुष्पदीप तथा धूपादि से उपासना करके भक्तिपूर्वक अर्घ्य देना चाहिए। तदनन्तर बछड़े सहित पवित्र लाल गाय को दान में देना चाहिए।[४६]

मन्त्र से पवित्र वस्त्र तथा यज्ञोपवीत धारण करके चन्दन, अगरु, कुंकुम आदि सभी गन्धों से उपलिप्त करके, सुगन्धित पुष्पांलंकारों से अलंकृत करके भक्तिपूर्वक धूप और नैवेद्य देना चाहिए।[४७] अग्नि जलाकर विधिपूर्वक शान्त करना चाहिए। अभिषिक्त प्रतिमा को मणिरत्न से प्रतिष्ठापित करना चाहिए।[४८] प्रतिमा को देवमन्दिर से ईशानादिग्भाग में अधिवासित करके कुशों से व्याप्त, श्रेष्ठ वस्त्र से आच्छादित भाग में पूर्व की ओर सिरहाना बनाकर श्वेत वस्त्रों से ढकी हुई पवित्र शय्या बनानी चाहिए।[४९] उस शय्या पर महाश्वेता को सुलाकर दाहिने

---

४६. वही, ३२।२१, ततोन्यत्रशुचौदेशुत्तुसंपृष्टयोपलेपने ।
तांडुलैः पंचरागैश्चआलिखेच्चतुरंतिकम् ॥
३२।२२, पताकातोरणच्छत्रध्वजमालाद्यलंकृतम् ।
विचित्रस्रागवितानाढ्यंप्रकीर्णंकुसुमोत्करम् ॥
३२।२३, तस्यमध्येकुशास्तीर्णेमूर्तिस्थाप्यविवस्वतः ।
तस्यचावाहनं कृत्वादद्यादर्घंप्रयत्नतः ॥
३२।२४, सुवर्णमधुपर्कादिसुमनोदीपधूपकैः ।
देवायस्पर्शयेद्गां चसवत्सांरोहिणींशुभाम् ॥

४७. वही, ३२।२६, यज्ञोपवीतमावेष्टयबद्धोत्संगस्तथैव च ।
सर्वगन्धैः समालिप्यचन्दनागुरुकुंकुमैः ॥
३२।२७, अलंकारैरलंकृत्यकुसुमैश्चसुगन्धिभिः ।
मालाभिश्चविचित्राभिराबद्धाभिरनेकशः ॥
३२।२८, ततो धूपंचनैवेद्यंदद्याश्चैवप्रयत्नतः ।

४८. वही, ३२।२९, प्रज्वाल्याग्निंविधानेन कुर्याच्छान्तिविधानतः ।
ततः स्वलंकृतांस्नातांमणिरत्नविभूषिताम् ।
कृतां प्रतिष्ठितांरक्षां प्रतिमामधिवासयेत ॥

४९. वही, ३२।३०, देवागारात्तथैशानेदिग्भागेदिव्यसंज्ञिते ।
कृत्वाकुशपरिस्तीर्णेवरास्तरणसंवृते ॥
३२।३१, पूर्वशीर्षाशुभांशय्याशुक्लांशुक्लांवरोत्तमाम् ।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



भाग में निक्षुभा को, बायें भाग में राज्ञी को तथा दण्ड और पिंगल को पैर की ओर स्थापित करना चाहिए।[५०] रात्रिभर भक्तिपूर्वक सूर्य का स्तवन करना चाहिए। तदुपरान्त दीनों, अन्धों, एवं कृपणों को अन्न से सन्तुष्ट करना चाहिए।[५१] इसके पश्चात् पिण्डिका को गर्भगृह में रखकर उसके खोखले भाग में स्वर्णनिर्मित सात घोड़ों वाला रथ स्थापित करके समस्त बीजौषधियों को दान देकर, अर्घ्य प्रदान कर, शंखदुन्दुभि के घोष से और हाथ में अक्षत लेकर पुण्याह वाचन करके, मन्दिर की प्रदक्षिणा करके, शुभलग्न दिन में, सूर्यानुकूल क्षण में सूर्य-मूर्ति की स्थापना करनी चाहिए।[५२]

सविधि अग्नि को स्थापित करके, स्वाहा के उच्चारण से होम करते हुए सामग्रियों तथा स्तुतियों द्वारा सूर्य को सन्तुष्ट करना चाहिए। लड्डू, मालपुआ, बरा, खिचड़ी, खीर, दूध, मधु और घी को समस्त दिशाओं में डालकर स्तोत्रों

---

५०. वही, ३२।३२, तस्यांसंवेशयेत्सम्यङ्महाश्वेतामुदीरिताम्।
निक्षुभांदक्षिणेपार्श्वेवामेराज्ञीचस्थापयेत् ॥

३२।३३, दंडपिङ्गलकौचास्यस्थाप्यौपादप्रवेशितौ ।
तस्यांशंखसितायांतुशय्यांयांप्रतिमारवेः ॥

५१. वही, ३२।३४, कुर्याज्जागरणंतत्रसूर्यभक्तिसमन्वितैः ।
३२।३५, दीनान्धकृपणादींश्चसर्वान्निनेनतोषयेत् ॥

५२. वही, ३२।३७, ततोगर्भगृहस्थानमध्येकृत्वातुपिण्डिकाम् ।
अवटेचास्यसौवर्णन्यस्यसप्तहयंरथम् ॥

३२।३८, सर्वबीजौषधीश्चैवतत्रदत्वाविधानवित् ।
दत्वार्धस्थापयेत्तज्ञयजमानः सहायवान् ॥

३२।३९, शंखदुन्दुभिनिर्घोषैर्हस्ताधारासहोक्षतैः ।
कृत्वा पुण्याह शब्देन स्वालयस्य प्रदक्षिणाम् ॥

३३।४०, शुभेलग्नेदिने ऋक्षे, पूर्वाह्णे भानवेक्षणे।
मुहूर्ते च शुभं मानोः प्रतिमां स्थापयेद्बुधः ॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



द्वारा स्तवन करते हुए दूध, मधु और घृत द्वारा तर्पण करना चाहिए।[५३] विप्रों तथा याजकों को दक्षिणा देनी चाहिए।[५४]

पूजा-विधि में ध्वजारोपण का भी महत्व प्रतिपादित किया गया है। जो जिस देवता का वाहन है वही उसका ध्वजा भी बताया गया है।[५५] उस ध्वज को विधिपूर्वक समस्त बीजौषधियों से स्नान कराकर, मङ्गलसूत्र से सज्जित कर वेदी पर कलशों के साथ रखकर वहीं सोना चाहिए।[५६] नाना प्रकार के पुष्पों तथा धूप से ध्वज को निवेदित करके वाद्यों की उठती हुयी ध्वनि से युक्त शुभलग्न, दिन और नक्षत्र में मन्दिर पर चढ़ाना चाहिए।[५७]

भगवान् सूर्य की स्थापना का एक वर्ष बीत जाने पर उनकी वार्षिक पूजा का विधान था। प्रतिमा-स्थापना विषयक विधानों का पालन करके संसार के

५३. वही, ३२।४३ स्थाप्यश्चैवततोवह्निसंस्थाप्यविधिवत्पुनः।
यजमानस्यशान्त्यर्थं शान्तिकर्मविधानवित्॥
३२।४४, होमयेत्सर्वदेवानांस्वाहाकारैरितस्ततः।
ततस्तदुपहारार्थं संभारैः प्राक्समाहृतैः॥
३२।४५, मोदकोल्लापिकायूपशष्कुलीभूतशीर्षकैः।
कृसरैः पायसोन्मिश्रैः सर्वदिक्षुक्षिपोद्वलिम्॥
३२।४६, तर्पयेत्क्षीरमध्वाज्यैः स्तुयात्स्तोत्रैश्चभास्करम्।

५४. वही, ३२।४६, विप्रेभ्योयाजकेभ्यश्चततोदद्याश्चदक्षिणाम्।

५५. वही, ३३।१०, यस्य यो वाहनः प्रोक्तोध्वजस्तस्य स एवतु।

५६. ध्वजस्थापना की परम्परा प्राचीन भारत में प्रचलित थी—द्रष्टव्य, बनर्जी, जे० एन०, इण्डियन वोटिव एण्ड मेमोरियल कालम्स, जर्नल आफ इण्डियन सोसाइटी आफ ओरियन्टल आर्ट (कुमारस्वामी वाल्यूम), भाग ५, पृ० १३-२०।

५७. साम्बपुराण, ३३।११ ततः सर्वौषधीभिस्तुस्नापयित्वाप्रयत्नतः।
समालभ्य च बध्नीयान्मध्येप्रतिसरन्ततः॥
३३।१२, कल्पयित्वा शुभांवेदीं कलशैरुप शोभिताम्।
तस्यांवेद्यां समारोप्य रात्रिमधिवासयेत्॥

५८. वही, ३३।१३, नाना कुसुमचित्रश्चस्रजस्ततस्यां च लंबयेत्।
अभ्यर्च्य वै प्रयत्नेन धूपमस्या निवेदनम्॥
३३।१६, वादित्रकृतनिर्घोषं जयशब्देनसंकुलम्।
शुभेलग्नेदिनऋक्षे ध्वजमारोपयेद्बुधः॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



कल्याणार्थ रथ-यात्रा करना चाहिए।[५९] प्राचीनकाल में भगवान सूर्य का रथ बनाने के लिए विधाता ने संवत्सर[६०] के ही भागों को लेकर रथ की कल्पना की। भगवान् सूर्यदेव की रथ-यात्रा का वर्णन भविष्य पुराण में भी प्राप्त होता है।[६१] भगवान् सूर्य की प्रतिमा को रथ में रखकर उसे माला तथा कुंकुम इत्यादि से अलंकृत किया जाता था।[६२] राज्ञी तथा निक्षुभा को भी रथ में सूर्य के दाएँ-बाएँ बैठाया जाता था।[६३] इस प्रकार की रथ—यात्रा जगन्नाथपुरी में आज भी लोकप्रिय है।[६४] इस लोक में प्रजाओं की शान्ति के लिए प्रतिवर्ष स्वर्ण, रजत अथवा सुदृढ़ काष्ठ की दृढ़ धुरी और चक्र से युक्त रथ बनवाना चाहिए।[६५] धूप, माला तथा अनुलेपन से विधिपूर्वक आराधन करके विविध प्रकार के आहार

५९. वही, ३४।१०,

स्वस्थांप्रतिमांकृत्वाकुर्यात्स्थानप्रदक्षिणाम् ।
एवं तु क्रियमाणायांयात्रायां प्रतिवत्सरम् ॥

६०. वही, ३४।१४,

संवत्सरस्यावयवैर्ब्रह्मणकल्पितो रथः ।

तुलनीय विष्णुपुराण, २।८।४,

संवत्सरमये कृत्स्नं कालचक्रं प्रतिष्ठितम् ।

६१. भविष्यपुराण, अ० ५०, ५२, ५३, ५५, ५६, ५७, ५८।

६२. वही, ५५।६२-६३

६३. वही, ५५।७६

६४. यहाँ पर वर्णित रथ-यात्रा की तुलना पुरी की रथ-यात्रा से की जा सकती है — द्रष्टव्य, हन्टर, हिस्ट्री आफ उड़ीसा, भाग १, पृ० १३१-१३४ तथा मिश्रा, के० सी, द कल्ट आफ जगन्नाथ, पृष्ठ १२८-१२९।

६५. साम्बपुराण, ३४।२२-२३,

दृढ़ाक्षरथचक्रश्चरथः कार्यः सुयन्त्रितः ।
कांचनोवाद्यरोप्यौवादृढ़दारुमयोपिवा ॥
आरोप्यंप्रतिमां यत्नाद्योजये द्वाजिनः शुभाम् ।
तस्मिन् रथे वरे श्रेष्ठे कल्पिते सुमनोहरे ॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



से श्रेष्ठ ब्राह्मणों को भोजन कराकर सूर्य का यज्ञपूर्ण करना चाहिए।[६६] यज्ञ में दान की विशिष्ट महत्ता प्रतिपादित की गयी है। अतः विविध प्रकार के अभीष्ट पदार्थों, भक्ष्यों, भोज्यों तथा अन्नों के समुच्चय से समस्त जनवर्ग को प्रसन्न करना चाहिए।[६७] उस समय मन्त्र द्वारा आदित्य, वसू, मरुत, अश्विनीकुमार, रुद्र, गरुड़, पन्नग, नवग्रहों तथा असुर यातुधानु, रथासीन देवगण स्थापित दिक्पाल, लोकपाल, एवं विघ्नकारक विनायक को आवाहित करना चाहिए।[६८]

सूर्य में भक्ति रखने वाले पुरुषों को भी स्वयं अथवा बैलों द्वारा रथ ढोना चाहिए।[६९] रथ का टूटना हानिकारक होता है। रथभङ्ग होने पर ब्राह्मणों, धुरी टूटने पर क्षत्रियों, तुला टूटने पर वैश्यों और शमी टूटने पर शूद्रों को भय होता है।[७०] जुआ टूटने पर अनावृष्टि, पीढ़ा टूटने तथा पताका गिरने पर प्रजा पर

---

६६. वही, ३४।२५, २६, विधिवत्पूजयित्वा तु धूपमालानुलेपनैः।
सूर्यक्रतौ तु विततएवमाहुर्मनीषिणः॥

ॐ यज्ञ अथवा पूजा दैवी कृत्य का अनुकरण है। पौराणिक मिथिक शास्त्र में सूर्य सृष्टि की रथ-यात्रा करता है, उसी का अनुकरण संवत्सरी रथ-यात्रा द्वारा किया जाता है—द्रष्टव्य, राय, एस० एन०, पौराणिक धर्म एवं समाज, पृ० ५४।

६७. वही, ३४।२९, तस्मान्नानाविधैः कामैर्भक्ष्यभोज्यान्नविस्तरैः।
प्रीणयित्वा जनं सर्वमुच्चारयेद्विधिम्॥

६८. वही, ३४।३०, बलिंग्रह्णन्तुयेदेवाआदित्या वसवस्तथा।
मरुतश्चाश्विनौ रुद्राः सुपर्णः पन्नगाग्रहाः॥

३४।३१, आसुरायातुधानाश्चरथस्थादेवताश्चया।
दिक्पालालोकपालाश्चये च विघ्नविनायकाः॥

६९. वही, ३४।३६, पुरुषैश्चापि वोढव्यः सूर्यभक्तिसमन्वितैः।
सुकृताग्रहदानैश्च बलीवर्दैरथापि वा॥

७०. वही, ३४।३८, रथभङ्गेद्विजभयंभग्नेक्षेक्षत्रियस्य च।
तुला भंगे तु वैश्यानांशम्याः शूद्रभयंभवेद्॥

सामाजिक स्तर-विन्यास भारतीय जाति-व्यवस्था की विशेषता रही है। इस विवेचन में समाज के चारों वर्णों के लिए भय के भिन्न कारणों को प्रकट कर सामाजिक असमानता एवं स्तर-विन्यास की ओर संकेत किया गया है—द्रष्टव्य, धुरे, कास्ट, क्लास एण्ड अकूपेशन, पृ० ७४।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



संकट आता है, प्रतिमा के अङ्ग-भङ्ग हो जाने पर रानी की मृत्यु होती है।[७१] इस प्रकार के अशुभ उत्पातों के उत्पन्न होने पर प्रारम्भ में ही शान्ति और होम कराना चाहिए। ब्राह्मणों को भोजन कराकर दक्षिणा देनी चाहिए।[७२] रथ के पूर्वोत्तर दिशा में अग्नि की कल्पना करनी चाहिए और घृतयुक्त समिधाओं से हवन करना चाहिए। [७३] अग्नि, सोम तथा प्रजापति के लिए स्वाहा शब्द का उच्चारण करते हुए होंम करना चाहिए।[७४] अर्क की शान्ति के लिए मन्दार, चन्द्रमा की शान्ति के लिए पलाश, मङ्गल की शान्ति के लिए खादिर, बुद्ध की शान्ति के लिए अपामार्ग ( एक बूटी ), गुरु की शान्ति के लिए पीपल, शुक्र की शान्ति के लिए गूलर, शनि की शान्ति के लिए शमी, राहु की शान्ति के लिए दूब तथा केतु की शान्ति के लिए कुश की समिधा में यज्ञ करना चाहिए।[७५] सूर्य के लिए उत्तम धेनु, चन्द्र के लिए शङ्ख, मङ्गल के लिए लाल ऊन, बुध के लिए सोना, गुरु के लिए पीले वस्त्र, शुक्र के लिए श्वेत घोड़ा, शनि के लिए काली गाय, राहु के

---

७१. साम्बपुराण, ३४।३९, ४०, युगभंगेत्वनावृष्टिः पीठभंगेप्रजाभयम् ।
प्रतिमाव्यंगतायां तु राज्ञीमरणमादिशेत् ।

७२. वही, ३४।४१, ४२, उत्पन्नेष्वेवमाद्येषुह्यत्पातेष्वशुभेषु च ।
बालिकर्मततः कुर्याच्छांतिहोमंतथैव च ।।

७३. वही' ३४।४३, पूर्वोत्तरेदिशोभागेरथस्याग्निप्रकल्पयेत् ।
समिद्भिस्तुघृताक्ताभिर्होमयेज्जातवेदशम् ।।

७४. वही, ३४।४४, स्वाहाकारंवदन्सम्यग्देवताभ्यस्त्वनुक्रमात् ।
ग्रहेभ्यश्च प्रजाभ्यश्च नामान्युद्दिश्यहोमयेत् ।।

७५. वही, ३४।५१, ५२, ५३, अर्कमय्यस्तथाऽर्कस्यपालाश्यः शशिनस्तथा ।
खादिर्यश्चैव भौमायह्यापार्ग्योबुधाय च ।।
आश्वत्थाश्चैवजीवाह्ययौंदुबर्यः सितायच ।
असितायशमीमय्योदूर्वाः कार्यास्तुराहवे ।।
केतवे तु कुशाः कार्यादक्षिणांचाप्यतःश्रुणु ।।

नवग्रह शान्ति के लिए इन्हीं समिधाओं का विधान मत्स्यपुराण ९३, २७-२८ में भी किया गया है।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



लिए खांड़ की खीर तथा केतु के लिए बकरा, दक्षिणा रूप में देना चाहिए।[७६] सूर्य के लिए गुड़ और चावल, सोम के लिए घृत और खीर, मङ्गल के लिए हविष्यान्न, बुध के लिए दूध का अन्न, गुरु के लिए दही और चावल, शुक्र के लिए धृतयुक्त भोजन, शनि के लिए पिसा हुआ तिल और उड़द, राहु के लिए मांस तथा केतु के लिए हल्दी से रंगा पीतवर्णीय चावल का भोजन देना चाहिए।[७७] इस प्रकार की उपासना से ग्रहों को शान्त किया जा सकता है। अहिंसक, शान्त तथा धैर्यपूर्वक धनोपार्जन करने वालों पर ग्रह सदैव कृपालु रहते हैं। गायों, राजाओं तथा विशेषतः ब्राह्मणों के पूजे जाने पर ग्रह सम्मान करते हैं तथा उनके अपमानित होने पर भस्म कर देते हैं।[७८] यज्ञ करने

---

७६. वही, ३४।५४, सूर्यायचोत्तमांधेनुं शंखंदद्यात्तथेन्दवे।
रक्तोर्णं चैव भौमाय कांचनं सोमसुनवे॥
३४।५५, पीतवासांसिजीवाय शुक्रायाश्वंतितंतथा।
शनैश्चरायगांनीलांरांह्वेखण्डपायसम्॥
छागं तु केतवे दद्याच्छृण्वेषांभोजनानि च।

७७. वही, ३४।५६, गुडौदनं तु सूर्यायसोमाय घृतपायसम्।
३४।५८, तिलपिष्टं च माषं च सूर्यपुत्रायदापयेत्।
राहवेदापयेन्मांसं केतवेचित्रमोदनम्॥

नवग्रहों के भोजन का विधान भी मत्स्यपुराण ९३।१९-२० में इसी प्रकार प्रतिपादित किया गया है। श्राद्ध में पितरों के लिए और पूजा में देवी के लिए मांस की बलि का विधान था, द्रष्टव्य, मार्कण्डेयपुराण, २९।२,८९।२०, देसाई, एन०वाई०, ऐन्शियन्ट इण्डियन सोसायटी, रेलिजन ऐण्ड माईथालॉजी ऐज डिपिक्टेड इन द मार्कण्डेयपुराण, पृ० ५५।

७८. वही, ३४।६१, ग्रहागावोनरेन्द्राश्चब्राह्मणाश्चविशेषतः।
पूजिताः पूजयंत्येतेनिदहन्त्यपमानितः॥

यहाँ नैतिक जीवन पर विशेष बल दिया गया है। पौराणिक धर्म-साधना में नीतिपरक विचारधारा एक प्रमुख विशेषता थी। गाय तथा ब्राह्मण के प्रति आदर भारतीय सामाजिक जीवन का अभिन्न अंग बन गया था, द्रष्टव्य—द स्ट्रगिल फार इम्पायर, पृ० ४९३, याज्ञवल्क्य स्मृति, ३।२६४-६५ प्रायश्चितप्रकरण, पृ० २८-३३।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



वाले, सत्य वचन बोलने वाले, नित्य व्रतोपवास करने वाले, तथा जप होम में लगे हुए व्यक्तियों की ग्रह-पीड़ा शान्त हो जाती है।[७९] इस प्रकार प्रजा की शान्ति करके सूर्य-रथ द्वारा परिक्रमा करनी चाहिए। चौथे दिन सूर्य का विश्रमण करना चाहिए। धूप, माला और उपहार सामग्री से पुनः मण्डल में उपासना करनी चाहिए।[८०] वर्ष पूर्ण होने पर यदि किसी कारणवश रथयात्रा न हो सके तो फिर बारहवें वर्ष करनी चाहिए। इसके बाद शान्तिकर्म करके हवन करना चाहिए।[८१]

अग्नि की धूप-विधि[८२] का प्रतिपादन करते हुए इस पुराण में कहा गया गया है कि सर्वप्रथम मिट्टी मलकर, तीन बार स्नान कर, दो निर्मल वस्त्र पहन-

---

७९. साम्बपुराण ३४।६३, यज्वनां सत्यवाक्यानां तथा नित्योपवासिनाम्।
जप होमपराणाञ्चग्रह पीडाप्रशाम्यति ॥

८०. वही, ३४।६४, एवं कृत्वा प्रजाशान्ति कृत्वा च स्वस्तिवाचनम्।
३४।६५, पुनः सूर्यरथं कृत्वा कुर्यात्प्रक्रमणं ततः।
३४।६६, मार्गशेषं ततो गत्वा नयदेदेवालयं ततः।
अवतार्य रथाश्चैनंस्थापयेन्मण्डले तथा ॥
चतुर्थेह्नि कर्त्तव्यं ततो विश्रमणं रवेः।
धूपमाल्योपहारैश्चपूजयेन्मण्डले पुनः ॥

८१. वही, ३४।६९, अथ संवत्सरे पूर्णेभानोर्यत्रा दिने यदि।
३४।७०, ततो द्वादश वर्षे तु कर्त्तव्यं नान्तरा पुनः ॥
शान्ति कर्माथ कृत्वा वै होतव्यं भूतिमिच्छता।

८२. वही, ३६।२, अथातः संप्रवक्ष्याभिःह्यग्निधूपविधिक्रियाम्।
स्नानमाचमनं चाथोद्यदानंतथैव च ॥

देव-पूजा में स्नान, आचमन, पुष्प-दान, जप, गुग्गुल की आहुति, आवाहन, अर्घ्य तथा धूप-दान आदि का उल्लेख इस अध्याय में किया गया है। विष्णुधर्मसूत्र, ६५ तथा बौधायन धर्मसूत्र, २।१७ में देव-पूजा के इन उपचारों का विष्णु और शिव के सन्दर्भ में उल्लेख किया गया है। विस्तृत विवरण हेतु द्रष्टव्य—वीरमित्रोदय, पूजाप्रकाश, पृ० ९७-१४९, अपरार्क, पृ० १४०-१४१, स्मृति चन्द्रिका, पृ० १९१, नित्याचारपद्धति, पृ० ५३६-३७, संस्काररत्नमाला, पृ० २७, ऋग्विधान, ३।३१, ६-१०।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



कर, पवित्र स्थान पर बैठकर एकाग्रचित होकर पूर्व या उत्तर की ओर मुँह करके, पाद-प्रक्षालन कर तथा दोनों हाथों को घुटनों के भीतर करके शुद्ध, शान्त और प्रसन्न भाव से सावित्री द्वारा तीन बार आचमन करना चाहिए।[८३] जलराशि में सूर्य, अग्नि, नाग और देवी सरस्वती का निवास होता है; अतः बाहर निकल कर ही आचमन करना चाहिए।[८४] आचमन के समय शुद्ध होकर क्रमशः मस्तक, नेत्र तथा हृदय को स्पर्श करके सूर्य को नमस्कार करना चाहिए।[८५] आचमन के उपरान्त श्वाँस को अन्दर करने के निमित्त मन्दिर में प्रवेश करना चाहिए। सहिताओं में विद्यमान मन्त्र से जप करते हुए, सूर्य के मस्तक पर पुष्प अर्पित करके गुग्गुल की आहुति के रूप में धूप देना चाहिए।[८६] तत्पश्चात् 'व्रती देवता, मनुष्य और समस्त पितृगण व्रत करने वाले व्यक्ति की वृद्धि करते हैं इसलिए 'जो तेजस्वियों में प्रथम हैं, अजन्मा हैं, उन सूर्य की शरण में हम जाते हैं' मन्त्र का पाठ करना चाहिए।[८७] जप की पाँच धूप वेलाएँ प्रतिपादित की गयी हैं। दण्डनायक

८३. साम्बपुराण, ३६।३, ४,

परिधाय च सावित्र्याह्याचमेच्चप्रयत्नतः ।
आचमेत्तुप्रयत्नेनसावित्र्यासुसमाहितः ॥
उपविश्यशुचौदेशे प्रयतः प्रागुदङ्मुखः ।
पादौप्रक्षाल्यहस्तौ च अंतर्जानुस्तथाचमेत् ॥

८४. वही, ३६।५, अप्सुसूर्यस्तथाग्निनागदेवीसरस्वती ।
तस्मादुत्तीर्यचाचामेन्नोपहन्याजलाशयम् ॥

८५. वही, ३८।८, मूर्द्धानिखानिचात्मानमुपस्पृश्यानुपूर्वशः ।
आचांतोऽर्कं नमस्कृत्य शौचेच्छुः शुचिताभियात् ॥

८६. वही, ३६।१४, जपेनवर्तमानेन संहितायां करांञ्जपन् ।
धूपं ततोग्नयेदत्वाप्रथमं गुग्गुलाहुतिम् ॥

८७. वही, ३६।१६, ॐ व्रतनयंव्रतिनोर्द्धयति देवा मनुष्याः पितरश्चसर्वे ।
तस्यादित्यस्यप्रसवमनामहेयस्तेजसः प्रथममजोविभाति ॥

ध्यातव्य है कि यहाँ पर वैदिक मन्त्रों के माध्यम से ही जप का विधान किया गया है जो मग-परम्परा को वैदिक उपासना पद्धति के अनुकूल बनाने की दिशा में सफल प्रयास था, द्रष्टव्य, हाजरा, स्टडीज, भाग १, पृ० ३२, विष्णु की पूजा वैदिक मन्त्रों के माध्यम से होती थी, द्रष्टव्य, विष्णुधर्मसूत्र, ६५।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



बेला उसे कहते हैं जो प्रदोष काल में तारकों के दर्शन होते ही हो। राज्ञी बेला को उषा काल समझना चाहिए। सूर्य के दर्शन से लेकर आधा उदित होने पर, आकाश के मध्य स्थित होने पर तथा अस्तंगत होने पर इन तीनों बेलाओं में क्रमशः मिहिर, अग्नि तथा वरुण के लिए पूजा करनी चाहिए।[८८] रक्त चन्दन मिश्रित पदार्थ, सुगन्धित जलयुक्त तत्व, पद्मकरवीर लाल कमल, रोली, जल, कुरुटक, गन्ध तथा अन्यान्य वस्तुएँ ताम्रपत्र में रखकर भगवान सूर्य को अर्पित करना चाहिए।[८९] पुनः धूप तथा मन्त्रोच्चारण सहित गुग्गुल की आहुति तथा अर्घ्य देकर सूर्य का आह्वान कर आदित्यहृदय स्तोत्र का जप करना चाहिए।[९०] सावित्री तथा जल से पवित्र होकर धूप के पात्र को ऊपर उठाना चाहिए। तदनन्तर पवित्र गायत्री मन्त्र 'सवितृ देवता का वह श्रेष्ठ तेजस जो भूलोक, भुवलोक और स्वर्ग लोक में व्याप्त हैं हमारी रक्षा करें और हमारी बुद्धि को सन्मार्ग में प्रेरित करें,

---

८८. वही, ३६।१८, दण्डनायकवेलातुप्रदोषेऋक्षुदर्शनात् ।
राज्ञीवेला तु प्रत्यूषे तद्वत्कार्याविजानता ।।

३६।१९, त्रिकाले तु रवेः पूजा कर्त्तव्या सुर्यदर्शनात् ।
अर्घोदितेष्वमध्यस्थेभानोर्वास्तंगतेतथा ।।

३६।२०, मिहिराय च पूर्वाह्णे मध्याह्ने ज्वलनाय च ।
अर्घोद्यन्मण्डले देयोनीचाह्ने वरुणाय च ।।

सूर्य की पूजा पूर्वाह्न, मध्याह्न और सायं तीन बार वैदिक काल में भी की जाती थी। यहाँ पर वैदिक प्रभाव स्वीकार्य है, द्रष्टव्य, ऋग्वेद, २।२७।८, ५।७६।३, ८।२२।१४, कौषीतकि उपनिषद्, २।७, श्रीवास्तव, वी० सी०, सन वरशिप इन ऐन्शियन्ट इण्डिया, पृ० १७०-७१।

८९. वही, ३६।२१, २१, रक्तचंदनमिश्राणिगंधोदकयुतानि च ।
पद्मानिकरवीराणि तथा रक्तोत्पलानि च ।।
कुंकुमोदकमिश्राणि तथा कुरुटकानि च ।
गंधाद्यान्यथवान्यानिकृत्वाताम्रस्य भाजने ।।

९०. वही, ३६।२३, २५, भूयोधूपंततोत्समंत्रांगुग्गुलाहुतिम् ।
अनेनावाहनं कृत्वा जानुभ्यां संस्थितः क्षितौ ।
खेर्निवेदयेदर्घमादित्यहृदयंजपेत् ।।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



का उच्चारण करना चाहिए।[९१] इसके पश्चात् 'हे सूर्य देवता ! आप रुद्रों और वसु देवताओं में सर्वश्रेष्ठ हैं, पुरातन हैं, शाश्वत हैं, आकाश में देवताओं की वाणी द्वारा स्तवन किए गए हैं, ऋचा का पाठ करते हुए धूप से पूर्वाह्न तथा मध्याह्न में धूप देना चाहिए।[९२] सायंवेला में ओम ज्वाला रूपी माला वाले उस सूर्य देवता को नमस्कार है, वह विष्णु का परम पद है जिसे सुबुद्ध व्यक्ति सदैव देखते हैं, मन्त्र से धूप निवेदित करना चाहिए।[९३] मन्दिर के अन्दर प्रविष्ट होकर मन्त्रोच्चारण करते हुए सूर्य को धूप देना चाहिए। फिर राज्ञी, निक्षुभा, दण्डनायक, पिङ्गल, तोष, कलमाष तथा गरुड को नमस्कार करना चाहिए।[९४] प्रदक्षिणा करते हुए दिग्देवताओं, दण्डी, रेवन्त के अनुचर, इन्द्र, यम, वरुण, कुवेर तथा सोम को

---

९१. वही, ३६।३०,

ॐ भूर्भुवस्स्वस्ततसवितुर्वरेण्यंभर्गोदेवस्यधीमहिधियोयोनः प्रचोदयात् ।
गायत्री मंत्र का महत्व ऋग्वेद में भी प्रतिपादित है, द्रष्टव्य—श्रीवास्तव, वी० सी०, द ओरिजिनल नेचर एण्ड सिगनीफिकेन्स आफ सवितृ इन रिग्वैदिक रिलीजन, जर्नल आफ आन्ध्र हिस्टारिकल रिसर्च सोसायटी, भाग २९, काणे, हिस्ट्री आफ धर्मशास्त्र, भाग २, (१), पृ० ३०२-३०३।

९२. वही, ३६।३२, ३३,

त्वमेकोरुद्राणांवसूनांपुरातनोंदेवनांगीर्भिरभिष्ठुतः शाश्वतोदिवि ।
पूर्वाह्णेनेनमंत्रेणमध्याह्नेचाप्यनेन तु ॥

९३. वही, ३६।३४,

ॐ नमो ज्वाला मालाय तद्विष्णोः परमं पदं सदापश्यतिसूर्यः ।
दिवीव चक्षु सततंसायाह्नेचाप्यनेन तु ॥

९४. वही, ३६।३७, ३८, ३९,

ततः प्रविश्य धूपं तु प्रतिमायैनिवेदयेत् ।
मंत्रेणमिहिरायेतिधूपंदत्वेतिनित्यशः ॥
ततोराज्ञीनमस्कृत्यनिक्षुभायैनमः ।
दण्डनायकसंज्ञायपिंगलाय च वै नमः ॥
ततोराज्ञे च तोषायकल्माषाय गरुत्मते ॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



धूप निवेदित करनी चाहिए।[९५] सौमनसशृङ्ग पर ईशान के लिए, ज्योतिष्क शृङ्ग पर अग्नि के लिए, चित्रसंज्ञक शृङ्ग पर पितरों के लिए, चन्द्रमास शृङ्ग पर वायुदेव के लिए तथा नारायण नामधारी सूर्य के लिए धूप देनी चाहिए।[९६] आदित्य, रुद्र, मरुत तथा अश्विनीकुमार जो भी आकाश में निवास करने वाले देव हैं उन सबको भी नित्य नमस्कार करना चाहिए।[९७] सूर्यदेवता को सब कुछ गोपनीय ढंग से समर्पित करके, हे भगवान् विभावसु ! भक्तिपूर्वक यथाशक्ति मैंने आपकी समर्चना की है। हे नाथ अब आप मुझे इहलोक तथा परलोक सम्बन्धी कार्यसिद्धि प्रदान करें, मन्त्र का तीन सन्ध्या बेलाओं में ध्यानावस्थित होकर पूजन करना चाहिए।[९८] श्रेष्ठ पुष्प या पत्ती दान देना चाहिए। पत्ती न हो तो धूप, धूप न हो तो जल ले आना चाहिए।[९९] यदि कुछ भी न हो तो सामने गिरकर

९५. वही, ३६।३९, ४०, ४१,
ततः प्रदक्षिणं कुर्वन् दिग्देवेभ्योनिवेदयेत् ।
दण्डिने च ततोदद्यादेवतानुचराय च ।।
पूर्वेण नम इन्द्रायदक्षिणेनयमाय च ।
पश्चिमेनजलेशायकुवेरायोत्तरेण च ।।
उत्तरेणैव सोमाय दद्याद्धूपंविचक्षणः ।

नमस्कार तथा प्रदक्षिणा अनेक विद्वानों के अनुसार एक ही उपचार बताए गए हैं, द्रष्टव्य, काणे, हिस्ट्री आफ धर्मशास्त्र, भाग २ (१), पृ० ७३५।

९६. वही, ३६।४२, ४३, शृंगेसौमनसेधूपमीशानायनिवेदयत् ।
ज्योतिषत्वग्नयेदत्वापितृभ्यश्चित्रसंज्ञके ।।
चन्द्रमासे ततः शृंगे धूप दत्वा तु वायवे ।
मध्येनारायणख्यायसूर्यायपरमात्मने ।।

९७. वही, ३६।४४, आदित्यत्येभ्योथरुद्रेभ्योमरुद्भ्यश्चश्विनोस्तथा ।
याह्यस्मिन्देवताव्योम्निनमस्ताभ्योपिनित्यशः ।।

९८. वही, ३६।४६, ४७, सूर्यगुह्यैरभिष्टुत्यह्येवंविज्ञापयेत्ततः ।
अर्चितो हि यथाशक्त्यामयाभक्त्याविभावसो ।
ऐहिकामुष्मिकींनाकार्यसिद्धिंकुरुष्व मे ।
एवंत्रिषवणस्नातोयोर्चयेतेत्प्रयतः सदा ।।

९९. वही, ३६।५०, पुष्पश्रेष्ठं च दानंस्यातपत्रंसमुपहारयेत् ।
पत्रं न स्यात्ततोधूपं धूपोनस्यात्ततोजलम् ।।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



पूजा करनी चाहिए और झुकने में भी समर्थ न हो तो मन से ही पूजा करनी चाहिए।[१००] द्रव्याभाव में उपासना की यह विधि प्रतिपादित की गयी है। द्रव्य उपलब्ध होने पर सब कुछ उपहार रूप में अर्पित करना चाहिए।[१०१]

सूर्य को पवित्र अग्नि रूप में भी उल्लिखित किया गया है।[१०२] यहाँ अग्नि (सूर्य) के लिए धूपविधि का विवेचन किया गया है। अग्नि के तेज को उत्थापित करके पवित्र स्थान में उसे निविष्ट करके मन्त्रोच्चारण सहित धूप निवेदित करना चाहिए।[१०३] शमी अथवा पीपल की अरणी में अग्नि पैदा करके सूर्य-मूर्ति का

---

१००. वही, ३६।५१,

सर्वंनस्यात्तदाचैवप्रणिपातेनपूजयेत् ।
अशक्तः प्रणिपातेऽपिमनसापूजयेत्ततः ॥

देव-पूजा के सोलह अथवा अठारह उपचारों का विवेचन पुराणों एवं निबंधों में भी किया गया है किन्तु यह भी उल्लिखित है कि वस्त्र तथा अलंकारादि सम्भव न हो तो केवल पाद्य से नैवेद्य तक दस उपचारों को ही सम्पादित करना चाहिए। यदि यह भी सम्भव न हो तो गंध से लेकर नैवेद्य तक की मंत्रोपचार पूजा करनी चाहिए। इसके भी सम्भव न होने पर पुष्पमात्र से ही पूजा करनी चाहिए, द्रष्टव्य—नित्याचारपद्धति, पृ० ५४९, जयवर्मन द्वितीय के मन्धाता अभिलेख में भी पंचोपचार पूजा का विधान उल्लिखित है, इपिग्रैफिया इण्डिका, ९, पृ० ११७-११९, संस्काररत्नमाला, पृ० २७।

१०१. वही, ३६।५२, असम्भवे तु द्रव्याणां विधिरेष प्रकीर्तितः।
द्रव्याणां संभवे चैव सर्वमेवोपहारयेत् ॥

१०२. वही, ३७।२, शुचिरग्निः स्मृतः सूर्योवायुस्तस्यसुतः स्मृतः।

सूर्य एवं अग्नि के संयुक्त स्वरूप की पूजा मग-परम्परा की एक विशेषता थी, द्रष्टव्य—मोल्टन, अर्ली जोरोआस्ट्रीनिज्म, पृ०, १८२-२५३, मैकडॉनल, वैदिक माइथालाजी, पृ० ९३-९४

१०३. वही, ३७।३, अतोस्यतेजउत्थाप्यरवेधूपंनिवेदयेत् ।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



चित्र बनाकर सविधि अग्नि की स्थापना करनी चाहिए। 'स्रुच'[१०४] और स्त्रुव'[१०५] इन दोनों प्राणीता तथा अन्यभाजन को पोंछकर अग्नि से स्पर्श कराना चाहिए। हाथों में कुश लेकर पहले घृत छोड़ना चाहिए। अग्नि के प्रज्वलित होने पर होम करना वाहिए।[१०६] यज्ञ की लकड़ियों को अग्नि-कुण्ड की माप के प्रमाणानुसार ही रखना चाहिए। फ्लाश, मदार, चिचड़ा, शमी, पीपल, विकंकत, गूलर, बेर, चन्दन, सरल, देवदारु, शाल तथा खादिर यज्ञ के लिए उचित लकड़ियाँ प्रतिपादित की गयी हैं।[१०७] समिधा के लिए श्लेषमातक (लिसोड़ा), नक्तमाल,[१०८] कैंथा, सेंमल, बेल, कोविदार,[१०९] करंज,[११०] शल्लकी,[१११] चिरबल्व क्रोन्ट, तिक्कत,

१०४. वही, ३७।४, मंत्रेणतुरविंदेवनित्यमेवंप्रसादयेत् ।
अरण्यां तुशमीमय्यांपिप्पल्यापुत्रकंकरवेः ॥
३७।५, मूर्तिमुल्लिख्यदर्भेणह्यग्नि संस्थाप्ययत्नतः ।
१०३, लकड़ी प्रायः ढाक या खादिर का बना हुआ एक प्रकार का चमचा जिसके द्वारा यज्ञाग्नि में घी की आहुति दी जाती है, द्रष्टव्य, रघुवंश ११।२५, मनुस्मृति, ५।११७, याज्ञवल्क्यस्मृति, १।१८३।

१०५. यज्ञ के लिए पिघलाये हुए घी का बर्त्तन, आप्टे, संस्कृत-हिन्दी कोष, पृ० १४२।

१०६. वही, ३७।७-८ कुशं गृह्य तु हस्ताभ्यामाज्यंप्रथममुत्सृजेत।
सुसमिद्धंततः कृत्वा होमयेज्जातवेदसम् ॥

१०७. वही, ३७।१०, ११ पालाशोऽर्कस्त्वपामार्गः शम्यश्वत्थविकंकतः।
उदुम्बरस्तथाबिल्वश्चंदनोयज्ञियाश्चये ॥
सरलोदेवदारुश्चशालश्चखदिरस्तथा ॥

१०८. वही, ३७।१२, १३ श्लेष्मातकोनक्तमालः कपित्थः शाल्मली तथा।
बिल्वजः कोविदारश्चकरंजः शल्लकीद्रुमः ॥
चिरबिल्वस्तथा क्रोंटस्तिक्तकाम्रातकौ तथा ॥
नक्तमाल एक विशेष प्रकार का वृक्ष है, द्रष्टव्य—रघुवंश, ५।४२।

१०९. कोविदार सुन्दरता के लिए प्रसिद्ध है, इसे कचनार भी कहते हैं, द्रष्टव्य—ऋतुसंहार, ३।६, चित्तविदारयति कस्य न कोविदारः।

११०. करंज एक प्रकार का वृक्ष है जिससे औषधियाँ बनती हैं।

१११. शल्लकी एक प्रकार का वृक्ष है जो हाथियों को बहुत प्रिय है, द्रष्टव्य—उत्तररामचरित, २।२१, ३।६, विक्रमोर्वशीयम्, ४।२३।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



अमरख के वृक्ष अत्यन्त श्लाघनीय बताये गए हैं। कुश का उत्तम बिछौना बिछाकर, गायत्री मन्त्र से पवित्र कर कुश की अंगूठी बनाकर अग्नि के दाहिनी ओर ब्रह्मा की मूर्ति कल्पित करनी चाहिए। फिर स्रुवा और स्रुव दोनों प्रणीता और आज्य-भाजन को अग्नि से स्पर्श कराकर स्रुवा को घृत से स्पर्श कराना चाहिए।[११२] इसके पश्चात् पुराणोक्त मन्त्र द्वारा सूर्य देवता का आवाहन करना चाहिए।[११३] अग्नि होत्र के मन्त्र से उच्चारण करते हुए अग्नि को अन्तिम आहुति देनी चाहिए।[११४] पलाश, देवदार, शमी इत्यादि की समिधाओं से घृत में डुबोकर अग्निदेव का हवन करना चाहिए।[११५] फिर स्रुवा दूध, गव्य, नौ औषधियों, तिल, चावल, जौ, शाली, फलक साँवाँ, तथा गेहूँ से होम करना चाहिए।[११६] चैत्री तथा कार्तिकी पूर्णिमा के दिन हवन करना उत्तम होता है।[११७] अग्नि जब तक प्रज्वलित न हो, हवन नहीं करना चाहिए नहीं तो यजमान अन्धा और पुत्रहीन हो जाता है।[११८] दुर्भाग्यशालिनी स्त्री, अशिक्षित व्यक्ति, मूर्ख, आर्त्त और असभ्य व्यक्ति से यज्ञ में हवन नहीं कराना चाहिए। ऐसा करने से धनक्षय होता है तथा वे नरकगामी होते हैं।[११९]

---

११२. वही, ३७।१७, ततः स्रुचंस्रुवंचैव प्रणीता माज्यभाजनम्।
प्रक्षाल्यस्पर्शदयेग्निंस्रुवंचाज्येनसंस्पृशेत् ॥

११३. वही, ३७।१९, पुराणोक्तेनमंत्रेणह्यनेनाथकृताञ्जलिः ।

११४. वही, ३७।२५.
तता परमग्निहोत्रेमंत्रणमार्गमुच्चरन्परमाहुतिदद्यादादायस्वाहा।

११५ वही, ३७।२७, देवदारुमयीभिश्चशमीमयीभिरेव च ।
समिद्भिश्चघृतावताभिर्होमयेज्जातवेदसम् ॥

११६. वही, ३७।२८, २९, अतःक्षीरेणगव्येनततोन्नेन च होमयेत्।
नवाभिरोषधिभिश्चतिलव्रीहियवैस्तथा ॥
शालीफलकश्यामाकैर्गोधूमैश्चैवहोमयेत् ॥

११७. वही, ३७।३०, चैत्र्यांतथाश्वयुज्यांचकुर्यादग्निंतथाक्रियाम् ॥

११८. वही, ३७।३२, अप्रबुद्धेसधूमेवाजुह्यान्नहुताशने ।
यजमानोभवेदन्धोह्यपुत्रइति च श्रुतिः ॥

११९. वही, ३७।३४, ३५, नैवाकल्याणीयुवतिर्न्नाल्पविद्योनबालिशः ।
होतास्यादग्निहोत्रस्यनार्त्तोनासंस्कृतरतथा ॥
नरकं तु पतन्त्येतेजुह्वतश्चधनक्षयः ॥



CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



सौरोपासना में व्रत का विशेष महत्व प्रतिपादित किया गया है। अनेक आदित्य-व्रतों का उल्लेख पुराणों एवं निबन्धों में विवेचित है।[१२०] षष्ठी अथवा सप्तमी तिथि को सविधि एवं सनियम सूर्य की अर्चना तथा व्रत करने से अश्वमेध-यज्ञ के फल एवं सूर्य-लोक की प्राप्ति होती है।[१२१] शुक्ल पक्ष की सप्तमी के दिन उपवास करके जो मनुष्य लाल रंग के समस्त उपहारों से सूर्य की उपासना करता है, पापमुक्त होकर सूर्यलोक प्राप्त करता है।[१२२] इस व्रत की समाप्ति का नियम दो वर्षों में है। यह सप्तमी व्रत समस्त कामनाओं को पूर्ण करने वाला होता है।[१२३] माघ मास के शुक्लपक्ष की सप्तमी का दिन सदैव सूर्य का दिन होता है। उसे विजया सप्तमी कहते हैं तथा उसका महान् फल प्रतिपादित किया गया है। इस तिथि में स्नान, दान, जप, होम और उपवास सब कुछ महापातकों को नष्ट करने वाला होता है। इस तिथि को श्राद्धकर्म करने तथा महाश्वेता का जप करने से मनोवाञ्छित फल प्राप्त होता है।[१२४] जिन भक्तों की समस्त क्रिया सदैव सूर्य

---

१२०. काणे, हिस्ट्री आफ धर्मशास्त्र (हिन्दी), भाग ४, पृ० १०५-१०६ में आदित्यवारव्रत, आदित्यमंडलविधि, आदित्यशयन तथा आदित्यहृदय-विधि इत्यादि का उल्लेख प्राप्त होता है।

१२१. साम्बपुराण, ३८।२१, २२, सप्तम्यां च महाभागसोश्वमेधफलंलभेत।
सप्तम्यामथषष्ठम्यां च सूर्यलोकंसमगच्छति ॥

षष्ठी पर उपवास तथा सप्तमी पर 'भास्कर प्रसन्न हों' के साथ पूजा, रोगों से मुक्ति का कारण बताया गया है, द्रष्टव्य—कृत्यकल्पतरु, व्रत, पृ० ३८८-८९, भविष्यपुराण, १।३९-४६, भविष्योत्तर पुराण, ३८-४२।

१२२. वही, ३८।२३, २४, शुक्लपक्षस्यतस्यामुपवासस्यपरोनरः।
सर्वरक्तोपहारेणपूजेयद्यस्तुभास्करम् ॥
सर्वपापविनिर्मुक्तस्सूर्यलोकंसगच्छति ॥

१२३. वही, ३८।२६, सर्वकामप्रदाह्येषाप्रसिद्धार्कस्यसप्तमी।

१२४. वही, ३८।२८, २९, सर्वविजयसप्तम्यांमहापातकनाशनम्।
येत्वादित्यदिनेप्राप्ते श्राद्धंकुर्वन्तिमानवाः ॥
जपंतिचमहाश्वेतांते लभन्ते यथेप्सितम् ॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



को उद्देश्य करके सम्पन्न होती है, उनके वंश में कोई दरिद्र अथवा रोगी नहीं उत्पन्न होता।[१२५] पूर्णिमा और अमावस्या तिथियों में दान देना अत्यन्त पुण्य-कारक होता है। आषाढ़, कार्तिक तथा माघ की पूर्णिमाएँ पवित्र होती हैं। महाकार्तिकी पूर्णिमा (कार्तिकी) का शास्त्रों में विशेष महत्व बताया गया है।[१२६] ऐसे अवसर पर व्रत तथा उपवास करने पर समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं तथा श्रेष्ठ गति प्राप्त होती है। विचित्र सुगन्धित पुष्पों से चित्रभानु की पूजा तथा उपवास करने पर अभिलषित वस्तुओं की प्राप्ति होती है।[१२७] जो व्यक्ति घी अथवा तिल के तेल से उस दिन दीप जलाता है वह दीर्घायु होकर स्वस्थ रहता है, आँखों से हीन नहीं होता तथा वह निरन्तर ज्ञान रूपी दीपक से स्वयं प्रकाशित होता है।[१२८] तिलदान अत्यन्त श्रेष्ठ प्रतिपादित किया गया है। तिल के हवन करने अथवा दीप जलाने पर बड़े से बड़े पाप का नाश हो जाता है।[१२९] देव मन्दिरों के चौराहों पर तथा गलियों में दीप जलाने वाला सौभाग्यशाली तथा रूपवान हो

---

१२५. वही, ३८।२९, ३०,

येषां धर्मक्रियाः सर्वाः सदैवोद्दिश्यभास्करम्।
न कुले जायते तेषां दरिद्रोव्याधितोपिवा॥

१२६. वही, ३५।१६,

महत्वं च तिथेः पुण्यं यथा शास्त्रेषुभासितम्।
कार्तिक्यां च विशेषेण महाकार्तिक्युदाहृता॥

१२७. वही, ३८।३१, ३२,

चित्रभानुं विचित्रैश्च कुसुमैस्तुसुगन्धिभिः।
पूजयेत्सोपवासो यः स कामानीप्सिताँल्लभेत्॥

१२८. वही, ३८।३२, ३३,

धृतेनदीपंप्रज्वालयतितैलेनवापुनः।
दीर्घायुर्वपुषायुक्तश्चक्षुषा न च हीयते।
दीपदानान्नरोनित्यं ज्ञानदीपेनदीप्यते॥

१२९. वही, ३८।३४, ३५,

तिलाः पवित्रं परमंतिलदानमनुत्तम्।
अग्निकार्ये च दीपे च महापातकनाशनम्॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



जाता है।[१३०] दीप की लौ उर्ध्वगामिनी होनी चाहिए। जलते हुए दीप को कभी नहीं चुराना चाहिए। दीप चुराने वाला व्यक्ति अन्धा तथा प्रभाहीन हो जाता है।[१३१] दीपदान करने वाला व्यक्ति दीप माला के समान स्वर्गलोक में शोभा पाता है। जो व्यक्ति सदैव चन्दन, अगरु और कुंकुम से सूर्योपासना करता है वह निरन्तर धन, कीर्ति और लक्ष्मी से पूजा जाता है।[१३२] लाल चन्दन तथा मिश्रित लाल पुष्पों से सूर्य को अर्घ्य देने वाला व्यक्ति सिद्धियाँ प्राप्त करता है।[१३३] उत्तम आदित्यव्रत महान् पातकों का नाश करने वाला है।[१३४] सुवर्ण, धेनु, वृषभ वस्त्रादि एवं अर्घ्य प्रदान करने वाला जन्म-जन्मान्तर का फल प्राप्त करता है।[१३५] अग्नि, जल, आकाश, पवित्र भूमि, प्रतिमा और पिण्डी में विधि-पूर्वक अर्घ्य देना चाहिए। भक्तिपूर्वक घी तथा गुग्गुल का होम करना चाहिए।[१३६] श्रीवासक, तुरुष्क, देवदारु, कपूर और अगुरु की धूप देने वाले स्वर्गगामी होते

---

१३०. वही, ३८।३५ दीपं ददाति यो नित्यं देवस्यायतनेषुच ।
चतुष्पथेषुरथ्यासुरूपवान् सुभगोभवेत् ॥

प्रत्येक पुण्यकाल जैसे संक्रान्तिग्रहण, एकादशी विशेषतः आश्विन पूर्णमासी से कार्तिक पूर्णमासी तक मास भर घृत अथवा तेल के दीपों को मन्दिरों, नदियों, चौराहों आदि में जलाने से पुण्य प्राप्त होता है, द्रष्टव्य—अग्निपुराण, पृ० २००, अपरार्क, पृ० ३७०-७२, कृत्यरत्नाकर, ४०३-४०५, दानसागर, ४५८-४६२।

१३१. वही, ३८।३८, ३९, ज्वलमानं सदादीपं न हरेन्नापिनाशयेत् ।
दीपहर्त्ताभवेदंधस्तमोगतिरसुप्रभः ॥

१३२. वही, ३८।४०, यः सदार्चयेत्सूर्यंचन्दनागुरुकुंकुमैः ।
स पूज्यतेनरो नित्यं धनेनयशसाश्रिया ॥

१३३. वही, ३८।४१, रक्तचन्दनामिश्रैस्तुरक्तपुष्पैः शुचिर्नरः ।
उदयेर्वसदादत्वासिद्धिसंवत्सराल्लभेत् ॥

१३४. वही, ६८।४२, आदित्यव्रतमेतत्तुमहापातकनाशनम् ।

१३५. वही, ३८।४४, सुवर्णधेन्वनड्वाहवं सुधांवस्त्रसंयुताम् ।
अर्घंप्रदायलभतेसदा जन्मानुगफलम् ॥

१३६. वही, ३८।४५, अग्नौतोयेचांतरिक्षेषुशुचौभूम्यांतथैव च ।
प्रतिमायां तथा पिण्ड्यांदद्यादर्घं प्रयत्नतः ॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



हैं।[१३७] खिचड़ी, खीर, मालपुआ और मांसमिश्रित चावल से बलि देने वाला भक्त समस्त कामनाओं की पूर्ति कर लेता है। दूध, दही, घृत से तर्पण करके मनुष्य सिद्धि प्राप्त करता है।[१३८] जो समाहितचित्त होकर सूर्य के स्नानार्थ तीर्थों से जल लाता है, वह श्रेष्ठ गति प्राप्त करता है।[१३९] छत्र, ध्वजा, वितान, पताका एवं चँवर निवेदित करने वाले अभीष्ट वस्तु को प्राप्त करते हैं।[१४०] जो मनुष्य भक्तिपूर्वक सूर्य को द्रव्य दान करता है उसे सूर्य देव उसका सौ हजार गुना अधिक उत्पन्न करके देते हैं।[१४१] मानसिक, वाचिक तथा शरीरजन्य पाप सूर्य को प्रणाम करने से तत्काल ही नष्ट हो जाते हैं। सूर्य की एक दिन की पूजा करने से जो फल प्राप्त होता है वह फल पूर्वोक्त दक्षिणा वाले सैकड़ों यज्ञों से भी नहीं मिलता।[१४२]

प्रतिमा-स्थापना देखने से पाप-नष्ट होता है। सूर्य-स्थापना करने से दस अश्वमेध तथा सौ वाजपेय यज्ञों का फल प्राप्त होता है।[१४३] शास्त्रीय रीति से भक्तिपूर्वक सूर्य की स्थापना करने वाला व्यक्ति प्रतिमास यज्ञ का फल प्राप्त करता

---

१३७. वही, ३८।४७, ४८,

श्रीवासकतुरुष्काणांदेवदारोस्तथैव च ।
कर्पूरागुरुधूपानां दातारः स्वर्गगामिनः ॥

१३८, वही, ३८।५२, ५३,

क्षीरेण तर्पणं कृत्वा मनस्तापैर्न्नयुज्यते ।
दध्ना तु तर्पणं कृत्वा कार्यसिद्धिलभेन्नरः ॥

१३९. वही, ३८।५४, स्नानार्थमाहरेद्यस्तुजलंभानोः समाहितः ।
तीर्थाद्वाशुचिवार्यन्यत्सयातिपरमांगतिम् ॥

१४०. वही, ३८।५५, छत्रं ध्वजा वितानं च पताकां चामराणि च ।
श्रद्धयाभानवे दत्वा गतिमिष्टामवाप्नुयात् ॥

१४१. वही, ३८।५६, य, च द्रव्यं नरो भक्त्या आदित्यायप्रयच्छति ।
तत्तस्मच्छतसाहस्रमुत्पादयतिभास्करः ॥

१४२. वही, ३८।५८, एकाहेनापियद्भानोः पूजयाप्राप्यते फलम् ।
यथोक्तदक्षिणैरिष्टैर्नतु क्रतुशतैरपि ॥

१४३. वही, ३२।५३, दशानामश्वमेधानां वाजपेयशतस्य च ।
फलं प्राप्नोति पुरुषः प्रतिष्ठाप्यदिवाकरम् ॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



है।[१४४] सूर्य की एक दिन की भी पूजा से मनुष्य जो फल प्राप्त करता है वह न व्रत से न उपवास से और न ही दान से प्राप्त कर सकता है।[१४५] महान् से महान् पाप करने वाला व्यक्ति भी सूर्योपासना द्वारा निष्पाप होकर सूर्य-लोक पहुँच जाता है।[१४६] जो प्रयत्नपूर्वक देवताओं का मन्दिर बनवाता है उसकी कीर्ति विशाल होती है। वह दिव्य इच्छाओं को पूर्ण करता है तथा पृथ्वी में चक्रवर्ती होता है।[१४७] जो मनुष्य देवताओं की मूर्ति के लिए मन्दिर बनवाते हैं, मर जाने के बाद भी उनका कीर्तिमय शरीर इस ससार में पर्यटन करता रहता हैं।[१४८] जीवों की स्थिति, संहार और जन्म का कारण बनने वाले उन सूर्य की जो सेवा करता है, लक्ष्मी का भागीदार होता है तथा सौ कल्प भर सूर्य-लोक में निवास करता है।[१४९] इस प्रकार सूर्य की भक्तिपूर्वक उपासना करने से अनन्त सुखोपलब्धि होती है।

साम्बपुराण के द्वितीय समूह के अध्याय तान्त्रिक प्रभाव से युक्त हैं। द्वितीय समूह के अध्यायों का प्रारम्भ भी नवीं शताब्दी ईसवी से होता है। तन्त्रोपासना इस समय भारत में विकास के उत्कर्ष पर थी। विशेषतः पूर्वी भारत तन्त्र-मन्त्र से पूर्णतः प्रभावित था। उस समय जैन, बौद्ध एवं हिन्दू मत भी तान्त्रिक परम्पराओं

---

१४४. वही, ३२।५५, स्थापयित्वा रविं भक्त्या विधिदृष्टेन कर्मणा ।
मासे मासे क्रतुं फलं लभते नात्र संशयः ॥

१४५. वही, ३२।५६ एकाह्नेनापि यद्भानोः पूजया प्राप्यते फलम् ।
न व्रतैरुपवासैर्वा दानैर्वा तदवाप्यते ॥

१४६. वही, ३२।५७, कृत्वा तु यन्महत्पापं यः पश्चात्सेवते रविम् ।
स याति सूर्यलोके तु नरो विगत कल्मषः ॥

१४७. वही, ३२।६०,
यः प्रासादं रचयतिपुमान्देवतानांप्रयत्नात्कीर्त्तितस्यभवतिपुलावंशमार्गानुजाता ।
दिव्यान्कामानलभति च सदाकामतश्चाप्रमेयांस्तान्भुक्त्वासौपुनरपि भवेच्चक्रवर्त्ती पृथिव्याम् ॥

१४८. वही, ३२।६१,
तेषां मृतेप्यपरमार्थमयेशरीरेलोकेपारभ्रमतिकीर्तिमयं शरीर ।

१४९. वही, ३२।५९,
इत्येवं सुखयतितस्ययश्चभानोर्भूतानांस्थिति निलयप्रसूतिहेतोः ।
श्रीभागी भवति नरो निकेतकाराकल्पानां वसति शतं च सूर्य लोके ॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



का प्रभाव स्वीकार करने लगे थे। ऐसी संक्रमणकालीन वेला में सूर्य-सम्प्रदाय अपने को एवंविध तान्त्रिक प्रभाव से कैसे मुक्त रख सकता था। यही कारण है कि साम्बपुराण के द्वितीय समूह के पूरे के पूरे अध्याय तन्त्र-मन्त्र तत्व से समग्ररूपेण प्रभावित हैं।

उत्तरकालीन अध्यायों में सूर्य-पूजा, तन्त्र-मन्त्र तथा चक्रादि के माध्यम से होती थी। उस समय सूर्योपासना मण्डल द्वारा भी होती थी। विवेच्य अध्यायों में सूर्योपासना का विस्तृत विवेचन उपलब्ध होता है। दीक्षामण्डल[१५०] पर साम्बपुराण में प्रकाश डाला गया है। पहले क्रमशः दक्षिण, पूर्व, पश्चिम और उत्तर दिशा में भूमि का शोधन करना चाहिए।[१५१] थोड़ा सा खोदकर तथा चारों ओर पच्चीस अंगुल खोदकर स्थान को समतल बनाकर उस पर पानी बहा देना चाहिए।[१५२] उस स्थान पर ब्रह्मवृक्ष के समान बांस गाड़कर, चारों तरफ की भूमि को भलीभाँति समतल और सुन्दर बना देना चाहिए।[१५३] गूलर की लकड़ी का हल बनाकर तथा स्वर्ण का फाल लगाकर उस जमीन को जोतना चाहिए।[१५४]

---

१५०. दीक्षा की परम्परा वैदिक उत्पत्ति की है, द्रष्टव्य—तैत्तिरीय संहिता, ६।१।१।३; ७।४।८, ऐतरेय ब्राह्मण, १।३, शतपथ ब्राह्मण, ३।२।१।१९, २२, अथर्ववेद ७।१।१, किन्तु तान्त्रिक, परम्परा ने इसका विस्तार किया, द्रष्टव्य, प्रपंचसार, ५ एवं ६, कुलार्णवतन्त्र १४, ३६, शारदातिलक, पटल ४, नित्योत्सव, ४–१०, ज्ञानार्णव पटल, २४, विष्णुसंहिता, १०, महानिर्वाण तन्त्र, १०, ११२-११९, लिङ्गपुराण २।२१, रघुनन्दन दीक्षातत्व, २।६४५-६५९।

१५१. साम्बपुराण, ३९।७, यथाव्यवस्थितात्स्थानाद्भूमिनिष्क्रम्यशोधयेत्।

१५२. वही,, ३९।१२, रत्निमात्रमधः खातांसमतात्पंचविंशकम्।
कृत्वा तु समं देशं प्रागुदक्प्लवनंशुभम्॥

१५३. वही, ३९।१३, प्राग्वंशंतत्रकुर्वीतब्रह्मवृक्षमयंशुभम्।
परितः कारयेद्भूमिसुसमांशोभनां तथा॥

१५४. वही, ३९।१४, उदुम्बरमयं कृत्वालांगलंसुसमाहितः।
सौवर्णमुखसंयुक्तं तेन भूमिं तु वाहयेत्॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



चूने से लेप करके लाल चन्दन के जल तथा पंचगव्य[१५५] से सींचना चाहिए।[१५६] उस शोधित भूमि के उत्तरी ओर विशाल गुरु-भवन बनवाकर स्वयं गुरु[१५७] को समर्पित कर देना चाहिए।[१५८] मण्डलवेत्ता आचार्य के बैठे हुए स्थान पर ही जगत्पति लोकनाथ सूर्य[१५९] निवास करते हैं।[१६०] सूर्य भक्तों को अविकल्प या विकल्प योग समझकर कन्या द्वारा काते हुए सूत अथवा मन्दार की सूई से 'देवस्यत्व' मन्त्र द्वारा तीन बार उच्चारण करके तिहरे हुए सूत्र को सूर्य को समर्पित करना चाहिए।[१६१] सर्वप्रथम स्वर्ण-पात्र तथा तदनन्तर रजत एवं गूलर का

१५५. पंचगव्य में क्षीर, दधि, घृत, मूत्र तथा गोबर (गायका) की गणना होती है।

१५६. साम्बपुराण, ३८।१५, सेचयेत्पञ्चगव्येनरक्तचन्दनवारिणा।

१५७. गुरु की योग्यताओं का समुचित प्रतिपादन तन्त्रसार, १ में प्राप्त होता है—द्रष्टव्य, शारदातिलक, २-१४२-१४४, "सर्वाङ्गमानां सारज्ञः सर्वशास्त्रार्थतत्वविद्। अमोघवचनः शान्तो वेदवेदार्थ, पारगः योगमार्गनुसन्ध्यायी देवता हृदयाङ्गमः" तुलनीय कुलार्णवतन्त्र, उल्लास १२ एवं १३, शारदातिलक, १।१४५-५२ ज्ञानसिद्धि, १३।८।१२, प्रज्ञोप्रायविनिश्चयसिद्धि, ३८, १६।

१५८. साम्बपुराण, ३८।१८, तस्याचोत्तरपार्श्वेणकुर्यादगुरुगृहमहत् ।
संसारसंभृतः शिष्योगुरोदात्मानमर्पयेत् ॥

१५९. तान्त्रिक परम्परा में गुरु एवं देवता को एक ही माना गया है—द्रष्टव्य, योगिनीतन्त्र १, सरजानवुडराफ, इन्ट्रोडक्शन टू तन्त्रशास्त्र, पृ० ६६, लिङ्गपुराण, १-८५, 'यो गुरूः सः शिवः स्मृतः, प्रपंचसार, ६।१२, शारदातिलक, ५।११३-११४, देवीभागवत ११।१।८, ब्रह्माण्डपुराण, ४३।६८-७०।

१६०. साम्बपुराण, ३८।२५, महामण्डलवेत्तातुह्यार्योयत्रतिष्ठति ।
तत्रतिष्ठतिदेवोसलोकनाथो जगत्पतिः ॥

१६१. वही, ३८।२८, अविकल्पंविकल्पंच योगं सर्वार्थसाधकम्।
कन्याकीर्तितसूत्रेण अर्कतूलमयो न वा ॥

३८।२९, वर्तयेत्रिवृत्तं सूत्रं ग्रन्थिकेशविवर्जितम्।
देवयस्त्वेतिमन्त्रेण त्रिरादित्यं न वा पुनः ॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



पात्र लेकर क्रमशः दिग्देवताओं को अर्घ्य प्रदान करना चाहिए।[१६२] फिर सूर्य का तीन मीठी वस्तुओं से युक्त तिलों द्वारा ओंम परमात्मा इन्द्र के लिए स्वाहा, ओंम अग्नि के लिए ( ठः ठः )[१६३] हविष्य प्रदान, ओंम धर्मात्मा यमराज के लिए ( ठः ठः ) हविष्य प्रदान, ओंम नैऋत्य के लिए ( ठः ठः ) हविष्य प्रदान, ओंम स्पर्शात्मा वायु के लिए (ठः ठः) हविष्य प्रदान, ओंम चन्द्रमा के लिए (ठः ठः) हविष्य प्रदान, ओंम ज्ञानात्मा ईशान के लिए (ठः ठः) हविष्य प्रदान[१६४], ओंम तेजोरूप उस श्रेष्ठ परमात्मा की शरण में हम जाते हैं, वह हमें तेजस्वी बनाए, कहना चाहिए।

प्राचीन ऋषि मण्डल[१६५] के महत्व से सुपरिचित थे। मण्डल-निर्माण प्रक्रिया पर प्रकाश डालते हुए कहा गया है कि आठ अंगुल की कर्णिका, केसर, कर्णक तथा पद्म होना चाहिए।[१६६] पद्म के बराबर द्वार, प्रकोष्ठ द्वार के बराबर तथा

---

१६२. वही, ३९।३०, हेमपात्रंप्रगृह्यादौरोप्यमौदुम्बरं क्रमात् ।
अर्घ्यंदत्वादिगीशेभ्योयथापूर्वक्रमेणतु ॥

१६३. 'ठ' विपत्तिनाशक वर्ण हैं—द्रष्टव्य—साम्बपुराण, ४०।९,
ऊंशितिने ठः ठः विकटः, ऊं अशितिने ठःठः वामनः॥

१६४. वही, ३९।३२, ३३,
ॐ इन्द्राय परमात्मने स्वाहा। ॐ अग्नयेशुचिष्मते ठः ठः॥
ॐ यमाय धर्मात्मने ठः ठः। ॐ नैऋत्येकालात्मने ठः ठः॥
ॐ वरुणाय सलिलात्मने ठःठ। ॐ वायवेस्पर्शात्मने ठः ठः॥
ॐ सोमायामृतात्मने ठः ठः। ॐ ईशानायज्ञात्मने ठः ठः॥
ॐ परायविद्महेतेजोरुपाय धीमहि। तन्नस्तेजः प्रचोदयात्॥

१६५. वैदिक गायत्री के अनुकरण पर तान्त्रिक गायत्री मन्त्र का विधान किया गया है जो शूद्र एवं स्त्रियाँ जप सकती थीं। इसकी तुलना महानिर्वाणतन्त्र के ब्रह्म गायत्री मन्त्र, ३।१०९।१११ 'परमेश्वराय विद्महे परतत्वाय धीमहि, तन्नो ब्रह्म प्रचोदयात् से की जा सकती है।

१६६. तान्त्रिक-पूजा का एक अभिन्नस्वरूप मण्डल था जिसकी उत्पत्ति वैदिक वाङ्मय में देखी जा सकती है—ऋग्वेद, ४।२८, २।५।२९।१०, तैत्तिरीय संहिता ५।३।९।२, शतपथ ब्राह्मण, ४।१।१।२५, बृहदारण्यक उपनिषद्, ५।५।२, २।३।३, तथापि मण्डल के माध्यम से पूजा पौराणिक एवं तान्त्रिक साहित्य की देन है। विस्तार के लिए, द्रष्टव्य—ऐरिक हाई, कान्ट्रीब्यूशंस टू द स्टडी आफ मण्डल एण्ड मुद्रा, पृ० ५७-९१।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



वीथि को प्रकोष्ठ के बराबर होना चाहिए।[१६७] गायत्री मन्त्र से चारों ओर मन्त्रित सफेद, लाल, पीला, हरा अथवा काले वर्ण का सूर्य मण्डल[१६८] का चित्र बनाना चाहिए।[१६९] चारों ओर बाहर से मण्डल की आकृति आठ हाथ की होनी चाहिए। मण्डल के अन्तःप्रदेश में द्वादश पत्रों से विभूषित कमल बनाना चाहिए।[१७०] उन्हीं पत्रों में सूर्य की द्वादश मूर्त्तियों को बैठाना चाहिए।[१७१] पुनः एक वर्ग का निर्माण करके उसमें वज्र, शक्ति, दण्ड, खड्ग, पाश, पताका, गदा, एवं त्रिशूल यथोचित रूप से बनाना चाहिए।[१७२] वेदों के बारह मंत्रांश सूर्य-देवता की बारह मूर्तियाँ अभीषवे, विष्णुधामच्छंदो, मनोज्योति, चत्वारिश्रृङ्ग, ते प्राणाय, अग्नि मीडे इषेत्वाऊर्जे, अग्नि आयाहि शन्नो देवो, कृत्यवासा तथा ब्रह्मज्ञानम् हैं।[१७३] इनके बीच में महाकाली, कल्पिका, प्रबोधिनी, नीलाम्बरा, धनान्तस्था

---

१६७. साम्बपुराण, ३९।३६, कर्णिकाष्टाङ्गुलाप्रोक्ताकेसरंतसमंस्मृतम् ।
कर्णिकाकेसरैस्तुल्यापद्मस्यपरिकीर्तिता ॥
३९।३७, पद्मतुल्यो स्मृतः द्वारः प्रकोष्ठोद्वारतुल्यकः ।
वीथिः प्रकोष्ठकंस्तुल्यास्थितिरेषाप्रकीर्तिता ॥

१६८. मण्डल के माध्यम से सूर्य-पूजा पूर्वकालीन पुराणों में भी प्रतिपादित है, द्रष्टव्य, मत्स्यपुराण, ७२।३०, ७४।६।९, तुलनीय ब्रह्मपुराण, २८।२८, ६१।१।३।

१६९. वही, ३९।३८, सितरक्तं तथापीतं हरित कृष्णमेव च ।
आलिखेन्मंडलंमंत्रीगायत्र्यापरिमंत्रितम् ॥

१७०. वही, ३९।३९, अष्टहस्तंसमंतातुवाह्यतोमंडलाकृतिः ।

१७१. वही, ३९।४०, तन्मध्येतुलिखेतपद्मं पत्रद्वादशभूषितम् ।

१७२. वही, ३९।४०, मुर्त्तिद्वादशकंतेषुनिवेशेत्तुविधानवित् ।
३९।४१, चतरस्त्रपुनः कृत्वावाह्यतोरत्रपमालिखेत् ।
वज्रशक्ति च दडं च खड्गपांशतथैव च ॥

१७३, वही, ३९।४४, अभीषवेइदंविष्णुधामच्छंदोमनोज्योतिश्चत्वारिश्रृंगास्ते
प्राणायअग्निमीडेइषेत्वोर्ज्जे ।
अग्निआयाहिशन्नो देवीकृत्तिवासाब्रह्मयज्ञानमितिय-
द्देवाद्वादशमूर्त्तयः ॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



तथा अमृता नाम से प्रसिद्ध मूर्ति का निर्माण करना चाहिए।[१७४] शुक्ल, जयन्त, विजय, अनेकवर्ण, हुताशन, हुतार्चि तथा व्यापक का शास्त्रोचित ढङ्ग से परे सूर्यमण्डल का आलेखन करके यज्ञ कुण्ड में पहले से ही प्रतिष्ठित की गयी अग्नि में पुनः संस्कार करना चाहिए।[१७५] 'शन्नो भवन्तु वनस्पत' इस उल्लेखन बिन्दु द्वारा परिसमूहन तथा उपलेखन करना चाहिए।[१७६]

अभ्यक्षण बिन्दु[१७७] द्वारा आद्याक्षर से अग्नि की स्थापना करके मन्त्र द्वारा सबको हविष्य देना चाहिए।[१७८] यज्ञ के अन्त में अन्न ग्रहण करके गुरु की सविधि पूजा करनी चाहिए।[१७९] वितान, ध्वजा, मालाओं तथा कलशों से

---

१७४. वही, ३९।४५, मध्येमुर्त्तिमहाकाली कल्पिका च प्रबोधिनी।
नीलाम्बराधनान्तस्था अमृता च प्रकीर्त्तिता ॥

१७५. वही, ३९।४६, ४७,
शुक्लोजयन्तोविजयोनैकवर्णोहुताशनः ।
हुतार्चिव्यापकश्चैवअश्वाः सप्तप्रकीर्त्तिताः ॥
एवंमालिख्यंविधवन्मंडलंशास्त्रपूर्वकम् ।
पूर्वप्रतिष्ठितेवह्नौसंस्कारकारयेत्पुनः ॥

ध्यातव्य है कि सप्ताश्व (शुक्ल…) अनाहत चक्र (हृदय के पास) का स्मरण कराते हैं। इसमें द्वादश पत्रीय कमल का विधान है, जिसमें वायुमण्डल एवं सूर्य-मण्डल होते हैं और मध्य में शक्तिकाकिनी पाश कपाल आदि से युक्त होती हैं, द्रष्टव्य, वुडराफ, द सरपेन्ट पावर, पृ० ३८२-८३.

१७६. वही, ३९।४८, शन्नोभवन्तुवनस्पदित्युल्लेखनबिन्दुना ।
परिसमूहनंतत्रगायत्र्या चोप्रलेपनं ।

१७७. शिव शक्ति की एकात्मकता से उद्भूत बिन्दु परम तत्व है। उससे सृष्टि का क्रम प्रवर्तित होता है।

१७८. साम्बपुराण, ३९।४८, अभ्युक्षणबिन्दुना ।
आद्याक्षरसंयुक्तेन अग्नेः स्थापनमुत्तमम् ॥
संवृत्यार्धं तु गायत्र्याहोमयेज्जातवेदसम् ॥

१७९. वही, ३९।५०, होमान्तेप्राशनंकृत्वागुरुदेवं प्रपूजयेत् ।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



विभूषित ढंग से सूर्यमण्डल का चित्र बनाकर पूजा करनी चाहिए।[१८०] सूर्य की पूजा करके, अभिषेक तथा प्रदक्षिणा करके शिष्य के मण्डल में प्रविष्ट हो जाने पर तत्वन्यास[१८१] सम्पन्न करना चाहिए।[१८२] अष्टमूर्तियों के लिए हविष्य प्रदान करके मन्त्रन्यास[१८३] किए हुए अभिषिक्त व्यक्ति को दीक्षायोग से युक्त करना चाहिए।[१८४] प्रज्वलित अग्नि में घृताहुति देकर पाक यज्ञपात्र से सात आहुतियाँ देनी चाहिए।[१८५] इस प्रकार विधान सहित गुरु अग्निकुण्ड से भस्म लेकर शिष्य की देह में पाँच स्थानों पर लगाए।[१८६] अन्त में गृह समेत समस्त उपकरणों को बिना प्रार्थना किये हुए विधानपूर्वक दीक्षा करने वाले गुरु को दे देना चाहिए।[१८७]

---

१८०. वही, ३९।५२, वितानध्वजमालाभिः कलशैश्चविभूषितम् ।

१८१. न्यास एक तान्त्रिक पूजा कृत्य है जिसका तात्पर्य है शरीर के शुद्ध अंगों पर अवस्थित होने के लिए किसी देवता या मन्त्र का मानसिक रूप से आह्वान करना जिससे शरीर पवित्र हो जाए। न्यास के अनेक प्रकार हैं जिसमें तत्वन्यास भी एक है, द्रष्टव्य, देवप्रतिष्ठातत्व, पृ० ५०५.

१८२. वही, ३९।५६, ५७, कृत्वाभिषेकंमंत्रोक्तंपुनः कृत्वाप्रदक्षिणाम् ।
प्रविष्टेमंडलंशिष्येतत्त्वन्यासंप्रकल्पयेत् ॥

१८३. मन्त्रन्यास, न्यास का एक प्रकार है, द्रष्टव्य, जयाख्यसंहिता, पटल ११, प्रपंचसार, ६, कुलार्णव तन्त्र, ४।१८, शारदातिलक, ४।२९-४१, ५०५-७, महानिर्वाणतन्त्र, ३।४१-४३, ५।११३, ११८।

१८४. साम्बपुराण, ३९।५८, अष्टमूर्त्तीनांचोदितैमंत्रैरश्मिभिस्सुमुदाहृतम् ।
एवं कृतंमंत्रन्यासमभिषिक्तंदीक्षायोगेनयोजयेत् ॥

१८५. वही, ३९।५८,
उपविश्यघृताहुतयः पाकयज्ञपात्रेणसप्ताहुतयः पूर्वोक्तमंत्रेणजुहुयात् ।

१८६. वही, ३९।५८,
एवंकृत्वाविधानंतुशिष्यंगुरुरग्नि कुण्डाद्भस्मादायपंचभिः स्थानैमुर्घ्नालिभेत् ।

१८७. वही, ३९।५९, गुरवेगृहसमेतंसर्वोपकरणंदद्यात् तथाप्रार्थितं चेति ।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



इसके पश्चात् पूर्व आदि के दिक्पालों[१८८] की पूजा करके विकट, वामन, लम्बोदर, हेमगर्भ, भीमवेग, सौम्यरूप, पंचात्मक, विदेह, धर्म-विग्रह, अहिरबुन्ध्य, काल एवं उपकाल को हविष्य देना चाहिए।[१८९] उत्तर दिशा में शिखिलिङ्ग, योगेश्वर, त्रिशाखा, शतक्रतु, पंचशिख, सहस्त्रकिरण, सुवर्णकेतु, पद्मकेतु, यज्ञरूप, भुवनाधिपति, पद्मनाभ को, प्रारम्भ में ओंम, बाद में ठः ठः के साथ हविष्य देना चाहिए।[१९०] समस्त दिक्कपालों की पूजा करके घी अथवा खीर सहित पांच-पाँच

---

१८८. दिक्पालों की पूजा का विधान वैदिक परम्परा में भी था, द्रष्टव्य, तैत्तिरीय सहिता, ५।५।१०, गोभिल गृह्यसूत्र, १४।४।७।३७-४२, परन्तु पौराणिक उपासना पद्धति में इसका विस्तार हुआ। बौद्ध एवं जैन परम्पराओं में भी दिक्पालों की पूजा का विधान था। विभिन्न स्त्रोतों में इनकी संख्या (४।६।८।१० आदि) एवं नाम आदि भिन्न-भिन्न उल्लिखित हैं, द्रष्टव्य, बनर्जी, जे० एन०, द डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी, पृ० ५१९-५२९, महानिर्वाणतन्त्र में ८, १०, दिक्पालों का वर्णन किया गया है, पृ० १४४।

१८९. साम्बपुराण, ४१।१,

अतः परंतुदिक्पालान् पूर्वान्प्रभृतिपूजयेत्।
ऊं विकटाय ठः ठः ऊं वामनाय ठः ठः
ऊं लंबोदराय ठः ठः ऊं हेमगर्भाय ठः ठः
ऊं भीमवेगाय ठः ठः ऊं सौम्यरूपाय ठः
ऊं पंचात्मकाय ठः ठः ऊं विदेहाय ठः ठः
ऊं धर्मविग्रहाय ठः ठः ऊं अहिर्बुध्नाय ठः ठः
ऊं कालाय ठः ठः ऊं उपकालाय ठः ठः
ऊं पूर्वस्यांदिशिचैतान्पूजयित्वा।

१९०. वही, ४१।१,

उत्तरतः ऊं शिखिलिंगिने ठः ठः
ऊं योगेश्वराय ठः ठः ऊं त्रिशाखाय ठः ठः
ऊ शतक्रतवे ठः ठः ऊं पंचशिखाय ठः ठः
ऊं सहस्त्रकिरणाय ठः ठः ऊं सुवर्ण केतवे ठः ठः
ऊं पद्मकेतवे ठः ठः ऊं यज्ञरूपाय ठः ठः
ऊं भुवनाधिपतये ठः ठः ऊं पद्मनाभाय ठः ठः ॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

आहुतियाँ देनी चाहिए।[१९१] देवताओं से घिरे हुए शब्द-मूर्त्तिवाले[१९२] सूर्यदेव का आवाहन करके सविधि पुष्पों से अर्चना करनी चाहिए।[१९३]

साम्बपुराण में जप-यज्ञ-विधि का सम्यक् विवेचन हुआहै। जप-यज्ञ समस्त यज्ञों में सर्वोपरि है।[१९३] जप-यज्ञ करने वाले लोग श्रेष्ठ सिद्धि प्राप्त करते हैं।[१९४] मूंगा, सोना, मोती, मणि, रुद्राक्ष, पुष्कर (नीलकमल), कुश, अरिष्ट, जीव-पुष्प और शंख से सूर्य का यज्ञ करना चाहिये।[१९५] जप करने पर अच्छा फल मिलता है।[१९६] मूंगे, स्वर्ण, मोती, बहेड़े के बीज तथा जीवक से यज्ञ करने पर पृथक्-पृथक् फल प्राप्त होता है। जप करने वाले व्यक्ति को आचमन करके एक सौ आठ, चौवन अथवा सत्ताइस मनकों वाले माले से जप करना चाहिए।[१९७] जप करते समय संख्या की गाँठ का लङ्घन नहीं करना चाहिए। जप प्रसन्न-भाव से गायत्री मन्त्र द्वारा एक सौ आठ वार करना चाहिए।[१९८]

---

१९१, तान्त्रिक परम्परानुसार देवता का अभिव्यक्तिकरण वर्णों एवं शब्दों के द्वारा होता है, मन्त्र और देवता एक ही हैं, इसलिए सूर्य को शब्द-मूर्ति वाला कहा गया है, द्रष्टव्य, वुडराफ, द गारलैण्ड आफ लेटर्स, पृ० २१४-२२७.

१९२. साम्बपुराण, ४१।५, ज्ञानमंत्रार्चितोभूयः कुसुमैश्चविधानतः।

१९३. वही, ४७।२, सर्वेषामेवयज्ञानांजपयज्ञोविशिष्यते।

१९४. वही, ४७।३, कृतेन जपयज्ञेनपरासिद्धिमवाप्नुयात्॥

१९५. वही, ४७।६, प्रवालहेममुक्ताभिमणिरुद्राक्ष पुष्करैः।
दर्भारिष्टकजीवैश्चशंखेनच रविंयजेत्॥

१९६. विधान द्वारा मन्त्रोच्चारण ही जप है किन्तु मन्त्र का वास्तविक अर्थ जाने बिना उच्चारण व्यर्थ है, द्रष्टव्य, षटकर्मदीपिका, उद्धृत इन्ट्रोडक्शन टू तन्त्रशास्त्र, पृ० १०२, टिप्पणी—२

१९७. स्मृतिचन्द्रिका, १, पृ० १५३,
अष्टोत्तरशतां कुर्याच्चितुः पञ्चशिका च तथा।
सप्तविंशतिका कार्या ततो नैवाधमादिसा॥
तुलनीय साम्बपुराण, ४७।१४,
शतमष्टाधिकंचैव पंचाशदेव च।
सप्तविंशतिसंख्या वा अक्षसंख्योपदिश्यते॥

१९८. वही, ४७।१८, जयेन्मंत्री च सावित्र्या शतमष्टाधिकंशुचिः॥

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



सूर्य के लिए पिण्ड-पूजा का भी विधान है। विश्वात्मा, रथाङ्ग, खखोल्क, दीप्ति, अर्क, जगच्चक्षु, प्रभाकर, महातेज, महाश्वेता, अरुण, हरिकेश, पुंजकस्थली, छाया, ग्रहों तथा दिग्देवताओं को प्रणाम करके सूर्य-हृदय से समस्त आवाहनादि कार्य करना चाहिए।[१९९]

चन्द्रमा, मङ्गल, बुध, वृहस्पति, शुक्र, शनि, इन्द्र, अग्नि, यम, वरुण, वायु, कुवेर, शङ्कर, ब्रह्म तथा सर्वनागाधिपति शेष को प्रणामकर स्नान करना चाहिए। पूरक आदि प्राणायाम द्वारा सात बार खखोल्क मन्त्र से सूर्य को देखना चाहिए।[२००] हृदय, मस्तक मूल भाग, नेत्र, हाथ और हृदय आदि अंगों को तत्वयोगपूर्वक विन्यस्त करना चाहिए।[२०१] कमलासन पर आ ीन सूर्य देवता का आत्मा में ध्यान करना चाहिए।[२०२]

इस प्रकार निष्कल से सकल सूर्य का आवाहन करके सम्यक रूप से प्रसन्नचित्त होकर पूजा करनी चाहिए।[२०३] सूर्य-मन्दिर नदी-तट गोशालाओं,

---

१९९. वही, अ० ५०, हृदयेनैवकर्त्तव्यंसर्वमावाह्ननादिकम् ॥

यह अध्याय मन्त्रात्मक है, अतः इसमें पंक्तियाँ निर्धारित नहीं हैं।

२००. वही, ५१।३, पूरकाभ्यांखखोल्केनअर्कमीक्षेतसप्तधा ।

२०१. वही, ५१।८, हृदयोमूर्ध्निमूले तु नेत्रवर्त्मकरेषु च ।
हृदयादीनिचाङ्गानिविन्यसेत्तत्वयोगतः ॥

२०२. वही, ५१।९, सुशुभेद्वादशदले कमले च स्थितं तदा ।
आत्मानंचिन्त्येद्युक्तः शुद्धचामीकरप्रभम् ॥

तान्त्रिक पूजा में उपासक और उपास्य का तदात्म्य स्थापित करने का विधान है।

२०३. वही, ५२।१२, तद्वन्मंत्रादियोगेननिष्कलात्सकलोरविः ॥

याजक एवं मग सूर्य के दोनों ही रूप के उपासक थे। धूप, माला, जप तथा उपहार से वे सूर्य का भजन करते थे—द्रष्टव्य, स्टेटनक्रान, इण्डिश सोननप्रीस्टेर साम्ब एण्ड देई शाकद्वीपीय ब्राह्मण, सारांश, पृ० २७५-८१, श्रीवास्तव, वी० सी०, सन वरशिप इन ऐन्शियन्ट इण्डिया पृ० २६२।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



उपवनों, प्रफुल्लित कमल-वनों, नदियों, तालाबों, तीर्थों, पुष्प और फल से युक्त स्थान में पूजा करना उत्तम होता है।[२०४]

मन्त्र विधि के बिना पूजा निष्फल होती है। पूजा नमस्कार युक्त होने पर सौ गुना अधिक फलवती होती है।[२०५] रथादि तथा दिक्पालों की पूजा में मुद्रा सहित पूजा उत्तम है।[२०६] पहले आवाहन,[२०७] तब स्थापन, रोध, फिर पाद-प्रक्षालन, तदनन्तर क्रमशः अर्घ्य, स्नान, वस्त्र, लेपन, पुष्प, विभूषण और अन्य विधियों के द्वारा अंगों का तथा अन्यान्य देवों का यथाक्रम पूजन करना चाहिए।[२०८] कर्पूर, गुग्गुल, खस, अगरु, चन्दन और तुरुष्क के चूरों से सुगन्धित धूप दिखाना चाहिए।[२०९] भगवान् सूर्य को साठ दीपक समर्पित करके शंख से घोष करना चाहिए।[२१०] खखोल्क मन्त्र का जप करना चाहिए।[२११] पुष्प सहित चन्दन आदि से मन्त्र, मुद्रा, ध्यान योग आदि द्वारा एकाग्रचित्त होकर प्रातःकाल से प्रारम्भ करके बिना विराम के दोपहर तक मत्परायण होकर सम्पूर्ण पूजा करनी

---

२०४. वही, ५१।१३, मित्रालयेनदीतीरेगोष्ठेषुपवनेषु
प्रफुल्लपद्मखण्डेषुनदीपुसरसीषु च ॥
५१।१५, यत्र वा रमते ये च तत्र पूजा विधीयते।

२०५. वही, ५१।१७, सा चैव नमस्काराकर्तुः शतगुणाभवेत् ॥

२०६. वही, ५१।२१, रथस्यचरथादीनांदिगीशानांसमुद्रया ।

२०७. तांत्रिक पूजा के उपचारों में आवाहन, स्थापन, रोध, पाद-प्रक्षालन तथा विसर्जन आदि का उल्लेख किया गया है—दृष्टव्य, प्रिंसिपिल्स आफ तंत्र, पृ० ७८२-८४।

२०८. वही, ५१।२२, आगमः स्थापनंरोधः सान्निध्यंपाद्यमेव च।
अर्घः स्नानं तथा वा लेपनंकुसुमानि च ॥
५१।२३, अंगादीनां च देवानां शेषाँश्चान्यान्यथाक्रमम्।

२०९. वही, ५१।३२, कर्पूरगुग्गुलश्चैवह्यशीरागुरुचन्दनैः ।
तुरुष्कसारैः सर्जैर्वापोदेयः सुगंधिभिः ॥

२१०. वही, ५१।३५, षष्ठिप्रदीपान्सुबहून्दद्यादकार्यशक्तितः ।
शंखादिनिर्मितंर्घोषैदिव्यगोधारनैः स्वनैः ॥

२११. वही, ५१।३७. खखोल्कमूलमंत्रंचजपेच्चैवसूयत्नतः ।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



चाहिए।[२१२] ह्राचिरीटाचिंरीटरं मन्त्र[२१३] पढ़कर अरुण, सूर्य, अंशुमाली, धाता, इन्द्र, रवि, गभस्ति, यम, स्वर्णरेता, त्वष्टा, मित्र, तथा विष्णु को नमस्कार करना चाहिए। फिर हरिकेश, रथौजा, पुंजिकस्थल, ऋतुस्थल, विश्वकर्मा और रथस्वन, रथचित्रा, मेना, सहजन्या, विश्वव्यचा, माठर, प्रम्लोचन्ती, तार्क्ष्य, अरिष्टनेमि, विश्वाची, धृताची, अर्वागवसु, सेनजित, सुषेण, उर्वशी तथा पूर्वचित को भी नमस्कार करना चाहिए।[२१४] तदनन्तर दीप्ताननकुमार, घृणि, योगवह, विराट्, केशी, माठर, अनन्त, निक्षुभा, तेजोवाह आदि बारह[२१५] अर्कगणाधिपों, क्षुभा, मैत्री, प्रभा, श्यामा, रोचि, दीप्ति, सुवर्चला आदि सप्त माताओं[२१६] नवग्रह[२१७] तथा दिकपालों[२१८] को नमस्कार करना चाहिए। पहले खखोल्क तथा तदुपरान्त विघ्न, सहस्त्रकिरण और धीमहि आदि मन्त्रों द्वारा स्तवन करना चाहिए।[२१९]

---

२१२. वही, ५१।४८, समंसम्पादयेत्सर्वंक्लिष्टंमत्परायणम् ।।

२१३. वही, ५१।५९, ह्रांचिंरीटिचिरींटिरितिदीप्तांध्रिरितिस्मृतः ।।

२१४. वही, ५१।६८-७२, हरिकेशोरथः कृच्छोरथौजापुंजिकस्थलः ।
ऋतुस्थलोविश्वकर्मातथाचैवरथस्वनः ।।
रथचित्रोमेनाख्यः सहजान्यस्तथाप्सराः ।
विश्वव्यचारथप्रोतः सहासमाठरेणतु ।।
प्रम्लोचन्त्यनुम्लोचन्तीसंयद्वसुरथापरः ।
तार्क्ष्याचारिष्टेनभिश्चविश्वाचीचघृताचिका ।।
अर्वाग्वसुः सेनजिच्चसुषेणश्चोर्वसीस्तथा ।
पूर्वचितिश्चसंयोज्याः पूज्याः मंत्रविधानतः ।।

२१५. वही, ५१।७३, दीप्ताननः कुमारश्चघृणिर्योगवहोविराट् ।
केशीसूणपरष्ठौच माठरानन्तनिक्षुभाः ।।
५१।७४, तेजोवाहइतिख्याताद्वादशार्कगणाधिपाः ।।

२१६. वही, ५१।७५, क्षुभामैत्रीप्रभाश्यामारोचिर्दीप्तिः सुवर्चला ।

२१७. वही, ५१।७६, वक्रंशुक्रंगुरुं भौमं सौरिं केतुं बुधानन्नौ ।।

२१८. वही, ५१।७७, इन्द्रोग्निर्यमोनिऋ तिवरुणौवायुरेव च ।
कुबेरः शंकरोब्रह्मशेषश्चेतिदिगीश्वराः ।।

२१९. वही, ५१।८७, खखोल्कायेतिकृत्वायस्ततपश्चाद्विघ्नहेति च ।
सहस्रकिरणायेतिधीमहीति तु चापरं ।।



CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



भूमि को भली भाँति पवित्रकर अरुण से युक्त एक पहिये का रथ[२२०] बनाकर बारह दल का कमल उसके मध्य में अंकित कर, उस कमलदल में विद्यमान षडवीज और प्रणव से अन्वित सूर्य की पूजा करनी चाहिए।[२२१] भगवान् सूर्यदेव का ध्यान कर महाश्वेता, दण्डपाणि, अरुण, पिङ्गल, हरिकेश, रथ, रथौजस, विश्वकर्मा, अमला, प्रम्लोचा, तार्क्ष्य, अरिष्टनेमि, विश्वाची, घृताची आदि को विन्यस्त कर फिर चन्द्रादिक देवताओं को स्थापित करना चाहिए।[२२२] ओंम विश्वात्मा को प्रणाम, ओंम शुक्रज्योतिष को प्रणाम, ओंम चित्रज्योति को प्रणाम, ओंम सत्यज्योति को प्रणाम, ओंम ज्योतिष्मान् अग्नि को प्रणाम, ओंम शुक्र को प्रणाम, ओंम हरित को प्रणाम, ओंम अत्यग्नि को प्रणाम, इस मन्त्र से क्रमशः अश्वों का संग्रह करना चाहिए।[२२३] आह्लादन, स्थापन, संरोध, सन्निधापन, पाद्य, स्नान, वस्त्र, गन्ध, पुष्प, धूप तथा भूषणाद्वि मन्त्रों के द्वारा पूजा करनी चाहिए। बाद में उपसंहार तथा शुद्धि व विसर्जन मन्त्र पढ़ना चाहिए।[२२४]

२२०. वही, ५१।९५, एकचक्रंरथस्यचिन्तेयदरुणान्वितम्।

२२१. वही, ५१।९६, तत्रस्थंचिन्तयेद्देवंषड्वीजंप्रणवान्वितम्।

२२२. वही, ५१।१०२, १०५, १०८, १११,

महाश्वेतोदण्डपाणिररूर्णपिंगलस्तथा।
हरिकेशस्तथा चैन्द्रीरथकृच्छ्रथौजसौ॥
प्रमलोचाम्लोविसंयुक्तोदेवदेवस्य कीर्तितः।
संवद्धसूकत्तरस्थांतार्क्ष्यश्चारिष्ट्वनेमिनो॥
विश्वाची स घृताचीभ्यांसंयुक्तौसव्यवामतः।
दिग्विदिग्ग्रह पर्यन्ते चन्द्राद्याइन्द्रदिवक्रमात्॥

२२३. वही, ५१।११४ ऊं विश्वात्मने नमः। ऊं हृदयशुक्रज्योतिषे नमः।
ऊं चित्रज्योतिषे नमः। ऊं सत्यज्योतिषेनमः॥
ऊं हरिताय नमः। ऊं अत्यग्नये नमः।
एतेयथाक्रममश्वानांसंग्रहाः॥

२२४. वही, ५१।१६, प्रत्येक माहुतीर्दद्याद्येपूज्याः परिकीर्तिताः।
५१।१७, ऊं संहरसंहर विरोचनः ठः ठः। उपसंहारमंत्र॥
ऊं हिलहिलगच्छदेवयथागतः स्वाहा। विसर्जन मंत्र।

ध्यातव्य है कि यहाँ तान्त्रिक उपहारों का प्रतिपादन किया गया है, द्रष्टव्य, सरजान वुडराफ, प्रिंसिपिल्स आफ तन्त्र, पृ० ७८३, ७८५

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



सूर्य-व्रत का विधान एवं महत्व भी इन अध्यायों में विवेचित है। सप्तमी तिथि का विशेष फल बताया गया है। सप्तमियाँ सात बतायी गयी हैं[२२५]—प्रथम मन्दार के पत्तों से, द्वितीय काली मिर्चों से, तृतीय नीम के पत्तों से, चतुर्थ फलों से, पाँचवीं अनोदना, छठीं विजय सप्तमी[२२६] तथा सातवीं कामिका[२२७] सप्तमी। मन्दार सप्तमी व्रत माघ शुक्ल पक्ष में होता है। पंचमी पर सामान्य भोजन, षष्ठी पर उपवास, सप्तमी व्रत में मन्दार की पूजा, मन्दार पुष्प को खाना, अष्टकमल बनाना और सूर्य की विभिन्न नामों से पूजा करनी चाहिए।[२२८] मरिचसप्तमी व्रत में 'ओं खखोंल्काय' मन्त्र के साथ सौ मिर्चें खाने पड़ते हैं।[२२९] निम्ब सप्तमी व्रत वैशाख शुक्ल सप्तमी से प्रारम्भ कर एक वर्ष तक किया जाता है। कमल के चित्र पर 'ओं खखोल्काय नमः' मन्त्र का पारायण करना चाहिए।[२३०] फल

---

२२५. साम्बपुराण ४६।४, ५, ६,

सप्तम्यः सप्तकथितास्तासांनामानिमे श्रुणु।
अर्कसम्पुटकैरेकाद्वितीयामरिचैस्तथा ॥
तृतीया निबपत्रैस्तु चतुर्थी फलसप्तमी।
पंचम्यनादिनीस्यात्तुषष्ठीविजयसप्तमी ॥
सप्तमीकामिका नाम विधिमासन्निबोधमे ॥

२२६. सप्तमी व्रतों का विवेचन अन्य पुराणों तथा निबन्धों में भी किया गया है—द्रष्टव्य, मत्स्यपुराण ७४।८०, पद्मपुराण ५।२१-२१५-३२१, भविष्योत्तर पुराण, ४३।५३, नारदपुराण, १।११६।१-७२, कृत्यकलपतरु व्रत, १०३-२२५, हेमाद्रि चतुर्वर्गचिन्तामणि, व्रत, १।६३२, ८१०, व्रतरत्नाकर २३१-२५५

२२७. कामिका अशुद्ध प्रतीत होता है, कामदा होना चाहिए, क्योंकि कामिका व्रत सप्तमी पर न होकर मार्गकृष्ण द्वितीया पर होता है जिसमें स्वर्णचक्रप्रतिमा का पूजन होता है। कामदा सप्तमी व्रत का फाल्गुन शुक्ल सप्तमी पर विधान है जिसमें सूर्य-पूजा होती है, द्रष्टव्य, भविष्य-पुराण, १।१०५, १९, उद्धृत हेमाद्रिव्रत, कृत्यकल्पतरु, १६९-७२।

२२८. हेमाद्रि, चतुर्वर्गचिन्तामणि व्रत १।६५०-६५२, पद्मपुराण, ५।२१, २९२-३०६, कृत्यकल्पतरुव्रत, २१९-२२१, मत्स्यपुराण, ६।१।१५।

२२९. हेमादिव्रत, १।६९६

२३०. हेमाद्रि, वही, १।६९७, ७०१, निर्णयामृत, ५२

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



सप्तमी भाद्रपद शुक्ल सात एवं मार्गशुक्ल सात पर होती है।[२३१] अनोदना सप्तमी में ओदनरहित भोजन करना चाहिए।[२३२] विजय सप्तमी रविवार से युक्त शुक्ल सात पर होती है। इस व्रत में केवल रात-दिन वायु का भक्षण करना चाहिए।[२३३] कामिका (कामदा) सप्तमी का पालन अलग-अलग पत्तों पर नाम लिखकर तथा प्रतिपादित विधि द्वारा करना उत्तम होता है।[२३४] इन सप्तमियों का वर्णन स्वयं भगवान् सूर्यदेव ने किया है। मन्दार सप्तमी व्रत से धन, मरिच सप्तमी से प्रिय व्यक्ति का मिलन, निम्ब सप्तमी से रोग-नाश, फल सप्तमी से अभीष्ट प्राप्ति, अनोदना से धन-धान्य, विजया से विजय तथा कामदा से समस्त कामनाएं पूर्ण होती हैं।[२३५] इस व्रत का पालन करने वाले भक्त सूर्यलोक जाते हैं। ऐसे व्यक्ति कभी अन्धे, कोढ़ी, पुरुषार्थविहीन (नपुंसक), अंगहीन तथा निर्धन नहीं होते।[२३६] पत्नी, सवारी, घोड़ा, हाथी तथा अन्य विविध तत्वों की प्राप्ति होती है।[२३७] विद्यार्थी को विद्या, धनेच्छु को वैभव तथा स्त्री-इच्छुक व्यक्ति को रूपवती भार्या मिलती

---

२३१. कृत्यकल्पतरु व्रत २०४-२०५, हेमाद्रि व्रत, १।७०१, ७०२, भविष्य-पुराण, १।२, २१५, २४-२७, मत्स्यपुराण, ७६।१।१३, पद्मपुराण, ५।५१-२४९-२६२।

२३२. हेमाद्रि, वही, व्रत, ७०२-५, कृत्यकल्पतरुव्रत २०५-२०८, कृत्यरत्नाकर, १२१-१२३।

२३३. हेमाद्रि, वही, व्रत, १, पृ० ७०७-७१६, गरुड़ पुराण, १।१३००, ७, ८, ९

२३४. साम्बपुराण, ४६।१६, इत्येतासप्तसप्तम्यः स्वयं प्रोक्ताविवस्वता।

२३५. वही; ४६।१७, अर्कसंपुटकैर्वितमरिचैः प्रियसंगमम्।
कुर्वीति यो नरः सांब सर्व पापैः प्रमुच्यते।

४६।१८, निम्बपत्रै रोगनाशं फलैः पुत्रान्यथेप्सितम्।
धनधान्यमनोदन्यांविजये विजयं तथा।

२३६. वही, १६।२३, यत्फलं समवाप्नोतिचरित्वा सप्तमीव्रतम्।
सूर्यलोकेषु नियतं वासो नैवात्रसंशयः॥

१६।२४, नान्धो न कुष्ठी न क्लीवो व्यंगोनापिचनिर्धनः।

२३७. वही, १६।२५, नारीहस्त्यश्वयानानांविविधानां च वाससाम्।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



है। सन्तान चाहने वाले को सन्तान की प्राप्ति होती है।[२३८] सातों सप्तमियों के समाप्त हो जाने पर सूर्य की माला तथा धूप से अर्चना करके ब्राह्मणों को भोजन कराने वाला व्यक्ति अक्षय स्वर्ग प्राप्त करता है।[२३९] इस प्रकार प्रत्येक मास एकाग्रचित्त होकर सूर्योपासना करने वाला व्यक्ति इहलोक में सुख प्राप्त करके सूर्यलोक में समृद्धि प्राप्त करता है।[२४०] सूर्यभक्त के लिए कुछ भी अप्राप्तव्य नहीं रह जाता।

निष्कर्षरूपेण प्रतिपादित किया जा सकता है कि साम्बपुराण के उत्तर-कालीन समग्र अध्याय तन्त्रोपासना पद्धति से प्रभावित हैं। तन्त्र, मन्त्र, बीज एवं न्यासादि तान्त्रिक तत्व प्रत्येक अध्याय (उत्तरकालीन) में बिखरे पड़े हैं तथा उनका उल्लेख प्रायशः उसी क्रम में अनेक बार आया है जो इस तथ्य का प्रबल संपोषक है कि तन्त्र-पद्धति ने पूर्वमध्यकालीन सूर्य-पूजा-विधि को समग्ररूपेण प्रभावित किया था।

ध्यातव्य है कि वैदिक एवं तान्त्रिक प्रभावों से युक्त अध्यायों में सूर्योपासना को सरल एवं लोकप्रिय बनाने का विशेष प्रयास किया गया है। सूर्य का मन से स्मरणमात्र भी सूर्योपासनान्तर्गत विशिष्ट महत्व का बताया गया है।[२४१] पूजा के इस सरलतम रूप के कारण ही सौरधर्म पूर्व-मध्यकाल में लोकप्रिय एवं व्यापक बन सका था।

## दार्शनिक तत्व

पूर्व मध्यकाल में सौर धर्म को विभिन्न धर्मों ने प्रभावित किया। सौर धर्म ने भी अन्य मतों एवं धर्मों को विशेषरूपेण प्रभावित किया। सांख्य, योग, शैव एवं तान्त्रिक दर्शन के प्रभाव से सौरधर्म की लोकप्रियता में पर्याप्त वृद्धि हुयी।

---

२३८. वही, ४६।२६, विद्यार्थीलभेत विद्यांधनार्थीधनमाप्नुयात्।
४६।२७, भार्यार्थी रूपसंपन्नांलभेदभार्याकुलोद्भवाम्।
पुत्रार्थीश्रुतसंपन्नांल्लभेतपुत्रांश्चरायुषः ॥

२३९. वही, ४६।३०, अभ्यर्च्यसूर्यसप्तम्यां माल्यधूपादिभिर्नरः।
४६।३१, भोजयित्वा तु द्विजान्भक्त्या प्राप्नुयात्स्वर्गमक्षयम्।

२४०. वही, ४६।४०, एवं यजेद्विवस्वतं प्रतिमासं समाहितः।

२४१. वही, ३६।५३, व्याहारातस्मरणाश्चैवतेषांप्रीतोभवेद्रविः।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



सांख्य दर्शन ने सौर धर्म को हर प्रकार से प्रभावित कर रखा था जिसका उल्लेख साम्बपुराण में आता है। सूर्य के दार्शनिक विवरण पर सांख्य दर्शन का प्रभाव डा० हाजरा ने भी स्वीकार किया है।[२४२] सांख्य के ज्ञानी, योगी तथा मोक्षाकांक्षी लोग निरन्तर सूर्य की आराधना में विश्वास करते थे।[२४३] सृष्टि की उत्पत्ति सांख्य दर्शन के आधार पर प्रतिपादित की गयी है। अव्यक्त से प्रकृति, प्रकृति से सदासद्गुण वाला महत्, महतत्त्व से अहङ्कार और अहङ्कार से समस्त इन्द्रियों की सृष्टि हुयी।[२४४] प्रकृति से महान् पुरुष को तथा पुरुष से महान् ईश्वर को निरूपित किया गया है, उसी ईश्वर से यह संसार व्याप्त है।[२४५] मोक्षादि के प्राप्त्यर्थ भी सांख्य में दीक्षित होना परमावश्यक था। साख्य मतानुयायी अन्त में पुरातन शरीर का त्यागकर विधिवत् शुद्ध होकर तेजराशि भगवान् सूर्यदेव की शरण में जाते थे।[२४६] जनक इत्यादि गृहस्थ राजर्षिगण, ब्रह्मचारीगण, वानप्रस्थी, भिक्षुकगण

---

२४२. हाजरा, आर० सी०, स्टडीज, भाग १, पृ० ५६-५७

२४३. साम्बपुराण, १४।३०,

अतः सांख्याश्चयोगाश्चयेचान्येमोक्षकांक्षिणः।
ध्यायन्तिध्यानिनोनित्यं हृदयस्थ दिवाकरम्॥

२४४. वही, ५१।१४६,

अव्यक्तात्प्रकृतिर्जज्ञे महांस्तुसद्सद्गुणः।
महत्तत्वदहंकारस्तस्मात्सर्वेन्द्रियाणि च॥

द्रष्टव्य, लारसन, जी० जे०, द क्लासिकल सांख्य, पृ० १६६-२२७, सांख्यदर्शन मूलक, सृष्टि की उत्पत्ति पर प्रकाश डाला गया है।

४४५. वही, १९।१६,

ततोमहान्प्रधानं च प्रकृतिः पुरुषस्ततः।
पुरुषादीश्वरोज्ञेय ईश्वरेणवृतंजगत्॥

२४६. वही, २।१४,

योगिनश्चान्तेसांख्याश्चदेहंत्यक्त्वापुरातनम्।
संशुद्धास्तुविशन्त्यस्मिस्तेजोराशौदिवाकरे॥

भविष्यपुराण, १।६६।५५,

योगिनश्चात्रसंलीनास्त्यक्त्वागृहकलेवरम्।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



तथा पंचशिख[२४७] साधकगण योग का आश्रय लेकर सूर्य मण्डल में प्रवेश किये थे।[२४८] इस प्रकार सौरधर्म पर सांख्य दर्शन का प्रभाव सहज स्वीकार्य है।

सौरधर्म को योगदर्शन ने भी किसी न किसी रूप में प्रभावित किया था। साम्बपुराण में योगतत्वों को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। प्राणायाम,[२४९] प्रत्याहार,[२५०] धारण,[२५१] पद्मासन,[२५२] कुम्भक, रेचक तथा पूरक[२५३] आदि यौगिक तत्व यहाँ उल्लिखित हैं। तत्वज्ञान के प्राप्त्यर्थ चित्त-शुद्धि

२४७. यह सांख्य का एक सम्प्रदाय है, द्रष्टव्य, महाभारत, गीता संस्करण, १२।२११-२१२, कीथ, ए० बी०, द सांख्य सिस्टम, पृ० ४७-४९, लारसन, जी० जे०, क्लासिकल सांख्य, पृ० १०६-१५०

२४८. साम्बपुराण, २।१६, गृहस्थाजनकाद्याश्चराजानोयोगधार्मिकाः ।
बालखिल्यादयेश्चैव ऋषयोब्रह्मचारिणः ॥
२।१७, वानप्रस्थाश्चवर्ण्याद्याभिक्षुः पंचशिखस्तथा ।
शुकोव्यासात्मजः श्रीमान्योगधर्मभवाप्यज्ञः ॥

२४९. वही, २८।७, प्राणायामैर्देहे दोषं धारणाभिश्चदुष्कृतम् ।
प्रत्याहारेणविषयान्ध्यानेनानीश्वरान् गुणान् ॥

प्राणायाम का तात्पर्य श्वांस नियन्त्रण से है—द्रष्टव्य, दत्त एवं चटर्जी, भारतीय दर्शन, पृ० १९३-१९४।

२५०. प्रत्याहार का अर्थ इन्द्रियों को अपने-अपने बाह्य विषयों से खींचकर हटाना और उन्हें मन के वश में करना है—दत्त एवं चटर्जी, वही, पृ०, १९३-१९४।

२५१. धारणा से अभिप्राय चित्त को अभीष्ट विषयों पर केन्द्रित करने से है—दत्त एवं चटर्जी, वही, पृ० १९३-९४

२५२. साम्बपुराण, २८।१६, स्थिताः पद्मासनेधीरानाभिसन्यस्तपाणयः ।
पद्मासन योग-दर्शन के अष्टांग साधन में परिगणित है—दत्त एवं चटर्जी, वही, पृ० १९३.

२५३. वही, २८।१७, सुषुम्नाभिमार्गं च कुंभकरेचकपूरकैः ।
त्रिभिः संशोध्यतान्पंचमरुतो देहमध्यमाम् ॥

पूरक, कुम्भक तथा रेचक प्राणायाम के तीन अंग हैं। पूरक का तात्पर्य है पूरी श्वांस भीतर खींचना, कुम्भक का अभिप्राय है, श्वांस को भीतर रोकना तथा रेचक का अभिधेयार्थ श्वांस को नियमित विधि से छोड़ने से है।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



परमावश्यक मानी जाती थी। चित्त-शुद्धि योग के अष्टांग साधनों से ही प्राप्त की जा सकती थी। मोक्ष के लिए प्रज्ञा तथा प्रज्ञा के लिए अष्टांग मार्ग पर बल दिया जाता था। अष्टांग मार्ग के नियमान्तर्गत शारीरिक तथा मानसिक शुचिता का ध्यान रखा जाता था।[२५४] पवित्रता, शुचिता तथा स्वच्छता व्यक्तियों के लिए अनिवार्य धर्म वैदिक, पौराणिक तथा आगम साहित्य में भी प्रतिपादित है। उल्लेखनीय है कि उपासना में पवित्रता को विशेष महत्व दिया गया है जो सौर-धर्म के नीतिपरक स्वरूप को व्यक्त करता है।[२५५] इस प्रकार योगदर्शन ने सौर-धर्म को प्रभावित कर उसके अन्तरंग स्वरूपमें व्यापक परिवर्तन किया था जिससे उसके स्थायित्व को बल मिला।

सौरधर्म को शैव मत ने सर्वतोभावेन प्रभावित किया था। प्रकारान्तर से सौर-धर्म ने भी शैव दर्शन को इतना प्रभावित कर रखा था कि कहीं-कहीं सौरधर्म के समक्ष शैवमत गौण प्रतीत होने लगा था। भगवान् शङ्कर पापमुक्त होने के लिए सूर्यलोक गए थे। भगवान् सूर्यदेव ने भी शङ्कर को शरण देकर विशुद्ध किया था।[२५६] सूर्य एवं शिव की एकात्मकता पूर्वमध्यकाल में स्थापित हो गयी थी।[२५७] साम्बपुराण के उत्तरकालीन अध्याय तान्त्रिक शैव प्रभाव से पूर्णतया

---

२५४. साम्बपुराण, ३६।११, शौचमेवंप्रशसन्तिशौचाज्ज्ञानंविधीयते।
द्रष्टव्य, दत्त एवं चटर्जी, पूर्वोद्धृत, पृ० १९२-९३।

२५५. श्रीवास्तव, वी० सी०, सनवरशिप इन ऐंन्शियन्ट इण्डिया, पृ० ५३-५४

२५६. साम्बपुराण, १६।२८, विहायतंदेशमजः स्वरूपीततोखखोल्कमथाजगाम्।
वही, १६।३३, त्यक्त्वा कपालंप्रविशुद्धमूर्तिर्भियासहस्थास्यतितत्रनित्यम्।
भगवान् शङ्कर को सूर्य की शरण में जाने पर कपाल का त्याग करना पड़ा था—द्रष्टव्य, डेविड, एन० लोरेन्जन, द कापालिकाज एण्ड कालामुखाज, पृष्ठ ७७-८०, मत्स्यपुराण में यह कथा प्रतिपादित है। अन्य पुराणों में भी इस कथा उल्लेख आता है।

२५७. साम्बपुराण, २७।२७, ब्राह्मीमाहेश्वरी चैव वैष्णवीचैव या तनुः।
एकस्सपुरुषोभूत्वाकारणादुद्वहास्थितिः ॥
अग्निपुराण, पृ० १६, हृत्पद्मे शिवसूर्याय नमः, द्रष्टव्य, श्रीवास्तव, वी० सी०, सनवरशिप इन बालि-ए हाइपोथीसिस, पुराणम्, (जनवरी, १९७५), भाग १७-१, पृ० ६७-६८।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



अनुप्राणित हैं। शिव की उपासना भैरव रूप में होती थी।[२५८] अतड़ियों की माला तथा नर-मुण्डादि का विवेचन शैव प्रभाव का अभिव्यञ्जक है।[२५९] पाशुपत अष्टपुष्प से शिव की पूजा करते थे।[२६०] शिव को योग तथा ज्ञानादि का शिक्षक प्रतिपादित किया गया है।[२६१] शिवतन्त्र के पदों द्वारा सम्यक्-ज्ञान करके लोग शीघ्र ही सिद्धि प्राप्त करते थे।[२६२] सौरोपासना का फल सूर्य-

२५८. साम्बपुराण, ६४।१, अथ.शूलान्गृहान्भैरवांश्चमहाबलान् ।

शिव के विनाशक रूप आठ बताए गए हैं, असितांग, रूरु, चण्ड, क्रोध, उन्मत्त, कापालिन, भीषण एवं संहार। कापालिक भैरव की पूजा करते थे—द्रष्टव्य, डेविड एन०, लोरेन्जन, द कापालिकाज एण्ड कालामुखाज, पृ० ८३-८५, सामान्यतः यह प्रचलित है कि भैरव भूत, प्रेतात्मा आदि के समान ही कष्ट देते हैं।

२५९. वही, ६४।५,६, अंत्वमालासमायुक्तंयाम्यांदिशिमुपाश्रितम् ।
कपालैर्बहुभिःश्चैवपरितः परिवेष्टयेत् ।।

द्रष्टव्य, डेविड एन०, लोरेन्जन, द कापालिकाज एण्ड काला-मुखाज, पृ० ८५-९०

२६०. वही, ८२।७, सत्यं चैवाष्टमंपुष्पमेभिः प्रीयेतवै शिवः ।

शिव की अष्ट पुष्पों द्वारा पूजा भारतीय धर्म साधना की परम विशेषता है, द्रष्टव्य, हर्षचरित, पृ० २१, १०३, पाठक, वी० एस०, हिस्ट्री आफ शैव कल्ट्स इन नार्दर्न इण्डिया, पृ० १७-१८, मजूमदार, आर० सी०, इन्सक्रिप्संस आफ कम्बुज, पृ० ३७७, के० भट्टाचार्य, द अष्टमूर्ति कन्सेप्ट आफ शिव इन इण्डोचायना एण्ड इण्डोनेशिया, आई० एच० क्यू, २९, पृ० २३३।

२६१. वही, ८०।१, देवंसंपूज्यसम्यक्चदक्षिणमूर्तिमाश्रितः ।

द्रष्टव्य, राव, इलीमेन्ट्स आफ हिन्दू आइकनोग्राफी २ (१), पृ० २७३

२६२. वही, ६८।४९, शिवतंत्रपदैर्बीजैः कालकालकृपादिभिः ।
बुद्धयागम्यग्यथान्याससिद्धिचाशु प्रवर्तते ।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



लोक की प्राप्ति बताया जाता है पर साम्बपुराण में शिवलोक की प्राप्ति का वर्णन है जो सुस्पष्टतः शैव प्रभाव का द्योतक है।[२६३]

ब्रह्मा, शंकर तथा विष्णु में समन्वयात्मक प्रवृत्ति के दर्शन होते हैं। ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश द्वारा सूर्य-स्तुति का उल्लेख प्राप्त होता है।[२६४] संहारकाल में सूर्य द्वादशादित्य के रूप में त्रैलोक्य को भस्म करते हैं, तथा वे ही ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश के रूप में क्रमशः सृष्टि, पालन और संहार करते हैं।[२६५] सृष्टि, स्थिति एवं विनाश का प्रतिनिधित्व करने वाले रजोगुणी ब्रह्मा, सत्वगुणी विष्णु तथा तमोगुणी महेश हिन्दू-दर्शन की त्रिमूर्ति धारणान्तर्गत परस्पर संयुक्त रहते हैं।[२६६] वायुपुराण[२६७] तथा स्कन्दपुराण[२६८] त्रिमूर्ति की एकात्मक अवधारणा की पुष्टि करते हैं। सूर्य–विष्णु, शक्ति, शिव तथा गणेश के रूप में भी प्रतिपादित

---

२६३. साम्बपुराण, ६८।१५, मतानिविपरीतानिध्यायेन्नित्यंसदाशिवम्।
द्रष्टव्य, श्रीवास्तव, वी० सी०, सन वरशिप इन ऐन्शियन्ट इण्डिया, पृ० ३६१-६३

२६४. वही, २४।२०, स्तूयसेत्वंसदादेवब्रह्मविष्णुशिवादिभिः ।

२६५. वही, ५१।१५९, संहारकाले च जगद्भूत्वासंवर्त्तकोऽनलः।
भस्मीकरोतित्रैलोक्यंद्वादशादित्यरूपकैः ॥

५१।१६०, स्वर्गधारणविद्यातः संहारान्प्रकरोति सः।
ब्रह्म विष्णु खखोल्कस्सरूपकैजगतः क्रमात्॥

द्रष्टव्य, श्रीवास्तव, वी० सी०, पूर्वोद्धृत, पृ० ३१७, ३१९, ब्रह्मा, विष्णु एवं सूर्य का समन्वयात्मक रूप विवेचित है।

२६६. पाण्डेय, एल० पी०, सन वरशिप इन ऐन्शियन्ट इण्डिया, पृ० ११६

२६७. वायुपुराण, ५१।१८, १९,
परस्परेणवर्तन्त धारयन्ति परस्परम्।
अन्योन्यमिथुनाह्येतेह्यनोन्यमुपजीविनः ।
क्षणं वियोगो न ह्येषां न त्यजन्ति परस्परम् ॥

२६८. स्कन्दपुराण, ब्रह्मखण्ड, धर्मारण्यमाहात्म्य, ५।१०१,
अयं हि रुद्र आदित्यो हरिरेष दिवाकरः।
रविर्हिरण्यरूपोऽसौ त्रयीरूपोऽयमर्यमा ॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



होने लगे थे।[२६९] सृष्टि, स्थिति एवं विनाश की शक्ति से समन्वित होने के कारण ही सूर्य की ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश से मूलभूत एकता स्थापित हो सकी थी।

त्रिमूर्ति की अवधारणा का पूर्ण विकसित रूप पौराणिक वाङ्मय में ही उपलब्ध होता है तथापि इसके तत्व वैदिक काल में भी उपस्थित थे। पूर्व-मध्य-काल के प्रारम्भ में हिन्दू-धर्म के अनेक सम्प्रदाय सर्वोच्च सत्ता के प्राप्त्यर्थ यत्नशील थे। उनके पारस्परिक प्रतिद्वन्दिता की प्रवृत्ति तत्कालीन पौराणिक वाङ्मय तथा कला में प्रतिबिम्बित होती है। सभी पुराण अल्पाधिक साम्प्रदायिक प्रवृत्ति से प्रेरित हैं। इसीलिए संज्ञामूलक पुराण प्रतिपाद्य देवता की प्रतिष्ठा स्थापित करने में यत्नशील रहे। प्रतिपाद्य देवता के वर्णन के समय उसी को सर्वोच्च बताकर अन्य देवताओं को अल्प महत्व का निरूपित किया गया है। गरुड़-पुराण विष्णु को सर्वोच्च बताकर शिव, दुर्गा, गणेश तथा सूर्य का वर्णन सामान्य प्रक्रम में करता है। शिव पुराण शिव को ही सर्वोच्च प्रतिपादित करता है। देवी पुराण शक्ति की सर्वोर्ध्वता प्रतिष्ठित करता है। साम्ब, भविष्य एवं सूर्य पुराण अन्य देवताओं का वर्णन करते हुए सूर्य को सर्वोच्च देवता प्रतिपादित करते हैं। अन्य पुराणों में भी एवंविध प्रवृत्ति परिलक्षित होती है।

तत्कालीन हिन्दू-धर्म के विभिन्न सम्प्रदायों में पारस्परिक प्रतिद्वन्दिता एवं प्रतिस्पर्धा के कारण मनुष्य के मन में एक आशंका उत्पन्न हो गयी थी कि समान महत्ता वाले देवताओं की समान रूप से पूजा न करने से वे उन्हें शापित कर सकते थे। धार्मिक प्रचारक अपने आराध्यदेव की पूजा की ओर लोगों को आकृष्ट करने का प्रयास कर रहे थे। परिणामस्वरूप लोग सूर्य, शिव, ब्रह्मा या विष्णु की ही नहीं अपितु इनके साथ-साथ और देवताओं की भी पूजा करने लगे। इस प्रवृत्ति के परिणामस्वरूप प्रत्येक देवता अपने आप में चार या पाँच स्वरूपों को धारण करने वाला हो गया तथा इस प्रकार त्रिमूर्ति या चतुर्मुख-मूर्ति की अवधारणा बलवती हो गयी। मन्दिरों में पञ्चायतन पूजा का भी समावेश हो गया।[२७०] भारतवर्ष के विभिन्न स्थलों से प्राप्त त्रिमूर्ति प्रतिमाओं और पञ्चायतन मन्दिरों की

---

२६९. स्कन्दपुराण, वैष्णवखण्ड, ३।४-५,

अहं विष्णुश्च शर्वश्च देवी विघ्नेश्वरस्तथा।
एकोऽहं पञ्चधा जातो नाट्ये सूत्रधरोयथा॥
अस्माकं सर्व एवैते भेदा विद्धि खगेश्वर।
तस्मात्सौरेश्च गाणैशैः शाक्तैः शैवैश्च वैष्णवैः॥

२७०. पाण्डेय, एल० पी०, पूर्वोद्धृत, पृ० १२०.

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



खोज से यह तथ्य सुस्पष्ट हो जाता है कि यह प्रवृत्ति उस समय सम्पूर्ण देश में व्याप्त हो गयी थी।

भारतवर्ष में त्रिमूर्ति-उपासना की अवधारणा के पीछे राजनीतिक कारणों का भी प्राधान्य था। मुस्लिम आक्रमणों के फलस्वरूप तत्कालीन हिन्दू-समाज में हिन्दू-धर्म के ऊपर इस्लाम धर्म की व्यापकता की भावना बलवती हो रही थी। एवंविध परिस्थितियों में एकता अत्यावश्यक थी। परिणामस्वरूप विदेशी धर्म के प्रतिरोध की शक्ति-प्रादुर्भूत करने के उद्देश्य से हिन्दू मतावलम्बियों ने विभिन्न सम्प्रदायों के मत-मतान्तरों को दूर कर त्रिमूर्ति की अवधारणा को विकसित करने का प्रयास किया।

त्रिमूर्ति के अवधारणा की पुष्टि पुरातत्त्वीय प्रमाणों से भी होती है। गुजरात तथा राजस्थान से सूर्य, विष्णु, शंकर तथा ब्रह्मा की अनेक संयुक्त मूर्तियाँ उपलब्ध हुयी हैं जो त्रिमूर्ति के समन्वयशील प्रवृत्ति की द्योतक हैं। देलमल[२७१] (उत्तरी गुजरात) में स्थित लम्बोजी माता के मन्दिर से १२वीं शताब्दी ईसवी की त्रिमूर्ति प्रतिमा प्राप्त हुयी है जिसमें मध्यस्थीय शीर्ष प्रदेश सिद्धपुर और धन्ब (गुजरात) के सूर्य-प्रतिमा के समान है। वाहनों एवं प्रतीकों के द्वारा यह प्रतीत होता है कि उक्त मूर्ति ब्रह्मा, विष्णु, शिव एवं सूर्य की संयुक्त मूर्ति है जिसमें सूर्य पर अधिक बल दिया गया है। ब्रह्मा, विष्णु, शिव एवं सूर्य की दूसरी संयुक्त मूर्ति किराडू[२७२] तथा हर्षनाथ (राजस्थान) से प्राप्त हुयी है जिसमें सूर्य को उत्कृष्ट स्थान दिया गया है। प्रभास (काठियावाड़) में सोमनाथ के सूर्यनारायण मन्दिर से पद्मासन पर ध्यान-मुद्रा-स्थित एक त्रिमूर्ति प्राप्त हुयी है जितमें सप्ताश्वों के रथ पर बैठे सूर्य की उत्कृष्टता प्रदर्शित की गयी है। यह प्रतिमा उत्तर एवं दक्षिण भारत से प्राप्त अन्य सूर्य-प्रतिमाओं से भिन्न प्रतीत होती है।[२७३] चिदम्बरम[२७४] मन्दिर से आठ हाथ तथा तीन शिर की खड़ी मुद्रा की सूर्य-प्रतिमा प्राप्त हुयी है जिसे त्रिमूर्ति से समीकृत किया जा सकता है। इसी प्रकार की त्रिमूर्ति प्रतिमाएँ खजुराहो[२७५] के दुलादेव के शिव मन्दिर

२७१. सांकलिया, एच० डी०, आंकियोंलाजी आफ गुजरात, पृ० १६३

२७२. शर्मा, दशरथ, राजस्थान थ्रू द एजेज, पृ० ३८१

२७३. सांकलिया, एच० डी०, पूर्वोद्धृत, पृ० १६२

२७४. शास्त्री, एच० कृष्णा, आइकनोग्राफी आफ साउथ इण्डियन गाड्स एण्ड गाडसेज, पृ० २३६, आकृति १५४

२७५. क्रैमरिश, स्टेला, हिन्दू टेम्पिल, भाग २, पृ० २७३-७४, प्लेट ६

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow.

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



तथा बंगाल (बुन्देलखण्ड)[२७६] से भी प्राप्त हुयी हैं। मांडा (राजशाही)[२७७] से १२ वीं शताब्दी ई० की तीन मुख तथा दस भुजाओं वाली एक प्रतिमा प्राप्त हुयी है जिसे मार्तण्डभैरव[२७८] के रूप में वर्णित किया जाता है। इस प्रतिमा में सूर्य एवं शिव का जो तादात्म्य स्थापित किया गया है, वह अग्निपुराण के संहरिणी-मन्त्र[२७९] से साम्य रखता है तथा सुस्पष्टतः सूर्य-पूजा पर तान्त्रिक प्रभाव को व्यञ्जित करता है। सारांशतः यह उल्लेख किया जा सकता है कि साम्बपुराण में वर्णित समाज में सूर्य की शिव, विष्णु तथा ब्रह्मा के साथ पूर्ण एकात्मकता स्थापित हो चुकी थी।

अन्य दर्शनों की भाँति तन्त्रोपासना ने भी सौर धर्म को पूर्णतया प्रभावित किया था। सामान्यतः तन्त्रोपासना का प्रारम्भ पाँचवीं शताब्दी[२८०] ई० से माना जाता है किन्तु उसके विकास का काल आठवीं शताब्दी ईसवी के बाद ही रखा जाता है। अभिप्राय यह है कि नवीं शताब्दी ई० में तान्त्रिक दर्शन ने शैव, वैष्णव, बौद्ध तथा जैन मत को प्रभावित करना प्रारम्भ कर दिया था।[२८१] पूर्व मध्यकाल में तन्त्रोपासना का चतुर्दिक प्रभाव फैल रहा था। गरुड़[२८२] एवं अग्निपुराण[२८३] जो तान्त्रिक परम्परा का सम्यक् विवेचन करते हैं, उसी समय प्रणीत किए गए थे। पूर्वमध्यकाल में सर्वत्र तन्त्र-मन्त्र का प्रचार-

---

२७६. राय बहादुर, हीरालाल, त्रिमूर्तीज इन बुन्देलखण्ड, इण्डियन एन्टीक्यूरी, मई, १९१८, भाग ४७, पृ० १३६-१३७

२७७. बनर्जी, जे० एन०, द हिस्ट्री आफ बंगाल, भाग १, पृ० ४५८, प्लेट १६

२७८. कालिका पुराण, ७४।११३ (बंगवासी सं०), पृ० ४७५

२७९. अग्निपुराण, ७३।१६, (बिब्लोयथिका इण्डिका सं०) भाग १, हृत्पद्मे शिवसूर्याय नमः।

२८०. पाँचवीं शताब्दी ईसवी में तन्त्रदर्शन से वैष्णव तथा शैव प्रभावित होने लगे थे। यह तथ्य भट्टाचार्य द्वारा प्रणीत जयाख्य-संहिता से भी प्रमाणित होता है—द्रष्टव्य, हाजरा, आर० सी०, पौराणिक रिकर्ड्स, पृ० २१८

२८१. शर्मा, आर० एस०, मैटीरियल मिलेयू आफ तान्त्रिसिज्म, पृ० १७५

२८२. हाजरा महोदय ने गरुड़पुराण की तिथि दसवीं शती ईसवी निर्धारित किया है, हाजरा, पूर्वोद्धृत, पृ० १८६

२८३. अग्निपुराण की तिथि ११ वीं शती ई० है, हाजरा, वही, पृ० २६२

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



प्रसार हो रहा था। ऐसे तान्त्रिक परिवेश में सौरधर्म अपने को तन्त्रोपासना के प्रभाव से कैसे दूर रख सकता था। यही कारण है कि साम्बपुराण के उत्तरकालीन अध्याय (३९-८३)[२८४] जो १२ वीं शताब्दी ईसवी के बाद के हैं, तान्त्रिक दर्शन से पूर्णतया प्रभावित हैं। पूजा-विधि, निरूपण-प्रसङ्ग में भी तान्त्रिक प्रभाव का विवेचन किया जा चुका है। साम्बपुराण में सूर्योपासनान्तर्गत मण्डल-पूजा,[२८५] मुद्रा[२८६], न्यास,[२८७] अभिचार,[२८८] बीज,[२८९]

२८४. डा० हाजरा ने इन अध्यायों की तिथि १२५० ई० से १५०० ई० के मध्य निश्चित किया है, स्टडीज, भाग १, पृ० ९३.

२८५. मण्डल के माध्यम से पूजा तान्त्रिक पद्धति थी, द्रष्टव्य, मत्स्यपुराण, ५८।२२, ६४।१२-१३, ९२।१५, ७२।३०, ७४।६।९, बृहत्सहिता, ४७।२४, ब्रह्मपुराण, २८।२८, ६१।१-३, वराह पुराण, ९९।९।११, अग्निपुराण, ८२०, शारदा तिलक, ३।११३-११८, १३१-१३९, ज्ञानार्णवतन्त्र, २६०-१५-१७, महानिर्वाणतन्त्र, १०।१३७-३८, एरिक हाई, कान्ट्रीब्यूशंस टू द स्टडी आफ मण्डल एण्ड मुद्रा, पृ० ५७-९१.

२८६. मुद्रा तान्त्रिक पूजा का एक विशिष्ट विषय है। मुद्रा के अनेक अर्थ होते हैं जिनमें चार अर्थ तान्त्रिक प्रयोगों से सम्बन्धित हैं, (१) आसन, (२) अंगुलियों एवं हाथों का प्रतीकात्मक ढंग (३) पंच मकार (४) वह नारी जिससे तान्त्रिक योगी अपने को सम्बन्धित करता है; द्रष्टव्य, काणे, पी० वी०, हिस्ट्री आफ धर्मशास्त्र, भाग ५, पृ० ६५-६६, पोडूवल, आर० के०, ऐडमिनिस्ट्रेटिव रिपोर्ट आफ द आर्क्योलाजिकल डिपार्टमेन्ट, (११०९), पृ० ८ में मुद्रा-प्रसङ्ग में कवच, नेत्र तथा चक्र का भी उल्लेख है, स्मृतिचन्द्रिका, १, पृ० १४६-१४७, देवी भागवत, ११।१६।९८-१०२, आर्यमञ्जुश्रीमूलकल्प, पृ० ३८०.

२८७. न्यास की अनेक श्रेणियाँ करन्यास, मन्त्रन्यास तथा जपन्यास हैं, द्रष्टव्य, शारदातिलक ४।२९।४१, राघवभट्ट ने इनकी व्याख्या की है।

२८८. तन्त्रोपासना में अभिचार क्रिया को महत्व दिया गया है। अभिचार क्रिया से तात्पर्य षट्हिंसाकर्म; मारण, मोहन, स्तम्भन, वशीकरण, विद्वेषण तथा उच्चाटन से है, द्रष्टव्य, श्रीमाली, नारायणदत्त, तन्त्रसाधना, पृ० ९७-९८.

२८९. एक देवता के मन्त्र के गूढ़ अक्षरों को बीज कहते हैं, द्रष्टव्य, वुडराफ, द गारलैण्ड आफ लेटर्स, पृ० २५७.

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



गुरु-दीक्षा[२९०] पद्म,[२९१] वर्ण,[२९२] यन्त्र,[२९३] बिन्दु,[२९४], प्रधि,[२९५] योनि-चक्र

२९०. तन्त्रोपासना में गुरु की विशेष महत्ता प्रतिपादित की गयी है। गुरु एवं देवता में कोई अन्तर नहीं होता। उससे दीक्षा लिए बिना साधक की सब क्रिया निष्फल हो सकती है, द्रष्टव्य, योगिनीतन्त्र १, वुडराफ, इन्ट्रोडक्शन टू तन्त्रशास्त्र, पृ० ६६
लिङ्गपुराण १.८५,

यो गुरुः सः शिवः प्रोक्तो यः शिवः सः गुरु स्मृतः।

प्रपंचसार, ६।१२, शारदातिलक, ५।११३-११४, देवीभागवत, ११।१।४९, ब्रह्माण्डपुराण, ४३।६८।७०

२९१. शरीर में छः चक्र बताए गए हैं जो शक्तितत्व के अङ्ग हैं। इनकी कल्पना पद्म के रूप में की गयी है, मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत, विशुद्ध, आज्ञा, इन सबके ऊपर (परम व्योम) सहस्रार पद्म हैं, द्रष्टव्य, जान वुडराफ, द सरपेन्ट पावर, पृ० ४१९.

२९२. वर्ण से बीज-मन्त्र की उत्पत्ति होती है, द्रष्टव्य, वुडराफ, द गारलैण्ड आफ लेटर्स, पृ० २५७-२६६, प्रिंसिपिल्स आफ तन्त्र, पृ० ५०५-५२८

२९३. मन्त्र के माध्यम से पूजा तन्त्र की एक विशेषता है। इसे चक्र भी कहा जाता है। धातु, पत्थर, कागज अथवा किसी अन्य वस्तु पर उत्कीर्ण की गयी (तक्षित या रंजित) आकृति को यन्त्र कहते हैं, जो किसी देवता को प्रसन्न करने के उद्देश्य से बनाया जाता है, द्रष्टव्य, कुलार्णव तन्त्र, ६।८५।८६, शारदातिलक, ७।५३।६३,२४, अहिर्बुध्न्यसंहिता, २३।२६, जिमर, मिथ्स एण्ड सिम्बल्स इन इण्डियन आर्ट एण्ड सिविलिजेशन, पृ० १४०-१४८, काणे, पी० वी०, हिस्ट्री आफ धर्मशास्त्र, (हि०) भाग ५, पृ० ७३-७६।

२९४. बिन्दु शिवशक्ति की एकात्मकता से उद्भूत परम तत्व है। उससे सृष्टि-संचालन होता है, उसे एक वृक्ष के रूप में चित्रित करते हैं जिसके मध्य में ब्रह्म पद होता है, द्रष्टव्य, कालीचरण टीका, षट्चक्रनिरूपण, ३७, शारदातिलक, अध्याय १, वुडराफ, द गारलैण्ड आफ लेटर्स, पृ० १२९-१४२

बिन्दु शक्ति के सर्जनात्मक तत्व को कहते हैं, द्रष्टव्य, वुडराफ, द गारलैण्ड आफ लेटर्स, पृ० १२९-१४

२९५. तन्त्र के अनुसार जहाँ मन्त्र की समाप्ति हो, प्रधि कहते हैं।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



पूजा,[२९६] कृत्या[२९७], मांस-बलि,[२९८] गण,[२९९] और संस्कारादि[३००] का निरन्तर प्रयोग तान्त्रिक प्रभाव का द्योतक है। आवाहन, स्थापन, संरोधन, सन्निधान, स्नान, गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, विभूषण, नैवेद्य, शुद्धि, पाद-प्रक्षालन, लेपन, जप, स्तवन यज्ञ, संहार, तथा विसर्जन आदि तान्त्रिक उपचारों का विस्तार से वर्णन किया गया है।[३०१] उपासक-उपास्य तथा गुरु-ब्रह्म के मध्य मूलभूत ऐकात्म्य स्थापित करने का श्रेय तन्त्रदर्शन को ही है। तन्त्र परम्परा ने गुरु की महत्ता बढ़ाकर उसे देवकोटि में ला दिया था।[३०२] वस्तुतः गुरुमाहात्म्य वृद्धि से तन्त्र दर्शन को और सम्बल प्राप्त हुआ तथा सौरधर्म पर इसका व्यापक प्रभाव पड़ा।

साम्बपुराण में ओंम का प्रयोग-बाहुल्य है। तान्त्रिक परिप्रेक्ष्य में ओंम[३०३] का अर्थ है आद्या शक्ति तथा उसकी तीन क्रियात्मक शक्तियाँ—रुद्र, ब्रह्मा

---

२९६. योनिचक्र - पूजा तान्त्रिकों की एक विशेषता है, द्रष्टव्य, काणे, पी०वी०, हिस्ट्री आफ धर्मशास्त्र, भाग ५, पृ० ११३८

२९७. कृत्या एक देवी हैं। विनाशकारी तथा जादू टोने के कार्यों में सिद्धि प्राप्ति हेतु यज्ञादि के द्वारा इनकी पूजा की जाती थी।

२९८. आभिचारिक क्रियाओं में मांस एवं गुग्गुल के होम का प्रायः विधान किया जाता है जो तान्त्रिक शैवोपासना की देन है।

२९९. गण का अर्थ जप माला से है जो तान्त्रिक पूजा का एक अभिन्न अंग है। गण का दूसरा अर्थ शिव के अनुचरों से भी अभिप्रेत है।

३००. संस्कारों को तान्त्रिक परम्परा में विशेष महत्व दिया जाता था। तन्त्र ने मात्र दस संस्कारों को ही स्वीकार किया है—द्रष्टव्य, शक्ति एण्ड शाक्त, पृ० ४८३, महानिर्वाणतन्त्र, पृ० २१६-२५३

३०१. वुडराफ, प्रिंसपिल्स आफ तन्त्र, पृ० ७८१-७८५ तथा ज्ञान-माला, निबन्धतन्त्र, ५५, फेत्कारिणीतन्त्र, ३, सनत्कुमार तन्त्र, शिवार्चण चन्द्रिका, मन्त्र रत्नावली तथा स्वतन्त्रतन्त्रकालीतन्त्र में तान्त्रिक उपचारों का विशद उल्लेख है।

३०२. तान्त्रिक परम्परानुसार गुरु और देवता एक ही होता है—
द्रष्टव्य, वुडराफ—इन्ट्रोडक्शन टू तन्त्रशास्त्र, पृ० ६६, शारदातिलक, ५१,१३-११४, देवीभागवत, ११।१।४९, ब्रह्माण्ड पुराण, ४३।६६।७०

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



एवं विष्णु जो पाँच तत्वों के माध्यम से प्रकट होती हैं। उन्हें एक ही प्रतिपादित किया गया है।[३०४] ये तीनों आद्याशक्ति से उपहित तुरीय ब्राह्मण के रूप हैं। अस्तु ओं अथवा प्रणव से अभिप्राय मूल प्रकृति से युक्त ब्राह्मण से है जो एक है। ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश को सूर्य का रूप माना गया है।[३०५] सूर्य को परम ब्रह्म का पद प्रदान किया है। एवंविध तान्त्रिक प्रवृत्ति के प्रभाव में ही सूर्य एवं शिव के मध्य एकता स्थापित हुयी थी।[३०६] सर्वतोभावेन तन्त्र दर्शन सौरधर्म को प्रभावित कर रहा था।

तन्त्रोपासनान्तर्गत शूद्र तथा स्त्रियों को उपासना की स्वतन्त्रता प्रदान की गयी थी। उन्हें तान्त्रिक गायत्री मन्त्र के जाप की जिसका अनुकरण वैदिक गायत्री के आधार पर किया गया था, स्वतन्त्रता प्राप्त थी।[३०७] शूद्रों तथा चाण्डालों को कुछ निश्चित संस्कार सम्बन्धी स्वतन्त्रता दे दी गयी थी।[३०८] शूद्र मन्दिर आदि सार्वजनिक हित के कार्यों के संपादन में भाग ले सकते थे।[३०९] वर्ण-भेद

३०३. वुडराफ, द गारलैण्ड आफ लेटर्स, पृ० २२८-३३

३०४. तन्त्रालंकार, एकामूर्तिस्त्रयो देवा ब्रह्माविष्णुमहेश्वरः।

३०५. बृहत्तन्त्रसार (बासुमती सं०), पृ० १४७,
ॐ ब्रह्मविष्णुशिवात्मकाय सौराय योगपीठाय नमः।

३०६. शारदातिलक तन्त्र में सूर्य एवं शिव की एकात्मकता मार्तण्ड भैरव के रूप में प्राप्त होती है—विश्वास, डी० के०, इण्डियन हिस्टारिकल क्वार्टरली, भाग २६, १९५०, पृ० १६८, द्रष्टव्य—पाण्डेय, एल० पी०, सन वरशिप इन ऐन्शियन्ट इण्डिया, पृ० १२१।

३०७. वैदिक गायत्री के अनुकरण पर तान्त्रिक गायत्री मन्त्र का प्रतिपादन किया गया है। इसकी तुलना महानिर्वाण तन्त्र के ब्रह्म गायत्री मन्त्र, ३।१०९-१११, "परमेश्वराय विद्महे परतत्त्वाय धीमहि तन्नो ब्रह्म प्रचोदयात्" से की जा सकती है। शूद्र एवं स्त्रियों को इस मन्त्र के जाप की स्वतन्त्रता थी।

३०८. शर्मा, आर० एस०, द मैटीरियल मिलेयू आफ तान्त्रिसिज्म, पृ० १७५

३०९. साम्बपुराण, २९।१०,

द्विजराजन्यवैश्यानांशूद्राणां च यथा क्रमम्।
परीक्षितां भूम्यां तु मध्ये तस्याः प्रमाण्गतः॥



CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



लुप्त हो रहा था। अब ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र सभी को उपासनादि की समान स्वतन्त्रता प्राप्त थी। प्रतीत होता है कि दीर्घ काल से उपेक्षित शूद्रों को भी पूजा, उपासना तथा अन्य तान्त्रिक क्रियाओं की स्वतन्त्रता प्रदान करने के पीछे तन्त्रोपासना को लोकप्रिय एवं महत्वपूर्ण बनाने का व्यापक उद्देश्य रहा होगा। धर्म को सर्वजनसुलभ एवं बोधगम्य बनाने हेतु उसे जटिल रूढ़ियों से सर्वथा दूर रखना होता है। यदि धर्म की व्यापकता के इस अर्थाख्यान को यथार्थ माना जाय तो कहा जा सकता है कि शूद्रों को एवंविध धार्मिक आचरण की स्वतन्त्रता प्रदान करना तत्कालीन तान्त्रिक प्रवृत्तियों के आलोक में न केवल आध्यात्मिक दृष्टि से प्रत्युत सामाजिक दृष्टि से भी सर्वथा समीचीन था। सामाजिक स्तर के समानता की दृष्टि से भी यह तथ्य विशेष महत्व का है।

प्रोफेसर विनोदचन्द्र श्रीवास्तव की धारणा है कि साम्ब पुराण में विवेचित सौर धर्म को तन्त्रोपासना ने केवल वाह्य रूप से ही प्रभावित किया था। अन्तरङ्ग स्वरूप पर उसका प्रभाव परिलक्षित नहीं होता। तन्त्रोपासनान्तर्गत विश्व ब्रह्माण्ड की सृष्टि-संचालन हेतु स्त्री एवं पुरूष को समान महत्व प्राप्त था। तान्त्रिक बौद्ध मत के प्रज्ञा तथा तान्त्रिक हिन्दू-धर्म के उमा का तत्कालीन सौर सम्प्रदाय पर कोई भी प्रभाव नहीं था।[३१०] परन्तु प्रोफेसर श्रीवास्तव का यह मत तर्क सङ्गत नहीं प्रतीत होता; कारण कि साम्ब पुराण के उत्तरकालीन अध्यायों का प्रणायन ही एक ऐसे सन्धिबोधक स्तर पर हुआ था जब तन्त्रोपासना ने सारे देश में हर धर्म एव वर्ग पर अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिया था।[३११] तान्त्रिक परम्परा ने साम्बपुराण में प्रतिपादित समाज की अन्तरङ्ग विधा को समग्र-रूपेण प्रभावित किया था। पुनश्च, तन्त्र-पूजा में देवी-उपासना का प्राधान्य था। जन-जातियों में तन्त्रोपासना सुप्रचलित थी। उनमें यौन-स्वतन्त्रता की

---

शूद्र द्वारा मन्दिर बनवाने का विधान भक्ति-परम्परा में अनुमोदित था, द्रष्टव्य, काणे, हिस्ट्री आफ धर्मशास्त्र, भाग २, पृ० १५७, घुरे, कास्ट क्लास एण्ड अकूपेशन, पृ० ७४

३१०, श्रीवास्तव, वी० सी०, सन वरशिप इन ऐन्शियन्ट इण्डिया, पृ० ३६१

३११. साम्बपुराण के उत्तरकालीन अध्यायों की तिथि हाजरा महोदय ने १२५० ई० से १५०० ई० के मध्य प्रतिपादित किया है—हाजरा, आर० सी०, स्टडीज, भाग १, पृ० ९३.

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



धारणा बलवती थी। अतः स्त्रियों को पुरुषों की तुलना में अधिक महत्व प्रदान किया जाता था।

तन्त्रोपासना के प्रचार-प्रसार के पीछे कतिपय मूलभूत कारण प्रतीत होते हैं। तन्त्रपरम्परान्तर्गत विविध अनुष्ठानों तथा उपचारों के विधान प्रतिपादित थे जो समाज के लिए अत्यन्तोपयोगी थे। तान्त्रिक-चिकित्सक तथा ज्योतिषी के रूप में जनसामान्य की सेवा करते थे।[३१२] तन्त्र-परम्परा में समस्त भौतिक इच्छाओं की पूर्ति-हेतु प्रभावकारी अनुष्ठान प्रस्तावित थे।[३१३] गुरु ( आचार्य ) को विशेष सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था। देवी-पूजा के प्रभाववश शिव, विष्णु, शक्ति तथा अन्यानेक देवी-देवताओं को अनुष्ठानात्मक विधानों में समावेश दिया गया। इसीलिए हिन्दू-धर्म के साथ तन्त्र का सुगमता से तादात्म्य स्थापित हो सका था। तन्त्रोपासना के दार्शनिक एवं प्रतीकात्मक पक्षों के उद्घाटन से यह प्रतीत होता है कि इसका सम्पर्क मात्र कुशल तान्त्रिक आचार्यों तक ही सीमित था, किन्तु तथ्य इसके विपरीत है। मूलतः तन्त्र-दर्शन का अधिकाँश भाग अनुष्ठानात्मक एवं व्यवहारपरक होने के कारण मानव के दैनिक जीवन से सम्बद्ध था। इस प्रकार समाज के अन्तरङ्ग जीवन में तन्त्र-मन्त्र का प्रवेश हो गया था।

पूर्व मध्यकाल में पुरोहितों तथा मन्दिरों के लिए समय-समय पर दिये गए भूमि-अनुदानों से भी तन्त्रोपासना को प्रोत्साहन मिला होगा। सामान्यतः भूमि-अनुदान की प्रक्रिया पाँचवीं शताब्दी ईसवी से प्रारम्भ हो गयी थी किन्तु उसकी तीव्रता पूर्व मध्यकाल में ही परिलक्षित होती है।[३१४] भूमि-अनुदान के कारण

---

३१२. आज भी नेपाल तथा मिथिला में तान्त्रिक भविष्य, चन्द्र एवं सूर्य-ग्रहण आदि की तिथि बताते हैं—द्रष्टव्य, शर्मा, आर० एस०, द मैटीरियल मिलेयू आफ तान्त्रिसिज्म, पृ० १७५.

३१३. शर्मा, वही, १७५।१

३१४. पाँचवीं शताब्दी ई० में उत्तरी बंगाल में, छठीं शताब्दी ई० में पूर्वी बंगाल में, पाँचवीं शताब्दी ई० में आसाम में तथा उड़ीसा में ७ वीं शताब्दी ई० में भूमिदान की प्रक्रिया शुरू हो गयी थी—शर्मा, पूर्वोद्धृत, पृष्ठ १७७, किन्तु ग्यारहवीं - बारहवीं शताब्दी ई० में भूमि - अनुदान प्रक्रिया तीव्र हो गयी। इस समय उत्तर भारत के राजपूत राज्यों में, अधीनस्थों और अधिकारियों को ग्राम-

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



तन्त्र-मन्त्र प्रभावान्तर्गत नयी पद्धति के मन्दिर आदि बनने लगे थे। अतः इससे तन्त्रोपासना के प्रचार-प्रचार में अवश्य बल मिला होगा।

वैष्णवधर्म परम्परावादी था। अतः अन्य मतावलम्बियों के लिए उसमें स्थानाभाव था। शंकराचार्य का अद्वैत एवं रामानुजाचार्य का विशिष्टाद्वैत जन-सामान्य की बुद्धि के परे एवं अव्यवहार्य था। अतः ऐसी संक्रमणकालीन सन्ध्या में तान्त्रिक दर्शन जो सर्वजनहित रत था, के विकास का स्वर्णिम अवसर था। तान्त्रिक दृष्टि पूर्णतः धर्म-निरपेक्ष एवं सांसारिक थी।[३१५] उसमें ऊँच-नीच का भेदभाव नहीं था। इसी प्रवृति के परिप्रेक्ष्य में शूद्रादि को भी धार्मिक आचरण की स्वतन्त्रता प्राप्त थी। बौद्ध सम्प्रदाय ने भी दासों एवं ऋणी लोगों को संघ में प्रवेश देना स्थगित कर दिया था,[३१६] किन्तु तन्त्रोपासना में वर्ण, धर्म लिङ्ग तथा अन्य पारम्परिक प्रवृत्तियों का विचार किये बिना सभी सम्प्रदाय तथा वर्ग के लोगों को समान आचरण की स्वतन्त्रता उपलब्ध थी। इस प्रवृत्ति के कारण जन-सामान्य के न केवल धार्मिक प्रत्युत सामाजिक आवश्यकताओं की भी पूर्ति हुई होगी। यही कारण है कि तन्त्रदर्शन अन्य सम्प्रदायों एवं वर्गों की तुलना में जन-सामान्य के अधिक समीप था। तन्त्रोपासना आज भी भारत में किसी न किसी रूप में जीवित है। इस दर्शन की सफलता एवं जीवन्तता के यही सब मूल-भूत कारण हैं।

निष्कर्षतः यह स्थापित किया जा सकता है कि सौर धर्म ने मानवजीवन के अन्तर्तम पक्ष को सर्वतोभावेन प्रभावित किया जिसकी चरम परिणति उसकी व्यापक लोकप्रियता में हुयी। सूर्याराधन स्वयमेव सरलतम तथा सर्वजनसुलभ था तथापि तान्त्रिक परम्पराओं ने उसे और भी बोधगम्य तथा विशद बनाया। साँख्य, योग, शैव मत तथा तन्त्र की संश्लिष्ट मान्यताओं ने निस्सन्देह सौर धर्म की व्यावहारिकता प्रमाणित कर उसे समृद्ध बनाने में उल्लेखनीय भूमिका का

---

और भू-राजस्व प्रदान किए गए। यह प्रक्रिया पूर्व मध्यकाल में जारी रही, द्रष्टव्य, शर्मा, आर० एस०, इण्डियन फ्यूडॉलिज्म, (कलकत्ता, १९६५), अध्याय ५ (लगभग ३००–१२०० ई०)।

विशेष-ध्यातव्य है कि साम्बपुराण में भूमिदान का उल्लेख नहीं आता।

३१५. शर्मा, मैटीरियल मिलेयू आफ तान्त्रिसिज्म, पृ० १७६

३१६. शर्मा, वही, पृ०, १८९

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



निर्वाह किया था। इसीलिए सौरधर्म भारत-भूमि पर पर्याप्त समय तक लोगों की आस्था का केन्द्र बना रहा।

भगवान् सूर्यदेव को निखिल विश्व-ब्रह्माण्ड की सृष्टि, स्थिति एवं विनाश का मूलभूत कारण माना जाता था। इसी दार्शनिक अवधारणा के आलोक में सूर्य का ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश के साथ समन्वय स्थापित हो सका था। एवंविध प्रवृत्ति के परिणामस्वरूप ही संयुक्त मूर्तियों तथा पञ्चायतन देवालयों का निर्माण हो सका था। संयुक्त मूर्तियों तथा देवालयों में सूर्य को सर्वोर्ध्व शक्ति के रूप में स्वीकार किया जाता था। इस प्रकार यह उल्लेख किया जा सकता है कि सौरधर्म ने जनसामान्य के अन्तस्तल का संस्पर्श कर उसे सर्वविध प्रभावित किया था।

---

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS

५

# साम्बपुराण में सूर्य-प्रतिमा-विज्ञान

सूर्य प्रागैतिहासिक काल से ही विश्व की प्रमुख आराध्य शक्तियों में रहे हैं। उनकी पूजा निखिल विश्व में अल्प-महत् श्रद्धा के साथ विविध प्रतीकों के माध्यम से होती रही है। प्राचीन विश्व में स्वस्तिक एवं मण्डलाकार रूप में सूर्य-पूजा प्रचलित थी।[१] स्पेन, पुर्तगाल, यूनान तथा अमेरिका में एवंविध सूर्य-पूजा के प्रतीकात्मक प्रमाण उपलब्ध हुए हैं।[२] सैन्धव संस्कृति में सूर्य-पूजा स्वस्तिक, चक्र, वृत्त-जिसमें आलोक रश्मियां प्रस्फुटित हो रही हैं, नेत्र तथा पक्षी के प्रतीकात्मक स्वरूपों में होती थी।[३] स्वस्तिक मानव-जीवन एवं उसके समृद्धि का प्रतीक माना जाता था। वैदिक भारत में सौरार्चन प्रकृति पूजा का अभेद्यांग था। उस समय सूर्य-पूजा उसके नैसर्गिक स्वरूप में होती थी।[४] मण्डलाकार रूप ही उपासना का प्रमुख विषय था। यही तथ्य सत्राजित आख्यान से भी प्रमाणित होता है।[५]

सूर्य के मानवीकरण का उल्लेख शतपथ ब्राह्मण, विष्णुपुराण तथा मार्कण्डेय पुराण में आता है।[६] ऋग्वेद तथा उत्तर वैदिक साहित्य में कहीं भी सूर्य-प्रतिमा

---

१. मित्र, कालीपद, मैन इन इण्डिया, भाग १२, १९३२, 'द स्वस्तिक', पृ० ५९;
   साम्बपुराण, २९।२,
   यथैतन्मण्डलव्योम्नि स्थीयते सवितुस्तदा ।
२. मित्र, कालीपद, वही, पृ० ७९.
३. पान्डेय, एल० पी०, सन-वरशिप इन ऐन्शियन्ट इण्डिया, पृ० ४
४. श्रीवास्तव, वी० सी०, सन-वरशिप इन ऐन्शियन्ट इन्डिया, पृ० ४१
५. सत्राजित आख्यान में भी सूर्य प्रारम्भ में मन्डलाकार रूप में प्रकट हुए;
   द्रष्टव्य— शतपथ ब्राह्मण, ७४।१।१०,
   विष्णु पुराण, ४।१३।१२।१५,
   मार्कन्डेय पुराण, १०५।१।३
६. शतपथ ब्राह्मण, ७४।१।१०
   विष्णु पुराण, ४।१३।१२।१५, तुलनीय
   मार्कन्डेय पुराण, १०५।१।३

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



का उल्लेख नहीं प्राप्त होता। ब्राह्मण ग्रन्थों में सूर्य के प्रतीकात्मक स्वरूप का प्रत्यक्ष संकेत उपलब्ध होता है। महाभारत और रामायण में सूर्य के पूर्ण मानवीकरण का वर्णन आता है परन्तु सूर्य-प्रतिमाओं से सम्बन्धित साक्ष्य अप्राप्य हैं।[७] प्रारम्भिक पौराणिक वाङ्मय में सूर्य की प्रतिमाओं के प्रत्यक्ष प्रमाण अनुपलब्ध हैं। इनमें भगवान् सूर्य के प्रतीकात्मक चित्रों का प्रयोग-बाहुल्य है। पाँचवीं शताब्दी ईसवी से सूर्य-प्रतिमाओं का सम्यक् विवरण प्राप्त होता है।[८] यद्यपि सूर्य-प्रतिमायें प्रथम द्वितीय शताब्दी ईसवी पूर्व से ही मिलने लगती हैं।[९] प्रतिमा-विषयक विवेचन बृहत्संहिता, साम्बपुराण, विष्णुधर्मोत्तर, मत्स्यपुराण, अग्निपुराण, विश्वकर्माशिल्प, अंशुमद्भेदागम, सुप्रभेदागम, विश्वकर्मशास्त्र, पूर्वकरणागम, रूपमन्डन, मानसोल्लास, पद्मपुराण, भविष्यपुराण, ब्रह्म पुराण, चतुर्वर्गचिन्तामणि तथा समरांगणसूत्रधार में समुपलब्ध होता है। कालक्रम की दृष्टि से प्रतिमामूलक विवेचन सर्वप्रथम बृहत्संहिता (५०५-५८७ ई०) में प्राप्त होता है किन्तु प्रतिमा-विषयक प्रामाणिक एवं मौलिक विवेचन प्रथमतः साम्बपुराण में ही उपलब्ध होता है जो कालक्रम की दृष्टि से भी बृहत्संहिता के पास (६००-८०० ई०) का है। वैसे तो भविष्यपुराण में सुस्पष्ट एवं सम्यक् विवेचन प्राप्त होता है किन्तु समग्ररूपेण तत्सम्बद्ध सामग्री साम्बपुराण से गृहीत है। इसीलिए भविष्य पुराण, साम्बपुराण से बाद का माना जाता है।

विवेच्य ग्रन्थ एवं कालक्रम की दृष्टि से भी प्रथमतः साम्बपुराण में उपलब्ध प्रतिमामूलक विवेचन की समीक्षा सर्वथा प्रासंगिक एवं समीचीन होगी। सूर्य की

---

७. श्रीवास्तव, वी० सी०, पूर्वोद्धृत, पृष्ठ २७३

८. श्रीवास्तव, वी०, सी०, वही, पृ० २७४; मत्स्यपुराण में सूर्य-मूर्तियों का विवरण आता है जिसकी तिथि हाजरा महोदय ने ५५० ई०-८५० ई० निर्धारित किया है।

९. शिवराम मूर्ति, सी०, इन्डियन स्कल्पचर, पृष्ठ २६, बोधगया, भाजा, लाला भगत, अनन्तगुम्फा तथा मथुरा से प्राप्त सूर्य-मूर्तियाँ प्रारम्भिक हैं। सूर्य-प्रतिमा की उत्पत्ति संभवतः भगवान बुद्ध की प्रतिमा के अनुकरण पर और विदेशी प्रभाव के कारण प्रथम-द्वितीय शताब्दी ई० पू० में अवश्य हो गई थी परन्तु भारतीय रूढ़िगत समाज ने उसे गुप्तकाल के पूर्व स्वीकार नहीं किया।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



पूजा द्वादशादित्यों के रूप में होती थी जिसका विवरण वैदिक एवं प्रारम्भिक पुराणों में प्राप्त होता है। द्वादशादित्यों में इन्द्र, धाता, पर्जन्य, पूषा, त्वष्टा, अर्यमा, भग, विवस्वान्, विष्णु, अंशु, वरुण और मित्र उल्लेखनीय हैं।[१०] अदिति पुत्र सूर्य की प्रथम मूर्ति इन्द्र की अभिधा से मानी जाती है जो देवों के ऊपर शासन करने वाली होने के कारण देवराज के रूप में विख्यात है।[११] सूर्य की द्वितीय मूर्ति धाता प्रजापति के रूप में स्थित है जो अनेक प्रकार के प्राणियों की सृष्टि करती है।[१२] तृतीय मूर्ति पर्जन्य जो कि बादलों में अवस्थित है, किरणों से वर्षा करती है।[१३] चतुर्थ मूर्ति पूषा अन्नों में व्याप्त है। वही निरन्तर प्राणियों का पोषण करती है।[१४] पांचवीं मूर्ति त्वष्टा वनस्पति एवं प्रत्येक प्रकार की औषधियों में व्याप्त है।[१५]

१०. राय, एस० एन०, पौराणिक धर्म एवं समाज, पृ० ४८,
श्रीवास्तव, वी० सी०, पूर्वोद्धृत, पृ० ११९;२१३.
साम्बपुराण, ४।६,

इन्द्रोधाताथपर्जन्यः पूषा त्वष्टार्यमाभगः।
विवस्वान् विष्णुरंशुश्चवरुणोमित्र एव च ॥

११. वही, ४।८,

तस्य या प्रथमा मूर्त्तिरादित्येन्द्रसंज्ञिता।
स्थितासादेवराजत्वे देवानामनुशासिनी ॥

१२. वही, ४।९,

द्वितीयार्कस्ययामूर्त्तिर्नाम्नाधातेतिकीर्तिता।
स्थिता प्रजापतित्वेषा विविधाः सृजतेप्रजाः ॥

१३. वही, ४।१०,

तृतीयार्कस्ययामूर्त्तिः पर्जन्य इति विश्रुता।
मेघेष्व्यवस्थिता सा तु वर्षते च गभस्तिभिः ॥

१४. वही, ४।११,

चतुर्थी तस्य या मूर्त्तिर्नाम्ना पूषेति विश्रुता।
अन्ने व्यवस्थिता सा तु प्रजाः पुष्णाति नित्यशः ॥

१५. वही, ४।१२,

पंचमी तस्ययामूर्त्तिर्नाम्नात्वष्टेतिविश्रुता।
स्थितावनस्पतौ सा तु औषधीषु च सर्वशः ॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



छठीं मूर्ति अर्यमा वायु संचार के लिए उपादेय है और प्राणियों की देह में भी उसका आश्रय है।[16] सातवीं मूर्ति भग पृथ्वी तथा प्राणियों के शरीरों में अवस्थित है।[17] आठवीं मूर्ति विवस्वान अग्नि में विलीन है और वही प्राणियों का अन्न पचाती है।[18] नवीं मूर्ति विष्णु देवताओं के शत्रुओं अर्थात् दैत्यों के विनाश के लिए उत्पन्न होती है।[19] दसवीं मूर्ति अंशुमान वायु में प्रतिष्ठित है जो जीवों को आह्लादित करती है।[20] ग्यारहवीं मूर्ति वरुण जल राशियों में प्रतिष्ठित है वही समस्त जीवों को संचरित करती है।[21] बारहवीं मूर्ति जो मित्र की संज्ञा से जानी जाती है, जगत्कल्याण करती है।[22] द्वादशादित्य विवरण इस प्रकार

---

१६. वही, ४।१२,

मूर्तिषष्ठीरवेर्यातु अर्यमा इति विश्रुता।
वायोः संचरणार्था सा देहेष्वेवसमाश्रिता ॥

१७. वही, ४।१४,

भानोर्यासप्तमी मूर्तिर्नाम्ना भग इति श्रुता।
भूमौ व्यवस्थिता सा तु शरीरेषु च देहिनाम् ॥

१८. वही, ४।१५,

मूर्त्तिर्याचाष्टमीवास्य विवस्वानितिविश्रुता।
अग्नौ व्यवस्थिता सा तु पचत्यन्नंशरीरिणाम् ॥

१९. वही, ४।१६,

नवमीमित्रभानोर्या मूर्त्तिविष्णुश्चनामतः।
प्रादुर्भवति सा नित्यं देवानामरिसूदिनी ॥

२०. वही, ४।१७,

दशमीतस्ययामूर्तिरंशुमानितिविश्रुता।
वायौप्रतिष्ठितासातुप्रह्लादयतिवैप्रजाः ॥

२१. वही, ४।१८,

मूर्तिस्त्वेकादशीयातुभानोर्वरुण संज्ञिता।
सा जीवयति वै कृत्स्नंजगदप्सु प्रतिष्ठितम् ॥

२२. वही, ४।२०,

मूर्त्तिर्याद्वादशीभानोर्नामतोमित्रसंज्ञिता।
लोकानां सा हितार्थाय स्थिता चन्द्रसरित्तटे ॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



मूर्ति-पूजा के प्राथमिक स्तर का बोध कराता है। प्रकारान्तर से यह प्राचीन वैदिक परम्परा के विकास-क्रम का ही एक स्वरूप है। इन अध्यायों की तिथि ६००-८०० ई० है। विकास-क्रम के अग्रिम सोपान पर प्रतिमा पूजा का समारम्भ होता है। निखिल विश्व की कल्याण परक भावना से ओतप्रोत विश्वकर्मा ने सूर्य की पुरुषाकार प्रतिमा का निर्माण किया। प्रतिमा स्थापित की गई और तभी से प्रतिमा-पूजा का समारम्भ हुआ।[२३] ध्यातव्य है कि यहाँ सूर्य की प्रतिमा परम्परा का श्रेय विश्वकर्मा को दिया गया है, मगों को नहीं। यह विदेशी परम्परा को राष्ट्रीयकृत करने का द्योतक है।[२४]

साम्बपुराण में भक्तों के कल्याणार्थ उपादान दृष्टि से सप्तविधि मूर्तियों का विवेचन किया गया है। मूर्तियों के लिए स्वर्ण, रजत, ताम्र, मृत्तिका, शिला, वृक्ष और चित्र को उपयुक्त प्रतिपादित किया गया है।[२५] प्रतिमा हेतु महुआ, देवदारु, राजवृक्ष, चंदन, बेल, आंवला, खैर, चम्पा, नीम, श्रीपर्ण, अशन, सरल, अर्जुन और लाल चंदन के वृक्ष श्रेष्ठ उद्घोषित किये गये हैं।[२६] मत्स्यपुराण में शिला, लकड़ी और मिश्रित वस्तुओं की देव प्रतिमाओं का वर्णन मिलता है। शिवलिंग बनाने के विधान में रत्न, स्फटिक तथा मृत्तिका का विवेचन किया गया है।[२७] हरिभक्त विलास में

---

२३. वही, २९।३-४

एवमेत्रपुराभक्तैः पूज्यते मण्डलाकृतिः ।
यतः प्रभृति चाप्येषा निर्मिताविश्वकर्मणा ।।
सर्वलोकहितार्थाय सूर्यस्य पुरुषाकृतिः ।
प्रतिमास्थापनं चैव प्रमाणं च विधानतः ।।

२४. श्रीवास्तव, वी० सी०, पूर्वोद्धृत, पृ० २५७, पाद टिप्पणी, ३६९.

२५. साम्बपुराण, ३०।२,

काञ्चनीराजतीताम्रीपार्थिवाशैलजा तथा ।
वार्क्षीवालेख्या गायन्ति मूर्त्ति स्थानानि सप्त वै ।।

२६. वही, ३०।३-४,

मधुकोदेवदारुश्च राजवृक्षसचन्दनः ।
बिल्वश्चाम्रातकश्चैव खदिरश्चंपकस्तथा ।।
निम्बः श्रीपर्णवृक्षश्च त्वशनः सरलोऽर्जुनः ।
रक्तचन्दन पर्यन्ताः क्षेष्ठाः स्युः प्रतिमा द्रुमाः ।।

२७. मत्स्यपुराण, २६२।१९-२१, २६३।२४-२५

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



मृण्मयी, दारुघटिता, लोहजा, रत्नजा, शैलजा, गन्धजा तथा कौसुमी प्रकार की मूर्तियों का वर्णन प्राप्त होता हैं।[२८] शुक्रनीतिसार में आठ प्रकार की मूर्तियों का विवेचन उपलब्ध होता है।[२९] समरांगणसूत्रधार में भी साम्ब एवं भविष्य पुराण की सूची का उल्लेख मिलता है परन्तु यहाँ पर मृण्मयी मूर्तियों का वर्णन अप्राप्य है।[३०] संभव है कि स्थायित्व के दृष्टिकोण से धातु की मूर्तियों का निर्माण होता रहा हो। पुनश्च, एक सम्भावना यह भी है कि मृण्मयी मूर्तियाँ नष्ट हो गई हों।

प्रतिमा का निर्माण प्रशस्त पुष्य नक्षत्र में गुणयुक्त पवित्र दिन में शुभ शकुन होने पर उपवास करके करना चाहिए।[३१] बृहत्संहिता भी ऐसे शकुन पर बल देती है।[३२] वृक्ष के नीचे भूमि को उपलिप्त करके गायत्री मन्त्र से पवित्र किये हुए जल से पोंछ कर, पहले कभी न धारण किये हुए श्वेत वस्त्र पहन कर गन्धमाला, धूप, दीप और बलि कर्म द्वारा वृक्ष की पूजा करनी चाहिए।[३३] इसके बाद कुशों से व्याप्त यज्ञ-कुण्ड में हवन करके देवदारु की लकड़ियों से और गायत्री मन्त्र द्वारा

---

२८. गोपाल भट्ट, हरिभक्तविलास

२९. शुक्रनीतिसार, ४।४।७२,

प्रतिमासैकतीपैष्ठी लेख्या लेप्या च मृण्मयी।
वार्क्षीपाषाण धातूत्थास्थिरा ज्ञेया यथोत्तरा॥

३०. भोजदेव, समरांगणसूत्रधार, (भाग २) १।१, सुवर्ण, रूप्य, ताम्र, दारु, लेख्य, सिकता तथा चित्र-ये सप्तद्रव्य मूर्तियों के लिए उपयुक्त घोषित किए गए हैं।

३१. साम्बपुराण, ३०।१४,

प्रशस्ते पुष्यनक्षत्रे गुणयुक्त शुभेदिने।
शकुने च शुभे नित्यं सोपवासोधिवासयेत॥

३२. बृहत्संहिता, अ० ५८ (वनप्रवेशाध्याय)

३३. साम्बपुराण, ३०।१५-१६,

समन्तादुपलप्याथतस्यातस्याधस्ताद्वसुन्धराम्।
गायत्र्यापरिपूतेन परितः प्रोक्ष्य वारिणा॥
शुक्ले चापरिभुक्ते च परिधाय च वाससी।
पूजयेद्गन्धमाल्यैश्च धूपैस्सन्नलिकर्मभिः॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



तत्वज्ञानी को यज्ञ करना चाहिए।[३४] रात बीत जाने पर उस वृक्ष की पूजा करके ब्राह्मणों और याजकों को दक्षिणा देकर स्वस्ति-वाचन करते हुए पेड़ को काटना चाहिए।[३५] वृक्षपात पूर्व, ईशान या उत्तर दिशा में ही उत्तम माना जाता है।[३६] जिस वृक्ष में तत्काल ब्रिम्ब दृष्टिगोचर हो जाय उसे काट लेना चाहिए किन्तु जिस वृक्ष का गर्भ पीले, काले, गुड़, अग्नि, कपिल तथा मजीठी के वर्ण का हो, उसे त्याग देना चाहिए। इन दोषों से मुक्त वृक्ष ही प्रतिमा के लिए श्रेष्ठ माना जाता है।[३७]

साम्बपुराण में प्रतिमा-लक्षण-विवेचन-क्रम में उसके विविध रूपों को उद्घाटित किया गया है। प्रतिमा एक, दो या साढ़े तीन हाथ की होनी चाहिए। एक हाथ की मूर्ति सुन्दरता देने वाली तथा दो हाथ की मूर्ति धनधान्य प्रदान करने वाली होती है।[३८] तीन हाथ की मूर्ति समस्त अभिलाषाओं को पूर्ण करने वाली, साढ़े तीन हाथ की मूर्ति प्रचुर अन्न देने वाली है तथा कल्याणकारिणी होती है।[३९] गान्धर्वी प्रतिमा प्रभूत धनधान्य प्रदान करने

---

३४. वही, ३०।१७,

ततः कुशपरिस्तीर्णे हुत्वाग्निंचतदंतिकम्।
देवदारुसमिद्भिश्चमंत्रेणानेनतत्वविद् ॥

३५. वही, ३०।२२

प्रयातायातुशर्वर्यां पुनः संपूज्य तं नगम्।
ब्राह्मणेभ्यस्ततोदत्त्वा याजकेभ्यश्चदक्षिणाम् ॥

३६. वही, ३०।२४-२५,

छिन्द्याद्वनस्पतिंतज्ज्ञैस्तैः कृते स्वस्तिवाचने।
पूर्वस्यांदिशिपातोऽस्यह्यैशान्यांचापियद्भवेत् ॥
अथवाचोत्तरस्यां तु तथाछिन्द्यात्तुनान्यथा।
पूर्वेशान्यामुदक्पातोदिक्षुतिसृषुचोत्तमः ॥

३७. वहीं, ३०।३१,

दोषैरेतैर्विनिमुक्तं दारुश्रेष्ठमुदाहरेत्।

३८. वही, ३१।३, एकहस्ताभवेत्सौम्याद्विहस्ताधनधान्यदा।

३९. वही, ३१।४, त्रिहस्ताप्रतिमाभानोः सर्वकामप्रदास्मृता।
सार्द्धतृतीयहस्ता तु सुभिक्षक्षेमकारका ॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



वाली होती है जो ऊपर, नीचे, मध्य में तथा चतुर्दिक प्रभापूरित होती है।[४०] देवमन्दिर के द्वार से अष्टांग भर छोड़ देना उपयुक्त होता है। तीसरे भाग में वेदी बनानी उपयुक्त होती है और दो भाग में प्रतिमा।[४१] चौरासी अंगुल की मूर्ति अच्छी मानी जाती है। मूर्ति का मुख विस्तार बारह अंगुल होना चाहिए।[४२] मुख के तीन भाग चिबुक, ललाट तथा नासिका हों एवं दोनों कान नासिका की सिधाई में होने चाहिए।[४३] नेत्र दो अंगुल के हों तथा तृतीय अंश तारक हो। पुतली के तीसरे भाग दृष्टि को विशेषज्ञ को बनाना चाहिए।[४४] मस्तक का विस्तार बत्तीस अंगुल हो तथा उसे उन्नतशील होना चाहिए।[४५] बृहत्संहिता में भी उन्नत ललाट पर बल दिया गया है। नासिका के बराबर ग्रीवा तथा मुख के बराबर हृदयान्तरप्रदेश होना चाहिए।[४६] वक्षस्थल मुख विस्तार के बराबर होना उपयुक्त माना जाता है। भुजाएँ लम्बी हों तथा उसी की भाँति

---

४०. वही, ३१।५, अग्रे मध्ये च मूले च प्रतिमा सर्वतः शुभा।
गान्धर्वी सा तु विज्ञेया बहुधान्यधनावहा॥

४१. वही, ३१।६, देवागारस्य यद्द्वारं तस्मादष्टांगमुत्सृजेत्।
तृतीये पिण्डिका कार्या द्वौ भागौ प्रतिमा भवेत्॥

४२. वही, ३१।७, अंगुलैः स्वैर्भवेन्मूर्तिरशीतिश्चतुरंगुला॥
विस्तारायामतः कार्या वदनं द्वादशांगुला॥

४३. वही, ३१।८, मुखं त्रिभागं चिबुकं ललाटं नासिका तथा।
कर्णौ नासिकया तुल्यौ पाण्योर्वानियतेतयोः॥

४४. वही, ३१।९, नयने द्वयांगुले स्यातांतत्त्रिभागे तु तारकेः।
तृतीयं तारिका भागं कुर्याद्दृष्टिं विचक्षणः॥

४५. ३१।१०, ललाटं मस्तकोत्सेधं कुर्यात्तत्समेभवतु।
परिणाहस्तु शिरसोभवेद्द्वात्रिंशदंगुलम्॥

द्रष्टव्य, बृहत्संहिता, ५७।१९ में उत्सेध का अर्थ ऊँचाई प्रतिपादित किया गया है।

४६. साम्बपुराण, ३१।११,
तुल्यानासिकयाग्रीवामुखेन हृदयान्तरम्।
मुखमात्राभवेन्नाभिस्ततोमेढ्रमनंतरा॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



उरु और जंघे भी बराबर हों।[४७] गुल्फों के नीचे चरण हो जो चार अंगुल ऊँचा हो। चरण का विस्तार छः अंगुल और अंगूठा तीन अंगुल का हो।[४८] प्रदेशिनी अँगुली भी उसी के समान हो तथा शेष अंगुलियाँ क्रम से छोटी हों। पैर का विस्तार चौदह अंगुल उपयुक्त होता है।[४९] इस प्रकार के लक्षणों से युक्त प्रतिमा सर्वथा पूज्या होती है। स्कन्धप्रदेश, भुजाएँ, उरु, भौंहें, ललाट और नासिका उन्नत होना उपयुक्त होता है।[५०] धवल वर्ण, कुछ-कुछ लाल बरौनियों से युक्त विस्तीर्ण नेत्र तथा समुन्नत कपोल प्रदेश वाला होना चाहिए।[५१] मुस्कराते हुए मुखमण्डल वाला, रमणीय बिम्बाधर से युक्त, रत्नों से शोभायमान मुकुट वाला, वलय, अंगद तथा हार से समलङ्कृत होना मङ्गलप्रद होता है।[५२] अव्यंग, पदबन्ध आदि समायोगों से सुशोभित तथा विचित्रमणिकुण्डल से युक्त, सुन्दर भुजा एवं मण्डल वाला होना शुभप्रद होता है।[५३] हाथों में कञ्चनवर्णीय कमल को धारण

---

४७. वही, ३१।१२,

मुखविस्तारमुरसस्ततोऽर्द्धं तु कटि भवेत्।
बाहू प्रवाहू तत्तुल्यावुरु जंघे च तत्समे ॥

४८. वही, ३१।१४,

गुल्फाधस्तात्तुपादः स्यादुच्छ्रितश्चतुरगुलैः।
षडगुलस्तु विस्तीर्णतस्यांगुष्ठोंगुलत्रयम् ॥

४९. वही, ४१।१४,

प्रदेशिनी च तत्तुल्या हीनाः शेषनखान्नक्रम्।
चतुर्दशांगुलः पादस्यायामः परिकीर्त्तितः ॥

५०. वही, ३१।१५,

एवंलक्षणा युक्ता या भवेत् पूजितलक्षणा।
अंसौभुजौतथैवोरु भ्रूललाटंसनासिकम् ॥

५१. वही, ३३।१६,

गण्ड च नियतं मूर्त्तेः कुर्यात्तज्ज्ञः समुन्नतिम्।
विशाल धवलाताम्रपक्ष्मलायतलोचनम् ॥

५२. वही ३१।१७,

सस्मिताननपद्मास्य चारुबिम्बाधरः शुभः।
रत्नप्रोद्भासिमुकुटः कटकांगद हारवान् ॥

५३. वही, ३१।१८,

'अव्यंग पदबन्धादि समायोगोपशोभितः।
सुबाहु मण्डलञ्चारु विचित्र मणिकुण्डलः ॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



किये हुए आकार में सूर्य-प्रतिमा होनी चाहिए। एवंविध लक्षणों से युक्त मूर्तियाँ प्रजा को कल्याण, आरोग्य और अभय देने वाली होती हैं।[५४] मस्तक, उरु, कपोल और वदन समस्त अङ्गावयवों से युक्त सूर्य की प्रतिमा मनुष्यों का कल्याण करती है।[५५] चाकचिक्य एवं द्युतिहीन मूर्ति प्रशंसा के योग्य होती है।[५६] ध्यातव्य है कि सम्पत्तियाँ सुन्दर तथा पवित्र मूर्तियों के अधीन ही होती हैं। अतः सुन्दर मूर्तियों का निर्माण सर्वथा शुभप्रद होता है।[५७] यदि प्रतिमाओं में विवेचित लक्षणों का अभाव हो तो वे महत् कष्टप्रदा होती हैं। प्रतिमा के बड़ी होने पर राजभय और छोटी होने पर विपदागम की सम्भावना रहती है।[५८] ध्यात होने पर नेत्र-पीड़ा तथा कृश होने पर दरिद्रता की सम्भावना रहती है। खरोंच होने पर शस्त्र भय तथा फटने पर मृत्यु का भय रहता है।[५९] प्रतिमा न अधोमुखी हो, न ऊर्ध्वमुखी, न करवट के बल हो और न झुकी हुई हो। वह समरूप हो और सामने देख रही हो।[६०] दाहिनी ओर झुकी होने पर

---

५४. वही, ३१।१९,

कराभ्यां कांचनीमुद्रा प्राप्तहस्तसरोरुहम्।
एवं लक्षण संयुक्तां कारयेदीप्सितप्रदाम्॥
प्रजाभ्यश्चतदाभानुः शिवारोग्याभयप्रदः।

५५. वही, ३१।२४,

शिरोरुगंडवदनैः सर्वाङ्गावयवैस्तथा।
एवं लक्षण संयुक्ता सा शुभ्रा प्रतिमानृणाम्।

५६. वही, ३१।२३, नातिलोक्या न चालोक्या ऋज्वीमूर्तिप्रशस्यते।

५७. वही, ३१।२४, ता मूर्त्तयः शुभाःकार्यास्तदाधीनास्तुसम्पदः।

५८. वही ३१।२०,

अत्यंगायां नृपभयं हीनांगायामकल्यता।

५९. वही, ३१।२१,

ध्यातायां चक्षुषः पीडा कृशायां तु दरिद्रता।
सक्षतायां भय शस्त्रात् स्फुटितामृत्युकारणम्॥

६०. वही, ३२।४१,

नाधोमुखींनोर्ध्वमुखीं न पार्श्वा ननतां तथा।
समामभिमुखीं चेमां प्रतिमां च निवेशयेत्॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



निरन्तर आयु का संहार करती है और उत्तर की ओर झुकने पर निश्चय ही प्रियजन का वियोग करती है।[६१]

सूर्य की प्रतिमा पूजा के साथ ही उनके परिवार तथा अनुचरों का माहात्म्य बढ़ गया था। इसीलिए उन्हें सूर्य-प्रतिमा से सम्बद्ध कर दिया गया। सूर्य की पूजा के साथ-साथ उनके परिवार तथा अनुचरों की पूजा भी इसी प्रकार प्रतिमा के रूप में होने लगी। एतद्विषयक विवेचन साम्बपुराण में प्राप्त होता है।

सूर्य के दाहिनी ओर निक्षुभा तथा बायीं ओर राज्ञी को होना चाहिए।[६२] सूर्य के दाहिनी ओर पिंगल और बायीं ओर दण्डनायक हों, अंशुमाली के ठीक समक्ष लक्ष्मी तथा सरस्वती विराजित हों।[६३] द्वार पर दोनों अश्विनी-कुमारों को होना चाहिए। दूसरी पंक्ति में सूर्य के दोनों ओर द्वारपालों को होना चाहिए।[६४] तीसरी पंक्ति में दोनों कल्माष पक्षियों और दाहिनी दिशा में जान्दक तथा माठर को विन्यस्त होना चाहिए।[६५] प्राप्नुयान और क्षुताप को पश्चिम दिशा में तथा उत्तरी भाग में कुबेर और सोम को होना चाहिए।[६६]

६१. वही, ३१।२२,

दक्षिणावनतायां तु शश्वत्स्यादायुषः क्षय ।
उत्तरावनतायां तु वियोगो भवति ध्रुवम् ॥

६२. वही, २९।१६,

निशुम्भा दक्षिणे पार्श्वे रवेराज्ञी तु वामतः ।

६३. वही, २९।१७,

पिंगलो दक्षिणेभानोर्वामतोदंडनायकः ।
श्रीमहाश्वेतयोः स्थानं पुरस्तादंशुमालिनः ॥

६४. वही, २९।१८,

ततथोअश्विनौद्वारिपूजाकर्मगृहाद्वहिः ।
द्वितीयां तु कक्षायां राज्ञस्तोषौ व्यवस्थितौ ॥

६५. वही, २९।१९,

तृतीयां तु कक्षायां स्थितौ कल्माषपक्षिणौ ।
जान्दको माठरः स्थाप्योदक्षिणांदिशिमास्थितौ ॥

६६. वही, २९।२०,

प्राप्नुयान्नूक्षुतापौ तु पश्चिमादिशिमास्थितौ ।
उदीच्यां स्थापनीयस्तु कुबेरः सोम एव च ॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



इनसे भी उत्तर विनायक के साथ रेवन्त को होना चाहिए।[६७] अग्रभाग में चार अस्त्र और चार श्रृंग वाले व्योमदेव को रखना चाहिए।[६८] रश्मिकिरण सूत्र से प्रतिमा के बीच का मण्डल बनाकर आदित्य के समक्ष दिण्डि को स्थापित करना चाहिए।[६९] शेष भाग में अर्घ्य के लिए दो मण्डल बनाना चाहिए।[७०]

साम्ब पुराण के उत्तर कालीन अध्यायों में, जो तान्त्रिक प्रभाव से युक्त हैं, 'मण्डल-पूजा' प्रतिमा-परम्परा का स्थान ग्रहण कर लेती है। तांत्रिक पूजा का एक अभिन्न अंग मण्डल था जिसकी उत्पत्ति वैदिक साहित्य में देखी जा सकती है।[७१] प्राचीन ऋषि मण्डल को विशेष महत्व देते थे।[७२] मण्डलों के माध्यम से देवता की पूजा पौराणिक एवं तांत्रिक वाङ्मय की देन है।[७३] द्वादशादित्यों का

---

६७. वही, २९।२१,

उत्तरेणैवताभ्यां तु रेवन्तः स विनायकः।

६८. वही, २९।२३,

चतुरस्त्रंचतुः श्रृंगं व्योमदेव गृहाग्रतः।

६९. वही, २९।२४,

दिण्डिस्थाप्यः पुरस्तस्मादादित्याभिमुखस्तथो।

७०. वही, २९।२२,

अर्घायमंडलेद्वेवैकार्यसव्यापसव्यतः ।

७१. ऋग्वेद, ४।२८।२, ५।२९।१०, तैत्तिरीय संहिता, ५।३।९-२, शतपथ-ब्राह्मण, ४।१।१।२५, बृहदारण्यक उपनिषद्, ५।५।२, २।३।३।

७२. साम्बपुराण, अध्याय ३९।

७३. मत्स्यपुराण, ५८।२२, ६४।१२।१३, ६२।१५, ७२।३०, ७४।६-९, बृहत्संहिता, ४७।२४, ब्रह्मपुराण, २८।२८, ६१।१-३, वराहपुराण, ६६।६।११, अग्निपुराण, ३२०, हर्षचरित, ३, शारदातिलक ३।११३-११८-१३८, ज्ञानार्णवतन्त्र, २६०-१५-१७, महानिर्वाणतन्त्र, १०।१३७-१३८, विस्तार के लिए द्रष्टव्य—एरिक हाई, कान्ट्रीब्यूशन्स टू द स्टडी आफ द मण्डल ऐण्ड मुद्रा, पृ० ५७-९१.



CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



स्थान उत्तर काल में नर, विश्वात्मक, शम्भु, नमस्कार, वषट्कृत, संबुद्ध, विश्वकर्त्ता, निष्कल, ज्ञानसम्भव, मान, उन्मान और महानसत्व-द्वादश जगन्नाथ ग्रहण कर लेते हैं।[७४] सूर्य की द्वादश मूर्तियाँ वेदों के द्वादश मंत्रांश रूप में अभीषवे, विष्णुधामंच्छदो, मनोज्योति, चत्वारिश्रृंगादि, ते प्राणाय, अग्निमीडे, इषेत्वा अर्जे, अग्नि आयाहि, शन्नो देवो, कृत्यवासा तथा ब्रह्मज्ञानम् आदि हैं।[७५] इन सबके बीच में महाकाली, कल्पिका, प्रबोधिनी, नीलाम्बरा, घनान्तस्था और अमृता नाम से प्रसिद्ध मूर्ति का निर्माण श्रेयस्कर माना जाता है।[७६] शुक्ल, जयन्त, विजय, अनेकवर्ण, हुतार्चि तथा व्यापक सात अश्व बताये गये हैं।[७७] वितान, ध्वजामाला तथा कलशों से विभूषित सूर्यमण्डल का चित्र बनाकर विमल दर्पण, छत्र, एवं वस्त्र से अवगुण्ठित नाना प्रकार के पूजा-उपहारों से भगवान् सूर्य की उपासना की जाती थी।[७८]

साम्बपुराण के उपर्युक्त विवरण की तुलना वृहत्संहिता (५०५ ई०-

---

७४. साम्वपुराण, ३९।४२।४३,

नरोविश्वात्मकः शम्भुर्नमस्कारोवषट्कृतः।
संबुद्धोविश्वकर्मा च निष्कलोज्ञानसम्भवः॥
मानोन्मानोमहासत्वो द्वादशौ ते प्रकीर्तिताः।
आधारभूताः सर्वस्य जगन्नाथ व्यवस्थितः॥

७५. वही, ३९।४४,

अभीषवेइदं विष्णुधामच्छंदोमनोज्योतिश्च-
त्वारिश्रृंगादि प्राणाय अग्निमीडेइषेत्वोर्ज्जे।
अग्निआयाहिशन्नोदेवीकृत्तिवासा सा ब्रह्म-
ज्ञानम् इति देवा द्वादशमूर्त्तयः॥

७६. वही, ३९।४५,

मध्येमूर्तिमहाकाली कल्पिका च प्रबोधिनी।
नीलाम्बरा घनान्तस्था अमृता च प्रकीर्तिता॥

७७. वही, ३९।४६,

शुक्लो जयन्तो विजयो नैकवर्णो हुतांशनः।
हुतार्चिव्यापकश्चैव अश्वः सप्त प्रकीर्त्तिताः॥

७८. वही, ३९।५२,

वितानध्वजमालाभिः कलशैश्चविभूषितम्।
दर्पणैर्विमलैश्चैवच्छत्रैवस्त्रावगुण्ठितैः॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



५८७ ई० )[७९] के प्रतिमामूलक विवेचन से की जा सकती है। बृहत्संहिता में सूर्य-प्रतिमा का अधोलिखित विवेचन प्राप्त होता है—भगवान् सूर्य की नासिका, ललाट, जंघा, उरु, कपोल तथा वक्षस्थल उन्नत होने चाहिए। वक्षस्थल से पैर तक उनका शरीर ढका रहता है। इस प्रकार बृहत्संहिता में सूर्य को उत्तरी वेशभूषा (उदीच्यवेष) पहनने वाला कहा गया है।[८०] वे सिर पर मुकुट धारण करते हैं और हाथों में दो कमल-पुष्पों की नाल पकड़े हुए हैं। उनका वदन कुण्डल से सज्जित होना चाहिए तथा वे हार एवं अव्यंग से भूषित हों।[८१] कमल की अन्तःकान्ति से युक्त, कवच पहने हुए उन्हें प्रसन्न तथा आवृत मुख वाला होना चाहिए। रत्न की भाँति उज्ज्वल प्रभा-मण्डल वाले सूर्यदेव शुभप्रद होते हैं।[८२] साम्बपुराण की भाँति बृहत्संहिता में भी सूर्य-प्रतिमा के बड़ी छोटी होने पर शुभाशुभ फल का विवेचन किया गया है। एक हाथ की प्रतिमा सौम्य, दो हाथ की प्रतिमा धन देने वाली, तीन तथा चार हाथ की प्रतिमाएँ प्रभूत कल्याण करने वाली होती हैं।[८३] प्रतिमा के बड़ी होने पर राजभय तथा छोटी होने पर रोग होता है। उदर के क्षीण होने पर दुर्भिक्ष तथा कृशाङ्ग होने पर दरिद्रता का सामना करना पड़ता है।[८४] खरोंच होने पर शस्त्र भय तथा फटने पर

---

७९. काणे, पी० वी०, हिस्ट्री आफ धर्मशास्त्र, भाग १, (क्रोनोलाजिकल टेबुल), पृ० ११.

८०. बृहत्संहिता, ५७।४६,

नासाललाटजङ्घोरूगण्डवक्षांसि चोन्नतानिखेः।
कुर्यादुदीच्यवेषं गूढंपादादुरो यावत् ॥

८१. वही, ५७।४७,

बिभ्राणःस्वकररुहे बाहुभ्यांपंकजे मुकुटधारी।
कुण्डलभूषितवदनः प्रलम्बहारोवियद्गवृतः ॥

८२. वही, ५७।४८,

कमलोदरद्युतिमुखः कञ्चुकगुप्तः स्मितप्रसन्नमुखः।
रत्नोज्ज्वलप्रभामण्डलश्चकर्तुः शुभकरोऽर्कः ॥

८३. वही, ५७।४९,

सौम्या तु हस्तमात्रा वसुदा हस्तद्वयोच्छ्रिताप्रतिमा।
क्षेम सुभिक्षाय भवेत् त्रिचतुर्हस्तप्रमाणा या ॥

८४. वही, ५७।५०,

नृपभयमत्याङ्गयां हीनाङ्गायामकल्यता कर्तुः।
शातोर्यां क्षुद्भयमर्थविनाशः कृशाङ्गायाम् ॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



मृत्यु होती है।[८५] ऊर्ध्व दृष्टि से अन्धापन तथा अधःदृष्टि से चिन्ताओं का सामना करना पड़ता है। सभी प्रतिमाओं के यही शुभाशुभ लक्षण बताये गये हैं।[८६] ध्यातव्य है कि प्रतिमा-लक्षण-विवेचन, आकार-प्रकार तथा विन्यासादि विभिन्न दृष्टिकोणों से साम्बपुराण और बृहत्संहिता में वर्णन-साम्य है परन्तु बृहत्संहिता में सूर्य-परिवार तथा अनुचरों का विस्तृत उल्लेख अप्राप्य है। मात्र एक स्थल पर रेवन्त को घोड़े पर आसीन मुद्रा में शिकार एवं क्रीड़ा के सहयोगियों के साथ वर्णित किया गया है,[८७] जबकि साम्बपुराण, विष्णुधर्मोत्तर तथा अन्य वैष्णवपुराण सूर्य के रथ, सारथी तथा उनके अंग-रक्षकों का सविस्तार वर्णन करते हैं।

भविष्य पुराण में भी सूर्य-प्रतिमा से सम्बन्धित विवेचन प्राप्त होता है। भविष्यपुराण में साम्बपुराण से सामग्री ग्रहण की गई है जिसका सम्यक् बोध भविष्यपुराण में वर्णित विषय-प्रसंगों से होता है। साम्बपुराण का प्रभाव पदे-पदे अवलोकनीय है। साम्बपुराण में वर्णन प्राप्त होता है कि एक हाथ की मूर्ति सुन्दरता देने वाली, दो हाथ की मूर्ति धनधान्य प्रदान करने वाली, तीन हाथ की मूर्ति समस्त अभिलाषाओं को पूर्ण करने वाली, साढ़े तीन हाथ की मूर्ति प्रचुर अन्न देने वाली तथा कल्याणकारिणी होती है।[८८] भविष्यपुराण में भी वर्णन प्राप्त होता है कि एक हाथ की प्रतिमा सुन्दरता देने वाली, दो हाथ की प्रतिमा धनधान्य देने वाली, तीन हाथ की मूर्ति समस्त अभिलाषाओं को पूर्ण करने वाली तथा साढ़े तीन हाथ की प्रतिमा प्रचुर अन्न देने वाली एवं कल्याणकारिणी भी होती है। ऊपर, नीचे, मध्य में प्रतिमा को सर्वत्र समान होना चाहिए। ऐसी प्रतिमा को गान्धर्वी समझना चाहिए जो

---

८५. वही, ५७।५१,

मरणंतु सक्षतायां शस्त्रनिपातेन निर्दिशेत् कर्तुः।
वामावनतापत्नीं दक्षिणविनता हिनस्त्यायुः॥

८६. वही, ५७।५२,

अन्धत्वमूर्ध्वदृष्ट्या करोति चिन्तामधोमुखी दृष्टिः।
सर्वप्रतिमास्वेवं शुभाशुभं भास्करोक्तसमम्॥

८७. वही, ५८।५६,

रेवन्तोऽश्वारूढोमृगया क्रीडादि परिवारः।

८८. साम्बपुराण, ३१।३-४

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



प्रचुर धनधान्य प्रदान करने वाली हो।[८९] अतः भविष्य पुराण के अधोलिखित वर्णन भी साम्बपुराण के प्रतिमामूलक विवेचन से सर्वथा तुलनीय हैं। देव मन्दिर के द्वार से अष्टाङ्ग भर छोड़ देना चाहिए, तीसरे भाग में वेदी तथा अन्य दो भाग में प्रतिमा बनाना चाहिए।[९०] चौरासी अंगुल की मूर्ति होनी चाहिए जिसमें मुख का विस्तार बारह अङ्गुल का हो।[९१] मुख के तीन भाग चिबुक, ललाट तथा नासिका हों, दोनों कान नासिका की सिधाई में हों।[९२] नेत्र दो अङ्गुल के हों तथा उसका तृतीयांश तारक हो। पुतली के तीसरे भाग दृष्टि को विचक्षण (अतिभव्य) होना चाहिए।[९३] ललाट तथा मस्तक को एक ही

---

८९. भविष्यपुराण, १३२।४-५

एकहस्ताभवेत्सौम्या द्विहस्ता धनधान्यदा।
त्रिहस्ता प्रतिमा भानोः सर्वकामप्रदास्मृता॥
सार्द्धत्रिहस्ताप्रतिमा सुभिक्षक्षेमकारिणी।
अग्रे मध्ये च मूले च प्रतिमा सर्वतः समा॥
गान्धर्वी सा तु विज्ञेया धनधान्यावहा स्मृता॥

९०. वही, १३२।६,

देवागारस्य यद्द्वारं तस्मादष्टांशमुध्दता।
त्रिभागैः पिण्डिकाकार्या द्वो भागौ प्रतिमा भवेत्॥

तुलनीय साम्बपुराण, ३१।६

९१. वही, १३२।७,

अङ्गुलैश्च तथा मूर्तिश्चतुरशीतिसंमितैः।
विस्तारायामतः कार्या वदनं द्वादशांगुलम्॥

तुलनीय साम्बपुराण, ३१।७

९२ वही, १३२।८,

मुखत्रिभागैश्चिबुकं ललाटं नासिका तथा।
कर्णौ नासिकयातुल्यौ पादौ चानियतौ तयोः॥

तुलनीय साम्बपुराण, ३१।८

९३. वही, १३२।९,

नयने द्वयांगुले स्यातां त्रिभागा तारका भवेत्।
तृतीये तारकाभागात्कुर्याद्दृष्टिं विचक्षणः॥

तुलनीय साम्बपुराण, ३१।९

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



समान तथा उन्नत होना चाहिए। शिर प्रदेश का विस्तार बत्तीस अङ्गुल का होना चाहिए।[९४] नासिका के बराबर ग्रीवा तथा मुख के बराबर हृदयान्तर प्रदेश हो। मुख के ही बराबर नाभि-प्रदेश हो। वक्ष मुख-विस्तार के बराबर हो तथा उसका आधा कटि-भाग हो।[९५] भुजाएँ लम्बी हों तथा उसी तरह उरु और जंघे भी बराबर हों। गुल्फों के बीच चरण हों जो चार अङ्गुल ऊँचे हों।[९६] छः अङ्गुल के विस्तार में तीन अंगुल का अंगूठा, उसी के बराबर प्रदेशिनी अंगुली हो एवं शेष अंगुलियाँ क्रमानुसार छोटी हों।[९७] चरण का विस्तार चौदह अगुल का निर्दिष्ट किया गया है। इस प्रकार के लक्षणों से युक्त प्रतिमा सर्वदा पूज्या होती है।[९८] स्कन्धप्रदेश, भुजाएँ, उरु, भौंहें, ललाट, नासिका, नेत्र तथा कपोल-

---

९४. वही, १३२।१०,

ललाटमस्तकोत्सेधं　　कुर्यात्तत्सममेवच।
परिणाहस्तु शिरशो भवेद् द्वाविंशदंगुलः॥

तुलनीय साम्बपुराण, ३१।१०

९५. वही, १३२।११,

तुल्यानासिकया ग्रीवा मुखेन हृदयान्तरम्।
मुखमात्रा　　भवेन्नाभिस्ततोमेढ्रमनन्तरम्॥
मुखविस्तारणमुरस्ततोऽर्द्धं तु कटिः स्मृता॥

तुलनीय साम्बपुराण, ३१।११

९६. वही, १३२।१२,

बाहू प्रवाह तुल्यौ तु उरु जंघे च तत्समे।
गुल्फाधस्तात्तुपादः स्यादुच्छ्रितश्चतुरंगुलः॥

तुलनीय साम्बपुराण, ३१।१२,१३

९७. वही, १३२।१३,

षडंगुलसुविस्तारस्तस्याङ्गुष्ठांगुलत्रयम्　।
प्रदेशिनी च तत्तुल्या हीनाशेष नखैर्युताः॥

तुलनीय साम्बपुराण, ३१।१३-१४

९८. वही, १३२।१४,

चतुर्दशांगुलः पाद आयामात्परिकीर्तितः।
एवं लक्षणसंयुक्ता प्रतिमार्च्या भवेत्सदा॥

तुलनीय साम्बपुराण, ३१।१४-१५

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



प्रदेश समुन्नत होने चाहिए।[९९] मुस्कराते हुए मुख-कमल वाला, रमणीय बिम्बाधर तथा धवल वर्ण कुछ-कुछ लाल बरौनियों से युक्त विस्तीर्ण नेत्र वाला होना चाहिए।[१००] रत्नों से कान्तियुक्त मुकुटवाला, वलय, अंगद, हार, पदबन्ध, अव्यंग तथा समायोगों से युक्त होना चाहिए।[१०१] इन प्रकार के लक्षणों से युक्त मूर्ति प्रजा को कल्याण, आरोग्य और अभय देने वाली होती है।[१०२] ये सभी लक्षण साम्बपुराण के प्रतिमा-विवेचन में भी प्राप्त होते हैं। प्रतिमा के बड़ी-छोटी होने पर ठीक उसी प्रकार के शुभाशुभ फलों का वर्णन किया गया है जैसा कि साम्बपुराण में उपलब्ध है। प्रतिमा के अल्पाङ्गा होने पर राजभय और हीनाङ्गा होने पर विपत्ति आती है, ध्यात होने पर नेत्र-पीड़ा तथा कृशाङ्गा होने पर दरिद्रता आती है।[१०३] खरोंच होने पर शस्त्र-भय तथा फटने पर मृत्यु होती है। दाहिनी ओर झुकी होने पर निरन्तर आयु का संहार करती है।[१०४]

---

९९. वही, १३२।१५,

अंसौहरेस्तथैवोरू ललाटं च सनासिकम्।
नियते नयने गण्डौ मूर्तेः कुर्यात्समुन्नते॥

तुलनीय साम्बपुराण, ३१।१५-१६

१००. वही, १३२।१६,

विशालधवलाताम्रपक्ष्मलायतलोचने।
सस्मिताननपद्मास्यचारुबिम्बाधरस्तथा॥

तुलनीय साम्बपुराण, ३१।१६-१७

१०१. वही १३२।१७,

रत्नप्रोद्भासि मुकुट कटकांगदहारवान्।
अव्यंग पदमध्यादिसमायोगोऽपि शोभितः॥

तुलनीय साम्बपुराण, ३१।१७-१८

१०२. वही, १३२।१९,

एवं लक्षण संयुक्तां कारयेदीहितप्रदाम्।
प्रजाभ्यश्च सदा भानुः शिवारोग्याभयप्रदः॥

तुलनीय साम्बपुराण, ३१।१९-२०

१०३. वही, १३२।२०,

अल्पंङ्गायां नृपभयं हीनाङ्गायामकल्यता।
शातोदर्यां च क्षुत्पीडां कृशायां तु दरिद्रता॥

तुलनीय साम्बपुराण, ३१।२०

१०४. वही, १३२।२१,

सक्षतायां भयं शस्त्रात्स्फुटिता मृत्युकारिणी।
दक्षिणावनतायां तु शश्वदायुः क्षयोभवेत्॥

तुलनीय साम्बपुराण, ३१।२१-२२

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



बायीं ओर झुकी होने पर निश्चय ही प्रियजन का वियोग होता है। जो न बहुत चमक-दमक वाली हो और न द्युतिहीन हो, ऐसी मूर्ति प्रशंसा के योग्य होती है।[१०५] इहलोक और परलोक में शुभ चाहने वाले सूर्यभक्त को चाहिए कि वह ऐसी ही सुन्दर मूर्तियों को बनवाये क्योंकि सम्पत्तियाँ उन्हीं के अधीन होती हैं।[१०६] मस्तक, उरु, कपोल, वदन तथा समस्त अंगावयवों से युक्त सूर्य-प्रतिमा मनुष्यों का कल्याण करती है।[१०७] प्रतिमा की नासिका, ललाट, जंघा, उरु तथा वक्ष उन्नत होना चाहिए। वक्ष से पैर तक उदीच्यवेष से आवृत होना चाहिए।[१०८] कमल की अन्तःकान्ति से युक्त प्रसन्न मुख तथा रक्तवर्णीय प्रभामण्डल वाला सूर्य सब प्रकार का कल्याण करने वाला होता है।[१०९] वदन कुण्डल से भूषित हो तथा लम्बी हार पहने होना चाहिए। प्रतिमा के बड़ी होने पर राजभय तथा हीन

---

१०५. वही, १३२।२२,

उत्तरावनतायां तु वियोगो भवतिध्रुवम्।
नालोक्या नाप्यनालोक्या रक्ष्यामूर्तिः प्रशस्यते ॥

तुलनीय साम्बपुराण, ३१।२२-२३

१०६. वही, १३२।२३,

तस्माद्भास्करभक्तेन लोकद्वयहितैषिणा।
तन्मूर्तेश्चादरः कार्यस्तदधीनास्तु संपदः ॥

तुलनीय साम्बपुराण, ३१।२३

१०७. वही, १३२।२४,

शिरोरुगण्डवदनैः सर्वाङ्गावयवैस्तथा।
एवं लंक्षणसपूर्णा प्रतिमा भवेतशुभा ॥

तुलनीय साम्बपुराण, ३१।२४

१०८. वही, १३२।२५,

नासाललाटजंघोरुगण्डवक्षोभिरन्विता ।
कुर्यादादित्यवेषं तु गूढपादोदरं तथा ॥

१०९. वही, १३२।२६,

कमलोदरकान्तिनिभः कंचुकगुप्तः प्रसन्नमुखः।
रक्तोत्पलप्रभाभ्मण्डलश्च कर्तुः शुभमर्कः ॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



अंग वाली होने पर विपत्ति आती है।[११०] ध्यात होने पर नेत्र-पीड़ा तथा कृशाङ्ग होने पर विनाश होता है। खरोंच होने पर शस्त्र भय तथा फटने पर मृत्यु होती है।[१११] बायीं ओर झुकी होने पर स्त्री की तथा दायीं ओर झुकी होने पर निर्माता की आयु क्षीण होती है। उर्ध्वदृष्टि से अन्धापन तथा अधःदृष्टि से चिन्ता आती है। स्वयं भगवान् सूर्य द्वारा निरूपित सभी प्रतिमाओं के यही शुभाशुभ लक्षण हैं।[११२] इस प्रकार वर्णन-साम्य के आधार पर यह निष्कर्ष प्रमाणित हो जाता है कि भविष्यपुराण का यह वर्णन साम्बपुराण से गृहीत है।

मत्स्यपुराण (५५०-६५० ई०)[११३] में भी सूर्य-प्रतिमा लक्षण का विवेचन प्राप्त होता है। यद्यपि यह विवेचन साम्बपुराण एवं भविष्यपूराण की तरह विस्तृत नहीं है परन्तु सूर्य-प्रतिमा विषयक सामान्य जानकारी अवश्य प्रदान करता है। इसके अनुसार भगवान् सूर्य को हाथ में कमल लिये हुए, सुन्दर नेत्रों से युक्त, रथ में बैठा हुआ होना चाहिए।[११४] सूर्य के रथ में एक चक्र तथा सात

---

११०. वही, १३२।२७,

कुण्डलभूषितवदनः प्रलंबहारोऽपि गृहवृत्तः।
नृपतिभयं व्यंगायां हीनांगायामकल्यताकर्त्तुः॥

१११. वही, १३२।२८,

शातोदर्यां क्षुद्भयमर्थः विनाशः कृशांगायाम्।
मरणं तु सक्षतायां शस्त्रनिपातेन निर्दिशेत्कर्तुः॥

११२. वही, १३२।२९,

वामोन्नता तु पत्नीं दक्षिणावनता हिनस्त्यायुः।
अन्धत्वमूर्ध्वदृष्टिः करोति चिन्तामधोमुखीदृष्टिः॥
सर्वप्रतिमास्वेवं शुभाशुभं भास्करेणोक्तम्॥

११३. हाजरा, आर० सी०, स्टडीज इन द पौराणिक रिकर्ड्स एण्ड कस्टम्स, पृ० १७६, प्रतिमा विषयक अध्यायों की तिथि हाजरा महोदय ने ५५०-६५० ई० निर्धारित किया है।

११४. मत्स्यपुराण, २६१।१,

प्रभाकरस्य प्रतिमामिदानीं श्रुणुत द्विजाः।
रथस्थं कारयेद्देवं पद्महस्तं सुलोचनम्॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



घोड़े हों। कमल की अन्तःकान्ति से युक्त सुन्दर मुकुट से उन्हें अलंकृत होना चाहिए।[११५] उन्हें अनेक आभूषणों से युक्त होते हुए हाथ में दो कमल धारण किये हुए होना चाहिए। स्कन्ध पर दो लीला-पुष्प धारण किये हुए होना चाहिए।[११६] शरीर वस्त्र से आवृत हो तथा वस्त्राच्छादित होने के कारण चरणों को तेजयुक्त होना चाहिए।[११७] प्रतीहारी को तथा दोनों ओर अगल-बगल दण्ड एवं पिङ्गल को तलवार सहित उपस्थित होना चाहिए।[११८] हाथ में लेखनी हो तथा अनेक देवगणों के साथ उन्हें होना चाहिए।[११९] उनके सारथि अरुण को कमलिनी-पत्र पर स्थित होना चाहिए तथा सुन्दर ग्रीवा वाले घोड़े भी उपस्थित हों।[१२०] उन्हें भुजङ्गों से लिपटे हुए, लगाम लगे हुए सप्ताश्वों से युक्त रथ अथवा कमलासन पर हाथ में कमल लिये हुए बैठा होना चाहिए।[१२१] उक्त वर्णन के सम्यक् अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि

११५. वही, २९१।२,

सप्ताश्वश्चैकचक्रं च रथं तस्य प्रकल्पयेत् ।
मुकुटेन विचित्रेण पद्मगर्भसमप्रभम् ॥

११६. वही, २९१।३,

नानाभरणभूषाभ्यां भुजाभ्यां धृतपुष्करम् ।
स्कन्धस्थे पुष्करे द्वे तु लीलयैव धृते सदा ॥

११७. वही, २९१।४,

चौलकच्छन्नं वपुषं क्वचिच्चित्रेषु दर्शयेत् ।
वस्त्रयुग्मसमोपेतं चरणौ तेजसावृतौ ॥

११८. वही. २९१।५,

प्रतिहारौ च कर्त्तव्यौ पार्श्वयोर्दण्डपिङ्लौ ।
कर्त्तव्यौ खड्गहस्तौ तौ पार्श्वयोः पुरुषावुभौ ॥

११९. वही, २९१।६,

लेखनीकृतहस्तं च पार्श्वेधातारमव्ययम् ।
नानादेवगणैर्युक्तं एवं कुर्याद् दिवाकरम् ॥

१२०. वही, २९१।७,

अरुणः सारथिश्चास्य पद्मिनीपत्रसन्निभः ।
अश्वौ सुवलयग्रीवान्तस्थौ तस्य पार्श्वयोः ॥

१२१. वही, २९१।८,

भुजङ्गरज्जुभिर्बद्धाः सप्ताश्वा रश्मिसंयुताः ।
पद्मस्थं वाहनस्थं वा पद्महस्तं प्रकल्पयेत् ॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



साम्बपुराण में विवेचित प्रतिमा-लक्षण एवं मत्स्यपुराण के प्रतिमा-लक्षण में कुछ अन्तर है। साम्बपुराण में प्रतिमा की लम्बाई, ऊँचाई तथा उसके छोटी-बड़ी होने पर शुभाशुभ फल का वर्णन प्राप्त होता है जब कि मत्स्यपुराण में एवं विध विवेचन अनुपलब्ध है। मत्स्यपुराण में सूर्य के सप्ताश्वों तथा रथ का वर्णन प्राप्त होता है जबकि साम्बपुराण में रथ का वर्णन नहीं है। साम्बपुराण में सूर्य-परिवार तथा उनके अनुचरों का विस्तृत वर्णन उपलब्ध है जब कि मत्स्य-पुराण में दण्ड - पिंगल, प्रतीहारी तथा सारथी अरुण का सामान्य विवरण उपलब्ध है।

विष्णुधर्मोत्तर पुराण (७वीं शताब्दी ई०)[१२२] में सूर्य-प्रतिमा का विवेचन करते हुए कहा गया है कि भगवान् सूर्य को सिन्दूर से विभूषित, चमकती हुई मूंछों वाला, उत्तरी वेष से सुशोभित, सुन्दर रूप वाला, समस्त आभूषणों से युक्त तथा कमनीय होना चाहिए।[१२३] उन्हें चार भुजाओं, महान् तेजस्वी, कवच से युक्त तथा कमर में करधनी, जिसे वियाङ्ग कहते हैं, से सुशोभित होना चाहिए।[१२४] सूर्यदेव के दायें तथा दायें हाथ रश्मियों से युक्त होने चाहिए। ये रश्मियाँ हारों के रूप में ऊर्ध्वाभिमुखी रहती हैं तथा वे सब प्रकार के पुष्पों से आच्छादित रहती हैं।[१२५] उनके बायीं ओर सुन्दर रूप वाले दण्डी तथा दायीं ओर पिंगल को स्थित होना चाहिए।[१२६] वे दोनों

---

१२२. प्रतिमा विषयक अध्यायों की तिथि स्टेला क्रैमरिश ७वीं शताब्दी ई० मानते हैं—द्रष्टव्य, शुक्ला, द्विजेन्द्रनाथ, शिल्प शास्त्र, पृ० ५६

१२३. विष्णुधर्मोत्तरपुराण, खण्ड ३।६७।२,

रविः कार्यः शुभश्मश्रुः सिन्दूराभरणप्रभः।
सुदीप्तवेशः स्वाकारः सर्वाभरणसंयुतः॥

१२४. वही, ३।६७।३,

चतुर्बाहुमहातेजाः कवचेनाभिसंवृतः
कर्त्तव्या रशना चास्य या वियाङ्गेति संज्ञिता॥

१२५. वही, ३।६७।४,

रश्मयस्तस्य कर्त्तव्या वामदक्षिणहस्तयाः।
ऊर्ध्वस्रगदामसंस्थानाः सर्वपुष्पाञ्चिताः शुभाः॥

१२६. वही, ३।६७।५,

सुरूपरूपः स्वाकारो दण्डी कार्योऽस्य वामतः।
दक्षिणे पिंगलो भागे कर्त्तव्यश्चातिपिंगलः।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



भी उत्तरी वेष में सूर्य के समान ही सुसज्जित रहते हैं तथा उन दोनों के ऊपर सूर्य के हाथ रखे रहते हैं हैं ।[१२७] पिंगल के हाथों में पत्र तथा लेखनी रहती है और सूर्य के हाथों में चर्म निर्मित शूल रहता है ।[१२८] सूर्य के बायीं ओर सिंह तथा ध्वज होना चाहिए और उनके बगल उनके चारों पुत्र रैवन्त, यम तथा दो मनु स्थित हों। इस प्रकार ग्रहों अथवा परिवार से युक्त ग्रहराज सूर्य को होना चाहिए।[१२९] सूर्य के बगल में राज्ञी, निक्षुभा, छाया तथा सुवर्चसादेवी नाम की उनकी चारों पत्नियों को स्थित होना चाहिए।[१३०] सात घोड़ों द्वारा खींचे जाने वाले रथ में वे बैठे हों, जिसमें एक पहिया तथा छः दण्ड हों। अरुण सूर्य का सारथि है जो उनके रथ को चलाता है।[१३१] विष्णुधर्मोत्तरपुराण में सुर्य का रूप उत्तरी और दक्षिणी दोनों ग्रन्थों में प्राप्त रूपों से साम्य रखता है। उत्तरी भारत के ग्रन्थ सूर्य के शरीर को अधिक ढकने पर बल देते हैं। उनके यावियाङ्ग तथा बूट पहने हुए (उपानत् पिनद्ध पादयुगलम्) स्वरूप के वर्णन पर विदेशी प्रभाव स्पष्टतया परिलक्षित होता है। दक्षिणी वेशभूषा में सूर्य के शरीर को अधिक ढंका हुआ नहीं बताया गया है। उनके कुछ स्त्री और पुरुष अनुचर

---

१२७. वही, ३।६७।६,

उद्दीप्तवेशौ कर्त्तव्यौतानुभावपि यादव।
तयोमूर्धनि विन्यस्तौ करौ कार्यौ विभावसोः ॥

१२८. वही, ३।६७।७,

लेखनी पत्रककरः कार्यो भवति पिंगलः।
चर्मशूलधरोदेवस्तथा यत्नाद्विधीयते ॥

१२९. वही, ३।६७।८-९,

सिंहोध्वजश्च कर्त्तव्यस्तथा सूर्यस्य वामतः।
चत्वारश्चास्य कर्त्तव्यास्तनयास्तस्य पार्श्वयोः ॥
रेवन्तश्चयमश्चैवमनुद्वितमेव च।
ग्रहराजो रविः कार्योग्रहैर्वापरिवारतः ॥

१३०. वही, ३।६७।१०,

राज्ञी च निक्षुभाच्छाया तथा देवी सुवर्चसा।
चतस्रश्चास्य कर्त्तव्याः पत्यश्च पारिपार्श्वयोः ॥

१३१. वही, ३।६७।११,

एक चक्रेऽथ सप्ताश्वे षड्रेखाङ्के रथोत्तमे।
उपविष्टस्तु कर्त्तव्यो देवो वारुणसारथिः ॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



अवश्य ही अधिक ढंके हुए शरीर वाले बतलाये गये हैं।[१३२] इस रूप के अतिरिक्त सूर्य का रथारूढ़ स्वरूप भी अत्यन्त वैभवपूर्ण है। बृहत्संहिता में भी सूर्य को उत्तरी वेषभूषा (उदीच्यवेष) पहनने वाले के रूप में निरूपित किया गया है। इसके अनुसार वक्षस्थल से पैर तक उनका शरीर ढका रहता है। सिर पर मुकुट, हाथ में कमलपुष्प, गले में हार तथा कानों में कुण्डल है। कमर में वियङ्ग तथा मुख आवरण से ढका रहता है। बृहत्संहिता सूर्य के रथ, उनके अनुचर तथा अश्वों के बारे में मौन है परन्तु विष्णुधर्मोत्तर तथा अन्य वैष्णवपुराण सूर्य के रथ, सारथी उनके अंगरक्षकों आदि का उल्लेख कर उस रिक्ति की प्रतिपूर्ति कर देते हैं। विष्णुधर्मोत्तर में प्रतिपादित सूर्य की यावाङ्गवीय नाम की मेखला ईरानियों द्वारा कमर में पहने जाने वाले पवित्र सूत्र का ही भारतीय रूप है।[१३३] यह कुषाण, गुप्तकाल तथा उसके बाद की बनी हुई प्रतिमाओं से सुस्पष्ट हो जाता है। उत्तरी भारत में इस प्रकार की बनने वाली सूर्य की प्रतिमायें ईरानियों के मिथ्र देवता से मिलती हैं। पहले वे लोग भी सूर्य को मानवीय रूप में न दिखाकर गोल पहिया तथा चक्र के रूप में प्रदर्शित करते थे। बाद के मिस्री अवशेषों में सूर्य को मानवीय रूप प्रदान किया गया है।[१३४] इस रूप की अनेक प्रतिमायें हैं जो ईरानियों के सूर्यदेवता मिथ्र अथवा मिहिर से साम्य रखती हैं।[१३५] सूर्य के पुत्रों में रेवन्त ही प्रमुख हैं। बृहत्संहिता में इन्हें अनुचरों के साथ मृगया-व्यापार में रत दिखाया गया है।[१३६] बिष्णुधर्मोत्तर इनका रूप सूर्य के समान ही बनाने का निर्देश देता है। उन्हें वह घोड़े की पीठ पर बैठा हुआ प्रदर्शित करता है।[१३७] इनकी एक प्रतिमा घाट नगर (दीनापुर) में है। प्रतिमा काले पत्थर की है। रेवन्त बायें हाथ में चाबुक

१३२. बनर्जी, जे० एन०, द डिवलपमेण्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी, पृ० ४३८

१३३. मिश्र, इन्दुमती, प्रतिमाविज्ञान, पृ० २९९।

१३४. बनर्जी, जे० एन०, पूर्वोद्धृत, पृ० ४३८

१३५. ब्रिटिश म्यूजियम कैटेलाग आफ क्वायन्स, पृ० ३२, प्लेट १०, आकार ५-९, द्रष्टव्य, मिश्र, इन्दुमती, प्रतिमा विज्ञान, पृ० ३००

१३६. बृहत्संहिता, ५७।५।५६

१३७. विष्णुधर्मोत्तर पुराण, ७०।१२-१५

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



लिये हुए घोड़े पर आरूढ़ हैं। वे बूट आदि पहने हैं, दाहिने हाथ में लगाम है, एक स्त्री अनुचर छत्र लिए पीछे खड़ी है।[१३८]

पद्मपुराण (६००-७५० ई०)[१३९] में सूर्य-प्रतिमा विवेचन सम्बन्धी विवरण प्राप्त होता है। पद्मपुराण में उल्लिखित प्रतिमा-निरूपण अपने प्रकार का एक भिन्न विवेचन है जिसमें केवल इस बात पर बल दिया गया है कि सूर्य की प्रतिमा में उनका पैर कदापि नहीं दिखाना चाहिए। एवंविध विवरण साम्बपुराण, वृहत्संहिता, भविष्यपुराण आदि में कहीं भी नहीं प्राप्त होता। सूर्य-प्रतिमा-विवेचन के प्रसंग में कहा गया है कि त्वष्टा ने पद्मामृत में सूर्य के अद्वितीय रूप का निर्माण किया। सूर्य की प्रतिमा में उनका पैर नहीं दिखाई पड़ा।[१४०] किसी को कभी भी सूर्य का पैर नहीं बनाना चाहिए। जो ऐसा करता है, वह निन्दनीय अधमगति को प्राप्त होता है।[१४१] वह इस संसार में कष्टप्रद कुष्ठरोग से ग्रस्त हो जाता है, इसलिए धर्म एवं काम के चाहने वालों को चित्र और मन्दिरों में भगवान् सूर्य के पैर को नहीं निर्मित करना चाहिए।[१४२]

अग्निपुराण (नवीं शताब्दी ई० के उपरान्त)[१४३] में सूर्य-प्रतिमा सम्बन्धी विवरण व्यवस्थित एवं संक्षिप्त रूप में प्राप्त होता है। इसमें सूर्य की प्रतिमा को

१३८. बनर्जी, जे० एन०, पूर्वोद्धृत, पृ० ४३६

१३९. हाजरा, आर० सी०, पूर्वोद्धृत, पृ० १८२

१४०. पद्मपुराण, सृष्टि खण्ड, ८।६५,

रूपं चाप्रतिमं चक्रे त्वष्टा पद्मामृतं महत्।
न शशाकाथ तं द्रष्टं पादरूपं रवेः पुनः॥

१४१. वही, ८।६६,

अद्यापि च रवेः पादौ न कश्चित्कारयेत् रविः।
यः करोति स पापिष्ठां गतिं प्राप्नोति निन्दिताम्॥

१४२. वही, ८।६७,

कुष्ठरोगमवाप्नोति लोकेऽस्मिन्दुःखसंयुतम्।
तस्माच्चधर्मकामार्थीचित्रेष्वायतनेषु च॥
न क्वचित्कारयेत् पादौ देवदेवस्य धीमतः॥

१४३. हाजरा, आर० सी०, पूर्वोद्धृत, पृ० १८६, अग्निपुराण के प्रारम्भिक अध्यायों की तिथि नवीं शताब्दी ई० है जबकि इसके प्रतिमा-मूलक विवेचन की तिथि हाजरा महोदय ने नवीं शताब्दी ई० के बाद निर्धारित किया है।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



रथारूढ़ या अश्वारूढ़ रूप में दिखाने को कहा गया है जबकि अन्यत्र उपलब्ध विवरणों में एवंविध भेद नहीं किया गया है। इसमें निरूपित विवरण के अनुसार सूर्य को सात घोड़ों द्वारा खींचे जाने वाले एक पहिये के रथ पर दो कमल पुष्पों को धारण किये हुए होना चाहिए। उनके दायीं ओर मसिपात्र तथा लेखनी धारण किये हुए कुण्डी को तथा बायीं ओर प्रतीहारी पिंगल को दण्ड धारण किये हुए स्थित होना चाहिए। बगल में राज्ञी तथा निष्प्रभा (पाठान्तर निक्षुभा) चमर धारण किये हुए होनी चाहिए। अथवा भगवान् सूर्य को अकेले ही घोड़े पर आरूढ़ प्रदर्शित करना चाहिए।[१४४] भगवान् सूर्य द्वारा धारित दो कमल पुष्प प्रकाश एवं जीवन के द्योतक हैं तथा मसिपात्र एवं लेखनी को धारण किये हुए कुण्डी सूर्य-संचरण द्वारा विश्व ब्रह्माण्ड की आयु के आकलन और वहाँ के प्राणियों के गुणावगुण को ईश्वरीय अभिलेख में अभिलिखित करने के द्योतक हैं।[१४५]

ब्रह्मपुराण ( ९५०-१२०० ई० )[१४६] में सूर्य-प्रतिमा-लक्षण का अत्यन्त संक्षिप्त विवेचन प्राप्त होता है। इसमें उल्लिखित विवरण अन्य पुराणों की तुलना में विशिष्टार्थ नहीं रखता। इसके अनुसार सूर्य विश्वकर्मा द्वारा भली-भाँति आजानु बाहु रूप में चित्रित किये गए। लोगों के द्वारा अभिनन्दम न किए जाने पर विश्वकर्मा द्वारा वे साक्षात अवतरित किये गये। तेजविहीन तथा अप्रशस्त रूप का निर्माण नहीं करना चाहिए। अधिक भव्य एवं सुन्दरतम रूप महान् कल्याणप्रद होता है।[१४७]

पुराणों की परम्परा के अतिरिक्त कुछ अन्य साहित्यिक ग्रन्थों में भी सूर्य-प्रतिमा-लक्षण का विवेचन किया गया है। इन ग्रन्थों में प्राप्त विवरण यद्यपि

---

१४४. अग्निपुराण, अध्याय ५१, ससप्ताश्वे चक्रे रथे सूर्यो द्विपद्मधृक्।
मषीभाजनलेखिन्यौ बिभ्रत्कुण्डी तु दक्षिणे ॥
वामे तु पिङ्गलो द्वारि दण्डभृत्सर्वेगणः।
बालव्यजन धारिण्यौ पार्श्वे राज्ञी च निष्प्रभा।
अथवाश्वसमारूढः कार्य एकस्तु भास्करः ॥

१४५. पाण्डेय, एल० पी, पूर्वोद्धृत, पृ० १४०

१४६. हाजरा, आर० सी०, पूर्वोद्धृत, पृ० १८७

१४७. ब्रह्मपुराण, ३२।१०६-१०७, आजानुलिखितश्चासौ निपुणंविश्वकर्मणा।
नाभ्यनन्दत्तु लिखनं ततस्तेनावतारितः ॥
न तु निर्भर्त्सितरूपं तेजसो हननेन तु।
कान्तात्कान्ततरं रूपमधिकं शुशुभे ततः ॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



पूर्णतया साम्बपुराण से साम्य नहीं रखता तथापि बहुत कुछ अंशों में मौलिक एकता स्थापित की जा सकती है । अंशुमद्भेदागम[१४८] में उपलब्ध सूर्य-प्रतिमा-लक्षण के अनुसार सूर्य की दो भुजाएँ हों और उनमें दो कमल पुष्प हों, वे लाल कमल के आसन पर स्थित हों, लाल मण्डल से युक्त हों तथा वे करण्ड के मुकुट से विभूषित हों ।[१४९] बारहों आदित्य लाल वस्त्र पहने हुए समस्त आभूषणों से विभूषित एवं उत्तरी वेष से युक्त होने चाहिए ।[१५०] वैवस्वत, विवस्वान्, मार्तण्ड, भास्कर, रवि, लोक प्रकाशक, लोकसाक्षी, त्रिविक्रम, आदित्य, सूर्य, अंशुमान तथा दिवाकर ये क्रमशः बारह आदित्य हैं ।[१५१] अंशुमद्-भेदागम में बारह आदित्यों के नाम बताये गये हैं और उन सभी को उत्तरीवेष से युक्त तथा रक्त वस्त्रे पहने हुए निरूपित किया गया है । उल्लेखनीय है कि अंशुमद्भेदागम के द्वादशादित्य और साम्बपुराण के द्वादशादित्यों में संज्ञामूलक भिन्नता है । केवल विवस्वान् नामक आदित्य दोनों में समान अभिधा से जाने जाते हैं । साम्बपुराण के अंशु, इस ग्रन्थ में अंशुमान हो गये हैं । इसमें साम्बपुराण की तरह सूर्य-परिवार का विवेचन नहीं प्राप्त होता ।

---

१४८. प्रतिमा-लक्षण-निरूपण-क्रम में इस ग्रन्थ की तिथि १२वीं शताब्दी ई० निर्धारित की जा सकती है ।

१४९. अंशुमद्भेदागम, ४९वाँ पटल,

द्विभुजाः पद्महस्ताश्चरक्तपद्मासनेस्थिताः ।
रक्तमण्डल संयुक्ताः करण्डमुकुटान्विताः ।।

१५०. वही, ४९वाँ पटल,

रक्ताम्बर धरास्सर्वेसर्वाभरणभूषिताः ।
छन्नवीरसमायुक्ता भास्करा द्वादशा इमे ।।

१५१. वही, ४९वाँ पटल,

वैवस्वतोविवस्वांश्च मार्तण्डो भास्करो रविः ।
लोकप्रकाशकश्चैव लोकसाक्षीत्रिविक्रमः ।।
आदित्यश्च तथा सूर्यः अंशुमांश्च दिवाकरः ।
एते वै द्वादशादित्याश्चोत्तरादिक्रमास्थिताः ।।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



सुप्रभेदागम[१५२] में भी सूर्य-प्रतिमा का विवेचन मिलता है। सूर्य की दो भुजाएँ तथा उनमें कमल हों, वे सुन्दर रक्त वर्ण के हों तथा समस्त आभूषणों एवं करण्ड के मुकुट से विभूषित हों।[१५३] मध्य में प्रभा - मण्डल हो, दायें तथा बायें उषा और प्रत्युषा नामक देवियाँ स्थित हों।[१५४] आगे रक्तकमलवर्णीय अरुण को बनाना चाहिए तथा सात घोड़ों के रथ के बीच पापनाशक भगवान् सूर्य को स्थित करना चाहिए।[१५५] उनको रक्त कमल के आसन पर स्थित करना चाहिए। इसी विधि से सभी आदित्यों की प्रतिमाओं का निर्माण करना चाहिए।[१५६] अर्यमा, इन्द्र, वरुण, पूषा, विष्णु, भग, अजघन्य, मित्र, धाता, विवस्वान् पर्जन्य ये बारह आदित्य हैं। इन सभी को दो भुजाएँ, दोनों हाथों में कमल, रक्तकमल के आसन पर स्थित, प्रभामण्डल से युक्त एवं

---

१५२. इस ग्रन्थ की तिथि १२वीं शताब्दी ई० निर्धारित की जा सकती है।

१५३. सुप्रभेदागम, ४९वाँ पटल,

द्विभुजं पद्महस्तं तु रक्तवर्णं सुरूपकम्।
करण्डमुकुटोपेतं सर्वाभरणभूषितम्॥

१५४. वही, ४९वाँ पटल,

मुकुटद्विगुणं तारं प्रभामण्डलमध्यमम्।
उषाश्चप्रत्युषादेवी सव्यासव्ये तु संस्थितः* ॥

संस्थिते* पाठ अधिक समीचीन प्रतीत होता है।

१५५. वही, ४९ वाँ पटल,

अरुणं चाग्रतः कृत्वा पङ्कजे* तस्वरूपकम्।
सप्ताश्वरथमध्यस्थं भास्कर पापनाशनम्॥

*'पङ्कजे' के स्थान पर 'पङ्गुवत्' पाठ होना चाहिए।

१५६. वही, ४९वाँ पटल,

रक्तपद्मासनस्थं हि भासनं तमकल्पयेत्।
पूर्वोक्तविधिना सर्वमादित्यं परिकल्पयेत्॥



CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



सुन्दर स्वरूप वाले लोकनायक के आकार में अवस्थित करना चाहिए।[१५७] उक्त विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि सूर्य की प्रतिमा के लक्षण अंशुमद्भेदागम एवं सुप्रभेदागम में बहुत साम्य रखते हैं। ये लक्षण साम्बपुराण के वर्णन से भी साम्य रखते हैं परन्तु सुप्रभेदागम के द्वादशादित्य अंशुमद्भेदागम से बहुत अंशों में भिन्न हैं। सुप्रभेदागम के द्वादशादित्यों में दस आदित्य साम्बपुराण से साम्य रखते हैं। सुप्रभेदागम के अजघन्य तथा जघन्य साम्बपुराण [१५८] में त्वष्टा और अंशु नाम से अभिहित किये गये हैं।

शिल्परत्न ( १६वीं शताब्दी ई० )[१५९] में सूर्य - प्रतिमा का विवेचन अग्रलिखित रूप में प्राप्त होता है। रक्तवर्णीय आभा वाले, महान् तेजस्वी, दोनों हाथों में कमल लिए हुए भगवान् सूर्य को सात घोड़ों से युक्त, लगाम से बंधे हुए एक पहिये वाले रथ में आसीन होना चाहिए जिनके पैर के नीचे कमल हो, वे मणिकुण्डल से युक्त हों एवं कमलवर्णीय किरीट धारण किये हों।[१६०] वे लाल वस्त्र धारण किये हुए रमणीय एवं मनोहर अंग वाले हों। उनके सारथि अरुण को निर्मित करना चाहिए। खड्ग एवं खेटक नामक अस्त्रों को लिये हुए

---

१५७. वही, ४८वाँ पटल,

अर्यमाचेन्द्र वरुणौपूषाविष्णुभगस्तथा।
अजघन्यो जघन्यश्च मित्रो धाता इति स्मृताः॥
विवस्वांश्चैव पर्जन्यस्त्वादित्या द्वादश स्मृताः।
द्विभुजाः पद्महस्ताश्च रक्तपद्मासनेस्थिताः॥
रश्मिमण्डलसंयुक्तास्सुरक्ताः लोकनायकाः।

१५८. साम्बपुराण, ४।६

१५९. केरल निवासी श्री कुमार ने शिल्परत्न का प्रणयन किया था, द्रष्टव्य, शुक्ला, द्विजेन्द्रनाथ, पूर्वोद्धृत, पृ० ६६

१६०. शिल्परत्न, २५वाँ अध्याय,

रक्तवर्णो महातेजा द्विबाहुः पद्मभृद्रविः।
सप्तिभिस्तुर्णैर्युक्ते सर्वरज्जुसमन्विते॥
एकचक्रे रथेतिष्ठन्पादाक्रान्तसरोरुहः।
माणिक्यकुण्डलोपेतः पद्मरागकिरीटकः॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



मण्डल एवं पिंगल नामक उनके दो प्रतीहारियों को भी दिखाना चाहिए।[१६१] साम्बपुराण तथा शिल्परत्न के प्रतिमा-विवेचन में जहाँ एक ओर पर्याप्त समानता है, वहीं शिल्परत्न में सूर्य के परिवार तथा उनके अनुचरों का वर्णन लगभग अप्राप्य सा है। शिल्परत्न में कमलवर्णीय किरीट अपने में नूतनोद्भाव का द्योतक है।

विश्वकर्मशास्त्र[१६२] में सूर्य-प्रतिमा का सुस्पष्ट विवेचन प्राप्त होता है। इसमें धाता, मित्र, अर्यमा, रुद्र, वरुण, सूर्य, भग, विवस्वान्, पूषा, सविता, त्वष्टा तथा विष्णु नामक द्वादशादित्यों[१६३] का वर्णन प्राप्त होता है। जो साम्बपुराण के द्वादशादित्यों से बहुत साम्य रखते हैं। इसमें सूर्य, सविता और रुद्र नाम मिलते हैं जबकि साम्बपुराण में इन्द्र, पर्जन्य और अंशु नाम प्राप्त होते हैं। इन्हीं द्वादशादित्यों की बारह मूर्तियों के लक्षण निरूपित किये गये हैं। यह वर्णन भिन्न प्रकार का है जो अन्यत्र इस रूप में उपलब्ध नहीं होता। उल्लेखनीय है कि इस ग्रन्थ में सूर्य-परिवार और उनके अनुचरों का विवरण नहीं प्राप्त होता। प्रथम मूर्ति धात्री के दायें हाथ में पुष्करी नाम की माला तथा बायें हाथ में कमण्डल होना चाहिए। अन्य हाथों में कमल होने चाहिए।[१६४] बायें हाथ में

---

१६१. वही, २५वाँ अध्याय,

रक्ताम्बरधरो रम्यस्सुव्यक्ताङ्गो मनोहरः।
अनूरुसारथिः कार्यः प्रतिहारौ च पार्श्वयोः॥
मण्डलपिङ्गलनामानौ* खड्गखेटकधारिणौ॥

*मण्डलपिङ्गलनामानौ के स्थान पर 'दण्डपिंगलनामानौ' पाठ होना चाहिए।

१६२. विश्वकर्मशास्त्र की तिथि ११-१२वीं शताब्दी ई० निश्चित की जा सकती है।

१६३. विश्वकर्मशास्त्र,

धातामित्रोऽर्यमारुद्रो वरुणस्सूर्यएव च।
भगोविवस्वान्पूषा च सविता दशमस्मृतः।
एकादशस्तथा त्वष्टा विष्णुर्द्वादश उच्यते॥

१६४. विश्वकर्मशास्त्र, दक्षिणे पौष्करी माला करे वामे कमण्डलुः।
पद्माभ्यां शोभितकरा सा धात्री प्रथमा स्मृता॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



शूल, दायें में सोम तथा कौशेय वस्त्र धारण करने वाली मूर्ति मैत्री नाम से जाननी चाहिए जिसके तीन नेत्र होते हैं।[१६५] दायें हाथ में चक्र, बायें में कमलिनी तथा कमल एवं पल्लवों से युक्त हाथ वाली मूर्ति को अर्यमा समझना चाहिए।[१६६] दायें और बायें हाथ में क्रमशः चक्र एवं अक्षमाला को धारण किये हुए कमल से सुशोभित मूर्ति को रौद्री नाम से जानना चाहिए।[१६७] जिसके दायीं ओर चक्र तथा बायें पाश हों, दोनों हाथों में कमल धारण किये हों, ऐसी मूर्ति को वारुणी जानना चाहिए।[१६८] जिसके दायीं और बायीं ओर कमण्डल तथा अक्षमयी माला सुशोभित हो ऐसी कमल पुष्प से सुशोभित मूर्ति को सूर्यमूर्ति समझना चाहिए।[१६९] जिसके दायें एवं बाये हाथ में क्रमशः शूल एवं सुदर्शन चक्र हों, हाथ में कमल धारण किये हुई ऐसी शुभमूर्ति को भग नाम से जानना चाहिए।[१७०] बाये हाथ में माला, दाये हाथ में त्रिशूल धारण करने वाली कमल से सुशोभित मूर्ति को विवस्वान् समझना चाहिए।[१७१] दोनों हाथों में कमल धारण किये हुए, समस्त लक्षणों से युक्त पूषा नामक मूर्ति को समस्त पापों की विनाशिका समझना चाहिए।[१७२] जिसके दाये हाथ में गदा

---

१६९. वही, शूलं वामकरे चाख्या दक्षिणे सोम एव च।
मैत्री नाम त्रिनयना कुशेशय विभूषिता॥

१६६. वही, प्रथमे तु करे चक्रं तथा वामे च कौमुदी।
मूर्तिराममणी ज्ञेया सपद्मैः पाणिपल्लवैः॥

१६७. वही, अक्षमालाकरे सव्ये चक्रं वामे प्रतिष्ठितम्।
सा मूर्ति रौद्री ज्ञातव्या प्रवाना पद्मभूषिता॥

१६८. वही, चक्रंतु दक्षिणे यस्या वामे पाशस्सुशोभनः।
सा वारुणीभवेन्मूर्तिः पद्मव्यग्रकरद्वयाः।

१६९. वही, कमण्डलुर्दक्षिणतो माला चाक्षमयी भवेत्।
सा भवेत्सम्मता सूर्यमूर्तिः पद्मविभूषिता॥

१७०. वही, यस्या दक्षिणतश्शूलं वामहस्ते सुदर्शनः।
भगमूर्तिस्समाख्याता पद्महस्ता शुभाजयः॥

१७१. वही, अथवामकरे माला त्रिशूलं दक्षिणे स्मृतम्।
विवस्वन्मूर्तिरेषा स्यात्पद्मलाञ्छनलछिता॥

१७२. वही, पूषाख्यस्य भवेन्मूर्त्तिर्द्विभुजा पद्मलांछिता।
सर्वपापहरा ज्ञेया सर्वलक्षण लक्षिता॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



एवं बाये हाथ में सुदर्शन चक्र हो, कमल धारण किये हुए ऐसी मूर्ति को समस्त कार्यों को सिद्ध करने वाली सावित्री नाम से जानना चाहिए।[१७३] जिसके दाये हाथ में सूत्र तथा बाये में होम से उत्पन्न कालिमा हो, दोनों हाथों में कमल हों, ऐसी मूर्ति को त्वष्टा नाम से जानना चाहिए।[१७४] जिसके दाये हाथ में सुदर्शन एवं बाये हाथ में कमल हो, ऐसी अतुल तेज सम्पन्ना मूर्ति को विष्णु की बारहवीं मूर्ति समझना चाहिए।[१७५] उल्लेखनीय है कि सूर्य की द्वादशमूर्तियों के ये लक्षण अन्यत्र अनुपलब्ध हैं क्योंकि इसमें सूर्य की मूर्तियों के केवल हाथों में धारण करने वाली वस्तु का ही नाम दिया गया है जिसमें कमल सर्वत्र समान है, अन्य अंगों का विवरण अप्राप्य है। वर्णन-प्रणाली साम्बपुराण से साम्य रखती है।

पूर्वकरणागम (लगभग आठवीं शताब्दी ई०)[१७६] में सूर्य-प्रतिमा के निम्न-लिखित लक्षण विवेचित किये गये हैं—पुरुष की आकृति में भगवान् सूर्य को एक पहिये वाले, सात घोड़ों से युक्त, सारथि सहित विशाल रथ में स्थापित करना चाहिए।[१७७] उनके अर्धाङ्ग वाम भाग को श्यामवर्णीया नारी के रूप में प्रदर्शित करना चाहिए जो कि समस्त आभूषणों से समलङ्कृत हो। उनके बाल घुंघराले एवं सुन्दर हों तथा वे प्रभामण्डल से युक्त हों। सभी ओर सुन्दर मण्डल हों तथा वे मुकुट धारण किये हुए हों।[१७८] उनके दोनों हाथों में कमल हो तथा शरीर

---

१७३. वही, दक्षिणे तु गदा यस्या वामे चैव सुदर्शनः।
पद्मव्यग्रा तु सावित्री मूर्तिस्सर्वार्थसाधनी॥

१७४. वही, सूत्रं च दक्षिणे हस्ते वामे होमजकालिकाम्।
मूर्तिस्त्वाष्ट्री भवेत्सा स्यात्पद्मरुद्धकरद्वया॥

१७५. वही, सुदर्शनकरा सव्ये पद्महस्ता तु वामतः।
एषा स्याद् द्वादशीमूर्तिर्विष्णोरमिततेजसः॥

१७६. राव, गोपीनाथ, इलीमेन्ट्स आफ हिन्दू आइकनोग्राफी, पृ० ५६

१७७. पूर्वकरणागम, १३वाँ पटल,
एकचक्रससप्ताश्वससारथिमहारथम्।
कृत्वा तु स्थापयेत्सूर्यं पुरुषाकृतिरूपिणम्॥

१७८. वही, १३वाँ पटल,
तदर्धं वामतश्श्यामं नारी रूपसमन्वितम्।
कृत्वा तु स्थापयेत्सम्यक् सर्वाभरणभूषितम्॥
आकुञ्चित सुकेशास्तु प्रभामण्डलसंयुतम्।
मुकुटं वा विधातव्यमन्यत्सर्वं सुमण्डलम्॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



वस्त्र से आवृत हो। एक वस्त्र स्कन्ध प्रदेश तक हो तथा हाथ में कमल हो।[१७९] वे रथासीन हों अथवा केवल कमल पर बैठे हों। उनके पैर खेटक (अथवा कटक) पर स्थित हों तथा वे पद्मासन पर हों।[१८०] सूर्यमण्डल को स्थापित करके वैकर्तन, विवस्वान्, मार्तण्ड, भास्कर, रवि, लोकप्रकाशक, लोकसाक्षी, त्रिविक्रम, आदित्य, सूर्य, अंशुमान तथा दिवाकर नामक द्वादशादित्यों को स्थापित करना चाहिए।[१८१] इस प्रकार द्वादशादित्यों की मूर्तियाँ दो हाथ वाली, दो नेत्र वाली, कमल पर बैठी हुई, कमल हाथ में लिये हुई, लाल वर्ण वाली, प्रभामण्डल से युक्त, उपवीत एवं समस्त आभूषणों से युक्त होनी चाहिए।[१८२] उल्लेखनीय है कि पूर्व-करणागम में सूर्य के अर्धाङ्ग को नारी-रूप में चित्रित किया गया है। यह स्वरूप अन्यत्र साहित्यिक विवरणों में अनुपलब्ध है। इसके अन्य प्रतिमा लक्षण भी साम्बपुराण से साम्य नहीं रखते परन्तु यह ग्रन्थ उत्तरी भारत की परम्पराओं से प्रभावित प्रतीत होता है।[१८३] इसके द्वादशादित्य साम्बपुराण के द्वादशादित्यों

१७९. वही, १३वाँ पटल,

हस्तद्वयलसत्पद्मं कञ्चुकाञ्चितविग्रहम्।
एकवस्त्रंद्विदोर्दण्डं स्कन्धेसक्तकराम्बुजम्॥

१८०. वही, १३वाँ पटल,

रथोपेतं बिना वाथ केवलं पद्मसंस्थितम्।
पादौ सखेटकौ तस्य स्थिरं पद्मासनेस्थितम्॥

१८१. वही, १३वाँ पटल,

जातिहिंगल्यवर्णस्था संस्थाप्यां* सूर्यमण्डलम्।
वैकर्तनों विवस्वांश्च मार्तण्डो भास्करो रविः॥
लोकप्रकाशकश्चैव लोकसाक्षी त्रिविक्रमः।
आदित्यश्च तथा सूर्यः अंशुमांश्च दिवाकरः॥
*संस्थाप्यम् पाठ होना चाहिए।

१८२. वही, १३वाँ पटल,

एते वै द्वादशादित्या एवमाकृतिरुच्यते।
द्विभुजाश्च द्विनेत्राश्च पद्मस्थाः पद्महस्तकाः॥
रक्ताम्बर सुवर्णाश्च प्रभामण्डलमण्डिताः।
उपवीत समायुक्तास्सर्वाभरणभूषिताः॥

१८३. बनर्जी, जे० एन०, पूर्वोद्धृत तथा द्रष्टव्य, जर्नल आफ इण्डियन सोसाइटी आफ ओरियण्टल आर्ट, भाग १६, १९४८, पृ० ६५-६६

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



से मेल नहीं खाते परन्तु अंशुमद्भेदागम के द्वादशादित्यों के लगभग पूर्णतया समान हैं।

रूप-मण्डन (१४१६-१४६९ ई०)[१८४] में सूर्य-प्रतिमा का सामान्य वर्णन प्राप्त होता है। अन्य ग्रन्थों की तरह इसमें विशद वर्णन नहीं किया गया है। भगवान् सूर्य को सभी लक्षणों से युक्त, सभी आभूषणों से विभूषित, दो भुजाओं तथा एक मुख वाले एवं श्वेत कमल धारण किये हुए प्रदर्शित करना चाहिए।[१८५] वर्तुलाकार प्रभामण्डल के मध्य उन्हें लाल वस्त्र पहने हुए प्रदर्शित करना चाहिए। आदित्य का यह रूप पापों को नष्ट करने वाला होता है।[१८६] उक्त विवेचन से सुस्पष्ट होता है कि इस ग्रन्थ में वर्णित सूर्य-लक्षण दक्षिण भारतीय परम्पराओं से प्रभावित हैं।

विश्वकर्मावतारशास्त्र[१८७] में सूर्य-प्रतिमा का अधोलिखित वर्णन प्राप्त होता है—सात घोड़ों वाले एक पहिये के दिव्य रथ में भगवान् सूर्य को सबसे ऊपर बैठाकर प्रदर्शित करना चाहिए जिसके सारथि तार्क्ष्य के छोटे भाई अरुण हों।[१८८] उनका वक्षस्थल विशाल हो, वर्ण लाल तथा कमल के समान मनोहर हो, मणियों के कुण्डल से सुशोभित हजारों किरणों को धारण करने वाले वे महान् तेजस्वी हों।[१८९] उनका शरीर उत्तरी वस्त्र से आच्छादित

---

१८४. टाड के अनुसार १४१९ ई०-१४६९ ई० तक मेवाड़ पर राजा कुम्भा का शासन था। उनके ही काल में रूपमण्डन का प्रणयन हुआ था, द्रष्टव्य—आचार्य, पी० के०, इण्डियन आर्किटेक्चर, पृष्ठ १०३।

१८५. रूपमण्डन, सर्वलक्षणसंयुक्तं सर्वाभरणभूषितम्।
द्विभुजं चैकवस्त्रं च श्वेत पङ्कजधृत्करम्॥

१८६. वही, वर्तुलं तेजसो बिम्बं मध्यरथ रक्त वाससम्।
आदित्यस्यत्विदं रूपं कुर्यात्पापप्रणाशनम्॥

१८७. सूर्य-प्रतिमा के विवेचन क्रम में इस ग्रन्थ को मध्यकालीन निरूपित किया जा सकता है।

१८८. विश्वकर्मावतारशास्त्र २८।५।५१, एकचक्ररथोदिव्यस्तार्क्ष्यानुजसुसारथिः।
तुरगैः सप्तभिर्युक्तः ऊर्ध्वस्तमस्थितोरविः॥

१८९, वही, २८।५।५२,
बृहद्वक्षाः सुरक्तश्च सुलावण्यो कुमुद् यथा।
सहस्रांशुर्महातेजो मणिकुण्डलमंडितः॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



हो। नाल से युक्त कमल उनके कन्धे पर तथा कमल पुष्प उनके हाथ में हो।[१९०] एवंविधि विवेचन से स्पष्ट होता है कि इस ग्रन्थ में प्रतिपादित सूर्य-प्रतिमा लक्षण उत्तर भारतीय परम्पराओं से प्रभावित हैं। साम्बपुराण में विवेचित प्रतिमा-लक्षण से पूर्ण साम्य नही है परन्तु मौलिक एकता स्थापित की जा सकती है।

विश्वकर्माशिल्प[१९१] में सूर्य-प्रतिमा से सम्बन्धित जो श्लोक वर्णित हैं उनमें शब्द साम्य होते हुए भी कुछ भिन्नता प्राप्त होती है। इस ग्रन्थ के अनुसार वे एक पहिये वाले सात घोड़ों के रथ में कमल की अन्तः कान्ति से युक्त आभा वाले तथा दो भुजाओं वाले स्थित हों।[१९२] एक पहिये वाले, सारथी से युक्त सात घोड़ों वाले महान् रथ में, दोनों हाथों में कमल धारण किये हुए, उत्तरी वस्त्र के वक्षस्थल को आवृत किये हुए भगवान् सूर्य को प्रदर्शित करना चाहिए।[१९३] एवंविधि विवेचन और साम्बपुराण में प्राप्त वर्णन में इस परिप्रेक्ष्य में वैषम्य है कि इसमें सूर्य के सात घोड़ों तथा रथ का सम्यक् विवेचन है जब कि साम्बपुराण में ऐसा नहीं है। इसमें सूर्य को उतरीवस्त्र से आवृत बताया गया है, साम्बपुराण में नहीं।

मानसोल्लास (११३१ ई०)[१९४] में सूर्य-प्रतिमा सम्बन्धी पूर्णरूपेण वही विवेचन प्राप्त होता है जो शिल्परत्न में वर्णित है। इसमें प्राप्त वर्णन के अनुसार रक्तर्णीय आभा वाले, महान् तेजस्वी, दोनों हाथ में कमल लिये हुए भगवान् सूर्य को सात घोड़ों, जो सात लगाम से युक्त हों, से खींचे जाने वाले एक पहिये

---

१९०. वही, २८।५।५३,

कवचच्छन्नविग्रहः।
सनालपद्मराजीवे बिभ्रत् स्कन्धे करे क्रमात्॥

१९१. प्रतिमा-लक्षणों के आधार पर विश्वकर्माशिल्प की तिथि १० वीं शताब्दी ई० प्रस्तावित की जा सकती है।

१९२. विश्वकर्माशिल्प,

एकचक्रःससप्ताश्वः पद्मगर्भदलद्युतिः।
सप्ताश्वरथसंस्थाश्च द्विभुजश्च सदागतिः॥

१९३. वही,

एकचक्रं ससप्ताश्वं ससारथिं महारथम्।
हस्तद्वयं पद्मधरं कंचुकवर्मवक्षसम्॥

१९४. मानसोल्लास की रचना राजा सोमेश्वर ने १२ वीं शताब्दी ई० में किया था द्रष्टव्य, शुक्ला, द्विजेन्द्रनाथ, पूर्वोद्धृत पृ० ६३।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



वाले रथ में आसीन होना चाहिये जिनके पैर के नीचे कमल हो।[१९५] वे मणि-कुण्डल से युक्त उदारस्वरूप वाले हों, पुष्पराग से युक्त किरीट धारण किये हुए हों तथा रक्त वस्त्र पहने हुए रमणीय, मनोहर एवं स्पष्ट अंग वाले हों।[१९६] उनके चरण के पास महान् तेज धारण किये हुए सारथि अरुण तथा बगल में दो प्रतीहारियों को प्रदर्शित करना चाहिए।[१९७] दण्ड पिंगल नामक वे प्रतीहारी तलवार और खेटक अस्त्र लिये हों। सूर्य के समीप हाथ में लेखनी लिये हुए संसार के प्राणियों के कृत्यों को लिखने वाले धाता को चित्रित करना चाहिए।[१९८] उल्लेखनीय है कि संसार के प्राणियों के कृत्यों को अभिलिखित करने वाले धाता का विवरण अग्निपुराण के उस विवरण से साम्य रखता है जिसमें कहा गया है कि भगवान् सूर्य के समीप मसिपात्र एवं लेखनी हो तथा कुण्डी या दण्डी समस्त संसार के प्राणियों की आयु एवं उनके गुणावगुण का विवेचन करने वाले के रूप में प्रतिस्थापित किये गये हों।[१९९] यहाँ अग्निपुराण का स्पष्ट प्रभाव द्रष्टव्य है।

---

१९५. मानसोल्लास, पंक्ति ८१९--८२०,

रक्तवर्णोमहातेजा द्विबाहुः पद्मभृद्रविः ।।
सप्तभिस्तुरगैर्युक्ते सप्तरज्जुसमन्विते ।
एकचक्रे रथे तिष्ठन्पादाक्रान्तसरोरुहः ।।

१९६. वही, पं ८२१,

माणिक्यकुण्डलोदारः पद्मरागकिरीटकः ।
रक्ताम्बरधरोरम्यः सुव्यक्ताङ्गो मनोहरः ।।

१९७. वही, पं० ८२२,

पादौ तस्य प्रकर्त्तव्यौसुमहेतेजसावृतौ ।
अनूरुः सारथिः कार्यः प्रतिहारौ च पार्श्वयोः ।।

१९८. वही, पं० ८२३,

दण्डपिंगलनामानौ खड्गखेटकधारिणौ ।
धाता च लेखनी हस्तो जगत्कर्मविलेखकः ।।
कार्यो भानुसमीपस्थश्चित्रकर्मविशारदैः ।।

१९९. अग्निपुराण, अध्याय ५१, मषीभाजनलेखिन्यौ बिभ्रत्कुंडी तु दक्षिणे।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



चतुर्वर्ग-चिन्तामणि ( १२९०-१२७० ई० )[२००] में सूर्य - प्रतिमा का विवरण अधोलिखित रूप में प्राप्त होता है। अपनी शक्ति के अनुसार ही सूर्य-प्रतिमा का निर्माण करना चाहिए जो दो हाथों को ऊपर उठाये हुए एवं दो कमल पुष्पों को धारण किये हुए हो।[२०१] प्रतिमा रथ के ऊपर स्थित होनी चाहिए तथा वह रक्तवस्त्र से समलङ्कृत, कुमकुम से परिपूरित एवं रत्न-मालाओं से विधिवत सुशोभित हो।[२०२] इसके बायीं ओर सुन्दर रूप वाले दण्डी तथा दायीं ओर पिंगलवर्ण वाले पिंगल को बनाना चाहिए। राज्ञी, सवर्णा, छाया तथा सुवर्चसा नाम की देवियों को भी निर्मित करना चाहिए।[२०३] इस ग्रन्थ में सूर्य-प्रतिमा का बहुत ही अल्प परन्तु भव्य वर्णन किया गया है। सूर्य के अनुचर दण्ड एवं पिंगल तथा उनकी चारों रानियों का विवरण भी दिया गया है परन्तु उनके पुत्रों एवं सारथि अरुण का वर्णन अनुपलब्ध है। सूर्य के परिवार तथा उनके अनुचरों का यह विवरण साम्बपुराण की भाँति साङ्गोपाङ्ग तो नहीं परन्तु उसकी छाया अवश्य ही प्रस्तुत करता है।

समरांगणसूत्रधार (११वीं शताब्दी ई०)[२०४] में सूर्य-प्रतिमा का नहीं वरन् उनके मन्दिरों के प्रकारों का वर्णन प्राप्त होता है। गवय, चित्रकूट, किरण,

---

२००, काणे, पूर्वोद्धृत, भाग १, पृ० १२

२०१. चतुर्वर्गचिन्तामणि,

एकेन वा स्वशक्त्या च सूर्यप्रतिकृतिं शुभां।
कुर्याद् द्विहस्तामूद्ध्र्वन्तुपद्मद्वयसुभूषिताम् ॥

२०२. वही,

रथोपरिस्थितां रक्तवाससा समलङ्कृताम्।
कुङ्कुमेनाङ्किंतां सम्यक् रत्नमाल्यैरलंकृताम् ॥

२०३. वही,

स्वरूपरूपः स्वाकारो दण्डः कार्योऽस्य वामतः।
दक्षिणे पिङ्गले भागे कर्त्तव्यश्चातिपिंगलः ॥
राज्ञी सवर्णा छाया च तथा देवी सुवर्चसा ॥

२०४. समरांगणसूत्रधार की रचना धारा के राजा भोजदेव ने ११वीं शती ई० में किया था, शुक्ला, डी० एन०, पूर्वोद्धृत, पृ० ५९

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



सर्वसुन्दर, श्रीवत्स, पद्मनाभ, वैराज एवं वृत्त ये मन्दिरों के आठ प्रकार शुभस्वरूप निरूपित किये गये हैं।[२०५]

उल्लेखनीय है कि अंशुमद्भेदागम, सुप्रभेदागम और शिल्परत्न जो कि दक्षिण भारतीय ग्रन्थ हैं, में सूर्य-मूर्ति की दक्षिण भारतीय विशेषताओं का वर्णन प्राप्त होता है। इसी प्रकार उत्तर भारतीय ग्रन्थ विश्वकर्मशिल्प और विश्वकर्माशास्त्र उत्तर भारत में उपलब्ध सूर्य - प्रतिमाओं की विशेषताओं का विवरण प्रस्तुत करते हैं। परन्तु दक्षिण भारतीय कृति पूर्वकरणागम में उत्तर भारतीय सूर्य-प्रतिमाओं के लक्षणों का विवेचन प्राप्त होता है। इसी प्रकार रूप-मण्डन जो कि उत्तर भारतीय ग्रन्थ है, दक्षिण भारतीय सूर्य-प्रतिमाओं के लक्षणों का विवरण प्रस्तुत करता है।[२०६] ध्यातव्य है कि सूर्य की उत्तर भारतीय प्रतिमाओं को अधिकतर वस्त्रावृत रखने का प्रयास किया गया है कि जबकि दक्षिण भारतीय प्रतिमाओं को अनावृत रखा गया है। सूर्य-प्रतिमा की महत्ता सर्वतोभावेन स्थापित हो चुकी थी। साम्बपुराण में उल्लेख प्राप्त होता है कि सूर्य-प्रतिमा के दर्शन मात्र से ही समस्त पापों का प्रक्षालन हो जाता है। प्रतिमा-स्थापना करने वाला व्यक्ति दस अश्वमेध और सौ वाजपेय यज्ञों का फल प्राप्त करता है।[२०७] साम्बपुराण के परवर्ती अध्यायों में सूर्य को उपवीत से अलंकृत किया है।[२०८] सूर्य को उपवीत से अलंकृत करने की यह प्रवृत्ति गुप्तोत्तर युग से प्रारम्भ होती है।[२०९] इसी प्रकार यह ध्यान देने योग्य तथ्य है कि ईरानियन प्रभावान्तर्गत सूर्य को उपानत युक्त बनाया जाता था किन्तु साम्बपुराण में इसे केवल संवृत्त

---

२०५. समराङ्गणसूत्रधार, ५८।१०-११,

गवयश्चित्रकूटश्च किरणः सर्वसुन्दरः।
श्रीवत्सः पद्मनाभश्च वैराजोवृत्तएव च॥
एते कार्या खेरष्टौ प्रासादाः शुभलक्षणाः।

२०६. पाण्डेय, एल० पी०, पूर्वोद्धृत, पृ० १२७

२०७. साम्बपुराण, ३२।५२-५३,

२०८. वही, ५३।८,

ॐ ब्रह्मणाग्रथितं पूर्वं पवित्रमिदमुत्तमम्।
यज्ञोपवीतं महातेज गृह्णहसनमोस्तते॥

२०९. बनर्जी, जे० एन०, पूर्वोद्धृत, पृ० २९०-९१

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



शब्द से व्यक्त किया गया है।[२१०] प्रतीत होता है कि इस ऐतिहासिक तथ्य को राष्ट्रीय स्वरूप[२११] प्रदान करने हेतु केवल 'संवृत्त' शब्द से उपानत का भावबोध कराया गया है। साम्बपुराण में प्रतिमा-लक्षण-विवेचन प्रसंग में यद्यपि सूर्य के सारथि अरुण और उनके रथ का वर्णन नहीं प्राप्त होता परन्तु परवर्ती अध्यायों में रथ, अश्व एवं सारथि का स्पष्ट उल्लेख है।[२१२] इसी प्रकार प्रतिमा-विवेचन-क्रम में वर्णित 'अव्यङ्ग' को बाद में कटिबन्ध[२१३] के रूप में प्रयुक्त कर ईरानियन प्रभाव का भारतीयकरण किया गया है। साम्बपुराण में सूर्य की ध्वजा को भी उल्लेखनीय महत्व प्रदान किया गया है। ध्वज लगाने वाला व्यक्ति श्रेष्ठ गति प्राप्त करता है।[२१४] सूर्यध्वज को समस्त पापों को नष्ट करने वाला एवं सम्पूर्ण कामनाओं को सिद्ध करने वाला कहा गया है।[२१५] भविष्यपुराण में भी सूर्य की ध्वजा को धर्म से अनुप्राणित करने के उद्देश्य से धर्मध्वज[२१६] की संज्ञा देते हुए उसे स्वर्ण-निर्मित बताया गया है।[२१७] उसे पुष्प मालाओं से विभूषित तथा विभिन्न वाद्य-यंत्रों के साथ प्रदर्शित करने को निर्दिष्ट किया गया है।[२१८] साम्ब-

---

२१०. साम्वपुराण, १५।२१,

तत: प्रभृति देवस्य चरणौ नित्य संवृतः।

२११. बनर्जी, जे० एन०, मिथ्स एक्सप्लेनिंग सम एलियन ट्रेट्स आफ द नार्थ इण्डियन सन आइकन्स, इण्डियन हिस्टारिकल क्वाटर्ली, भाग २८

२१२. साम्बपुराण, ५३-३,

रथोऽयं हरितवर्णाभं रथे तिष्ठतिवाजिनम्।

अरुणः सारथिर्यस्य रथवाहः स्वयं स्थितः॥

२१३. वही, ५३।११,

कटिभूषिणमिदं पुण्यं दिव्यं देव नमोऽस्तुते।

२१४. वही, ३३।१७,

एवमारोपयेद्यंस्तु ध्वजं देवालयोपरि।

श्रिया संवर्धते नित्यं प्राप्नोति च शुभां गतिम्॥

२१५. वही, ४०।४२

२१६. भविष्यपुराण, १३८।३७

२१७. वही, १३८।४५

२१८. वही, १३८।७१, पाण्डेय, एल० पी०, पूर्वोद्धृत, पृ० १७०

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



पुराण में लकड़ी की प्रतिमाओं का विशद् वर्णन प्राप्त होता है तथापि तत्कालीन समाज में लकड़ी की प्रतिमायें प्राप्त नहीं होतीं। प्रतीत होता है कि स्थायित्व के दृष्टिकोण से अन्य धातुओं की ही प्रतिमायें बनायी जाती थीं अथवा लकड़ी की बनी हुई प्रतिमाओं के विनष्ट हो जाने की संभावना को नकारा नहीं जा सकता।

पूर्वमध्यकाल (छठीं शताब्दी ई० —बारहवीं शताब्दी ई०) की अनेक प्रतिमाएं देश के विभिन्न स्थलों से प्राप्त हुई हैं। ये प्रतिमायें खड़ी एव बैठी दो रूपों प्राप्त होती हैं। कहीं-कहीं पृष्ठ-प्रदेश को उठाये हुए एक विशिष्ट स्वरूप में भी कुछ प्रतिमायें प्राप्त होती हैं जिसे 'उटकुटासन' कहा जाता है। खड़ी एवं बैठी प्रकार की प्रतिमाओं में खड़ी प्रकार की प्रतिमाओं का बाहुल्य है। यूरोपीय शैली के अन्तर्गत प्रतिमाओं को प्रायः बैठी हुई मुद्रा में प्रदर्शित किया जाता है।[२१९] सम्भवतः विदेशी प्रभाव से मुक्त करने के लिए ही इस काल में प्रतिमाओं को खड़ी मुद्रा में बहुलांश में प्रयोग किया है। मथुरा संग्रहालय में संग्रहीत प्रतिमाओं में खड़ी मुद्रा की मूर्तियों का आधिक्य है। उल्लेखनीय है कि साम्बपुराण में बैठी मुद्रा की प्रतिमाओं का उल्लेख अप्राप्य है। मथुरा संग्रहालय की खड़ी हुई प्रतिमायें प्रायः हाथ में कमल धारण किये हैं, वे मण्डल से युक्त हैं, दण्ड, पिंगल तथा दो अन्य महिला-अनुचर विद्यमान हैं, चरणों के बीच में अरुण, ऊषा, प्रत्यूष तथा दो स्त्रियाँ, जिन्हें निक्षुभा और राज्ञी कहा जाता है, स्थित हैं। आकृति संख्या १२९० में दो अश्वाकृतियाँ भी प्रदर्शित हैं, जिन्हें अश्विनीकुमार कहा जाता है।[२२०] साम्बपुराण में प्रतिमा-लक्षण-विवेचन प्रसंग में मथुरा संग्रहालय की मूर्तियों के समस्त लक्षण तो नहीं प्राप्त होते परन्तु उनमें प्रदर्शित मण्डल[२२१] दण्ड और पिंगल,[२२२] निक्षुभा और राज्ञी[२२३] तथा अश्विनीकुमार[२२४] आदि को साम्बपुराण की प्रतिमाओं में निरूपित करने का स्पष्ट उल्लेख प्राप्त होता है। साम्बपुराण के परवर्ती अध्यायों में अश्व, रथ तथा सारथि अरुण का उल्लेख

---

२१९. श्रीवास्तव, वी० सी०, सन वरशिप इन ऐन्शियन्ट इण्डिया पृ० ३११

२२०. श्रीवास्तव, वी० सी०, वही पृ० ३११

२२१. साम्बपुराण, ३१।१८, २९।२२

२२२. वही, २९।१७

२२३. वही, २९।१६

२२४. वही, २९।१८

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



आता है।[२२५] मथुरा की मूर्तियों में सूर्य कमल लिये हुए तथा उपानत युक्त हैं। साम्बपुराण में कमल लिए हुए सूर्य की प्रतिमा को निर्मित करने का सुस्पष्ट उल्लेख है।[२२६] उनके पैरों को 'सवृत'[२२७] करने को निर्दिष्ट किया है जो 'उपानत-पिनद्ध' का भारतीयकरण है। मथुरा की मूर्तियों की बैठी मुद्रा साम्बपुराण में उपलब्ध नहीं होती।

खजुराहो से पूर्व मध्यकालीन प्रतिमाएं खड़ी एवं बैठी दोनों मुद्राओं में उपलब्ध होती हैं जिनमें खड़ी प्रकार की प्रतिमाओं का बाहुल्य है। इसके अतिरिक्त यहाँ से 'उटकुटासन' आकृति की भी कुछ प्रतिमाएं प्राप्त होती हैं।[२२८] यहाँ से प्राप्त खड़ी प्रकार की प्रतिमाओं में चित्रगुप्त मन्दिर के केन्द्र में अवस्थित सूर्य-प्रतिमा विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इसमें सूर्य किरीट, मुकुट, कुण्डल, माला, यज्ञोपवीत और अव्यग धारण किये हुए तथा उपानतयुक्त हैं। उनके सिर के चारों ओर मण्डल तथा दायें एवं बायें पिंगल और दण्ड हैं। निक्षुभा, राज्ञी, अश्विनीकुमार, अरुण तथा महाश्वेता भी प्रदर्शित किये गये हैं। इसके अतिरिक्त सप्ताश्व भी चित्रित हैं। खजुराहो की यह सूर्य-प्रतिमा साम्बपुराण में वर्णित सूर्य-प्रतिमा-लक्षण से पूर्णतया-साम्य रखती है। खजुराहो की उक्त प्रतिमा में प्रदर्शित सूर्य के किरीट मुकुट,[२२९] कुंडल,[२३०] माला,[२३१] यज्ञोपवीत,[२३२] अव्यंग,[२३३] उपानत,[२३४] तथा उनके अनुचरादि दण्ड-पिंगल,[२३५] निक्षुभा-

---

२२५. साम्बपुराण, ५३।३

२२६. वही, ३१।१९

२२७. वही, १५।२१

२२८. अवस्थी, आर० ए०, खजुराहो की देव प्रतिमायें, पृ० १७४

२२९. साम्बपुराण, ३१।१७

२३०. वही, ३१।१८

२३१. वही, ३१।१७

२३२. वही, ५३।८

२३३. वही, ३१।१८

२३४. वही, १५।२१

२३५. वही, २९।१७०

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



राज्ञी,[२३६] अश्विनीकुमार,[२३७] अरुण,[२३८] एवं महाश्वेता[२३९] ये सभी साम्बपुराण के प्रतिमा-विवेचन-क्रम में स्पष्टतया वर्णित हैं।

पूर्व मध्यकाल की सूर्य-प्रतिमायें पूर्वी भारत से भी प्राप्त हुई हैं। चौद्दाग्राम (बंगाल) की सूर्य-प्रतिमा उल्लेखनीय है। सात अश्वों द्वारा खींचे जाने वाले एक पहिये के रथ में भगवान् सूर्य कमर में करधनी पहिने बैठे हुए हैं। अरुण के नीचे नाग तथा ऊषा, प्रत्यूष, दण्डी एवं पिंगल भी उपस्थित हैं। ध्यातव्य है कि इस प्रतिमा में उल्लिखित अरुण के नीचे नाग की उद्भावना साम्बपुराण में नहीं पाई जाती। इसके अतिरिक्त रथ में सूर्य के बैठे होने की कल्पना भी साम्बपुराण में दुर्लभ है। चौद्दाग्राम की उक्त प्रतिमा ७वीं–८वीं शताब्दी ई० में पूर्वी भारतीय लघुमूर्ति चित्रण कला का उत्कृष्ट प्रतिदर्श है।[२४०] इसी प्रकार सुखबासपुर (ढाका) की सूर्य-प्रतिमा भी साम्बपुराण की प्रतिमा-परम्परा से साम्य रखती है परन्तु उक्त प्रतिमा में उदरबन्ध के साथ दो तलवारों का बंधी होना, अरुण के नीचे नाग तथा विद्याधर युगल की कल्पना साम्बपुराण से मेल नहीं खाती।

उड़ीसा में किचिंग[२४१] की पूर्वमध्यकालीन सूर्य-प्रतिमाएं खड़ी एवं बैठी दोनों मुद्राओं में प्राप्त होती हैं जो उड़ीसा की मूर्ति-कला के उत्कृष्ट उदाहरण हैं। किचिंग की प्रतिमा में भगवान् सूर्य पद्मासन पर बैठे हुए अपने दोनों हाथों में दो पूर्ण विकसित कमल-पुष्प धारण किये हुए हैं। वे मुकुट, कुण्डल, हार तथा अन्य आभूषणों से सुसज्जित हैं तथा उदीच्यवेष धारण किये हुए हैं। अरुण सप्ताश्वों द्वारा उन्हें संचरित कर रहे हैं। प्रतिमा स्मितमन्द हास से युक्त है। किचिंग की यह प्रतिमा साम्बपुराण के प्रतिमा-लक्षण से पूर्णतया साम्य रखती है। विवेचित प्रतिमा में प्रदर्शित सूर्य का स्मित मन्द हास साम्बपुराण की प्रतिमा का विशिष्ट लक्षण है।[२४२] केवल पद्मासनासीन मुद्रा ही साम्बपुराण की लक्षण परम्परा से वैषम्य रखती है।

---

२३६. वही, २९।१६
२३७. वही, २९।१८
२३८. वही, ५३।३
२३९. वही, २९।१७
२४०. भट्टसाली, एन० के० आइकनोग्राफी आफ बुद्धिस्ट एण्ड ब्राह्मनिकल स्कल्पचर इन द ढाका म्यूजियम, पृ० १७२, प्लेट ५९
२४१. बनर्जी, जे० एन०, पूर्वोद्धृत, पृ० ४३९
२४२. साम्बपुराण, ३१।१७
सस्मितानन पद्मास्य चारु बिम्बाधरः शुभः।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



एलोरा[२४३] से ८वीं शताब्दी ई० की एक सूर्य-प्रतिमा प्राप्त हुई है जिसमें सूर्य के सिर के चारों ओर मण्डल है तथा कमल-पुष्प एवं पुष्पों के गुच्छे धारण किये हुए हैं। इस प्रतिमा के अतिरिक्त कद्वार मन्दिर (८वीं–९वीं शताब्दी ई०, ९५० ई० के पूर्व)[२४४] में सूर्य-प्रतिमा प्राप्त होती है। यह प्रतिमा पृष्ठ प्रदेश को उठाये हुए है,[२४५] जिसे उटकुटासन कहा जा सकता है। उक्त प्रतिमायें निर्माण शैली के दृष्टिकोण से उत्तम हैं परन्तु साम्बपुराण की लक्षण-परम्परा से भिन्न हैं। मोढेर (गुजरात)[२४६] के सूर्य-मन्दिर के दीवालों और कोष्ठकों से ११वीं शताब्दी ई० की सूर्य-प्रतिमायें प्राप्त हुई हैं। बर्गीज[२४७] ने इनमें दो प्रतिमाओं का विश्लेषण किया है। भगवान् सूर्य सप्ताश्वों से खींचे जाने वाले रथ में समभङ्ग अवस्था में खड़े हैं। उनके दस हाथ हैं, वे पूर्ण विकसित कमल-पुष्प, किरीट, मुकुट, कुण्डल, हार, कवच, अव्यङ्ग, उपानत, उत्तरीय वस्त्र तथा माला धारण किये हुए हैं। उनके बायें दण्ड और पिंगल तथा पीछे अश्विनीकुमार हैं। अश्विनीकुमारों के सन्दर्भ में यह प्रतिमा मथुरा संग्रहालय की प्रतिमा संख्या २९० से तथा साम्ब-पुराण के वर्णन [२४८] से भी साम्य रखती है। इसके अतिरिक्त इस प्रतिमा के दस हाथ युक्त सूर्य की कल्पना को छोड़कर अन्य सभी लक्षण साम्बपुराण की प्रतिमा-परम्परा से पूर्णतया समानता रखते हैं। उक्त प्रतिमा से समानता रखती हुई एक और प्रतिमा का उल्लेख सांकलिया[२४९] महोदय करते हैं जिसमें अश्विनीकुमारों के

---

२४३. बनर्जी, जे० एन०, पूर्वोद्धृत, पृ० ४४०

२४४. सांकलिया, एच० डी०, आर्क्योलाजी आफ गुजरात, पृ० १५७

२४५. राव, गोपीनाथ, इलीमेन्ट्स आफ हिन्दू आइकनोग्राफी, खण्ड १, भाग २, पृ० ३१७ में आकृति विशेष का 'उटकुटासन' नामकरण नहीं किया है।

२४६. सांकलिया, पूर्वोद्धृत, पृ० ८४

२४७. बर्गीज, जे०, ए० एस० आई० डब्ल्यू० सी०, ९, प्लेट ५६, आकृति संख्या ५ तथा ६, द्रष्टव्य, आर्किटेक्चरल एन्टीक्विटीज आफ नार्थ गुजरात, पृ० ८८-८९।

२४८. साम्बपुराण, २९।१८,

ततथो अश्विनौद्वारिपूजाकर्मगृहाद्बहिः।

२४९. सांकलिया, पूर्वोद्धृत, पृ० १५८

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



स्थान पर दो महिलायें, संभवतः राज्ञी और निक्षुभा प्रदर्शित की गई हैं। बर्गीज द्वारा विश्लेषित दूसरी प्रतिमा साम्बपुराण की प्रतिमाओं से स्पष्टतया भिन्न है।

सूर्य-प्रतिमा-विवेचन के उक्त प्रसंग में यह निष्कर्ष स्थापित किया जा सकता है कि खजुराहो की पूर्वमध्यकालीन प्रतिमायें साम्बपुराण के प्रतिमा-लक्षणों से स्पष्टतया साम्य रखती हैं। इसके अतिरिक्त मथुरा, किचिंग (उड़ीसा) तथा मोढेर (गुजरात) की प्रतिमायें भी साम्बपुराण के प्रतिमा-लक्षणों के बहुत कुछ समान हैं। भारतवर्ष के अन्य स्थलों से प्राप्त प्रतिमायें साम्बपुराण के प्रतिमा-निरूपण से बहुलांश में वैषम्य रखती हैं परन्तु उनमें भी यत्किञ्चित् साम्य स्थापित किया जा सकता है। इसी परिप्रेक्ष्य में यह भी विवेच्य है कि भारतीय समीक्षकों एवं कलाकारों ने शनैः-शनैः विदेशी तत्व को राष्ट्रीयता का स्वरूप प्रदान किया तथा विदेशी तत्वों को राष्ट्रीयता के परिवेश में ही आत्मसात् करने का यत्न किया गया। प्रतीत होता है कि मग-परम्परा से समर्थित भारतीय सौरोपासना को लोक प्रिय एवं जनसम्मत बनाने का उनका अपना मौलिक प्रयास रहा होगा।

निष्कर्षरूपेण यह स्थापित किया जा सकता है कि भगवान् सूर्यदेव प्रागैतिहासिक काल से ही जन-सामान्य की आराध्यशक्ति के रूप में प्रतिष्ठित हो चुके थे। वैदिक काल में सूर्य का नैसर्गिक रूप उपास्य था। वेदोत्तर काल में भी भावमूलक अर्चाओं का ही प्राधान्य था। पाँचवीं-छठीं शताब्दी ई० से सूर्य का मानवीकरण प्राप्त होने लगता है। प्रतिमा-प्रचार-प्रसार-परम्परा में बृहत्संहिता, पौराणिक वाङ्मय, आगम साहित्य तथा शिल्पशास्त्रों का योगदान उल्लेखनीय है। निःसन्देह एवंविध वाङ्मय में उपलब्ध सूर्य-मूर्ति-परम्परा ने जन-हृदय का संस्पर्श कर सूर्यदेव के प्रति श्रद्धालु बनाया होगा। भगवान् सहस्त्रांशुमाली के भावात्मक पक्ष को मूर्तिमान स्वरूप देकर उनकी लोकप्रियता में वृद्धि करने का भारतीय मनीषियों का यह अन्यतम सकारात्मक प्रयास कहा जा सकता है।

———



CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS

६

# साम्बपुराण में वर्णित सूर्य-मन्दिर

मन्दिर जन-समूह के धार्मिक जागृति के द्योतक होते हैं। वे जन-सामान्य की धार्मिक चेतना, अभिरुचि तथा श्रद्धा का बोध कराते हैं। उपलब्ध मन्दिर लोगों की धार्मिक प्रवृत्ति का वस्तुनिष्ठ रूप में प्रतिनिधित्व करते है।[१]

वैदिक काल में सौर धर्मान्तर्गत मन्दिर की कोई व्यवस्था नहीं थी। उस समय सूर्य की पूजा विभिन्न प्रतीकों के माध्यम से होती थी जिसका उल्लेख मूर्ति उपासना-प्रसङ्ग में किया जा चुका है। समग्र वैदिक वाङ्मय में कहीं भी मन्दिर का उल्लेख नहीं प्राप्त होता। गृह्य सूत्रों में संकेत उपलब्ध होता है कि पंचम-चतुर्थ शताब्दी ई० पू० तक हिन्दू-समाज में मन्दिर परम्परा का विकास हो चुका था।[२] सूर्य-पूजा से सम्बद्ध मन्दिरों का विवेचन समग्र प्राचीन भारतीय साहित्य में पाँचवीं-छठीं शताब्दी ई० के पूर्व अप्राप्य है। सूर्य-मन्दिर का प्राथमिक विवेचन साम्बपुराण में ही उपलब्ध होता है।[३] भविष्यपुराण तथा अन्य पुराणों में भी मन्दिर का वर्णन प्राप्त होता है।[४]

साम्बपुराण में मन्दिर-निर्माण-विधि, स्थापना तथा महत्व आदि पर सम्यक्-रूपेण विचार किया गया है। विधिवत भूमि-परीक्षा करके मन्दिर बनवाना उत्तम होता है।[५] सुगन्धित, नरम और चिकनी भूमि उपयुक्त होती है। कंकड़, भूसी, बाल, हड्डी तथा अंगार से युक्त भूमि मन्दिर के लिए अनुपयुक्त प्रतिपादित की गयी है।[६] मेघ और दुन्दुभि के समान स्वर उत्पन्न करने वाली, समस्त बीजों

---

१. ब्राउन, पर्सी, इण्डियन आर्किटेक्चर, पृ० १

२. श्रीवास्तव, वी० सी०, सन वरशिप इन ऐन्शियन्ट इण्डिया, पृ० ३२२

३. साम्बपुराण, ४।२,

आद्यस्थानमिदंभानोः पश्चात्सांबेननिर्मितम्।
विस्तरेणास्यचाद्यत्वं कथ्यमान निबोधमें॥

४. हाजरा, आर० सी०, स्टडीज, भाग १, पृ० ४०

५. साम्बपुराण, २९।७,

आदौभूमिं परीक्ष्य कुर्याद्देवगृहं ततः।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



को उगाने वाली तथा शुक्ल, रक्त, पीत एवं कृष्णवर्णीय भूमि सर्वथा फलप्रदा होती है।[७] साम्बपुराण में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र के लिए अलग-अलग मन्दिरों का विधान प्रतिपादित है।[८] एवंविध भूमियों के बीच में मन्दिर बनवाना चाहिए। चारों ओर चार हाथ लीपकर उसके ठीक मध्य में एक हाथ दस अंगुल नीचे खोदकर गड्ढा बना लेना चाहिए।[९] गड्ढे में डालने से यदि वह भर जाय तो वह भूमि सामान्य गुण की कही जाती है। यदि उतनी मृत्तिका से वह गर्त न भरे तो वह भूमि तीन गुण वाली होती है। खनित मृत्तिका गर्त में डालने से अवशिष्ट रहे तो वह भूमि कल्याणकारिणी होती है।[१०] मन्दिर की नींव सूर्याभिमुख होकर स्थापित करना भी शुभकर होता है।[११] मन्दिर के दायीं ओर सूर्य का स्नानगृह तथा उत्तर में कल्याणकारी अग्निहोत्र स्थित होना चाहिए एवं उत्तर में ही बढ़कर माताओं का स्थान होना उपयुक्त बताया गया है।[१२] पश्चिम की ओर

६. वही, २६।८,

इष्टगन्धरसोपेतास्निग्धा भूमिः प्रशस्यते।
शर्करा तुष केशास्थि क्षारागारं विवर्जिता॥

७. वही, २९।९,

मेघदुन्दुभिनिर्घोषा सर्वं बीज प्ररोहिणी।
शुक्ला रक्ता तथा पीता कृष्णाभाव हिताक्षितिः॥

८. वही, २६।१०,

द्विजराजन्यवैश्यानां शूद्राणां च यथाक्रमम्।

९. वही, २६।११,

उपलिप्य चतुर्हस्तं चतुस्त्रसमन्ततः।
हस्तमात्र मधः खात्वा मध्ये तस्य दशाङ्गुलम्॥

१०. वही, २६।१२,

गर्त्तमुत्कीर्त्तयेंतवै पांसुनापरिपूरयेत्।
समेसमगुणाज्ञेया हीनेहीनगुणा भवेत्॥
वर्द्धमाने तु भूमौ सोमवेवृद्धिकरीक्षितः।

११. वही, २९।१३,

नित्यंप्राङ्गमुखमर्कस्य कदाचित्पश्चिमामुखम्।

१२. वही, २६।१४,

भवाद्दक्षिणे पार्श्वे रवेः स्नान गृहंस्मृतम्।
अग्निहोत्र गृहं कार्यं रवेदत्तरतः शुभम्॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



ब्रह्मा तथा उत्तर में विष्णु की स्थापना करनी चाहिए। सूर्य के दाहिनी ओर निक्षुभा और बायीं ओर राज्ञी को होना चाहिए।[१३] सूर्य-परिवार के अन्य सदस्य तथा अनुचर भी उपस्थित हों जिनका विवेचन मूर्ति-उपासना प्रसङ्ग में किया जा चुका है।

शास्त्र समर्थित कर्मकाण्ड से मूर्ति की प्राण-प्रतिष्ठा करके उसे देव मन्दिर से ईशान दिग्भाग में विन्यस्त करना चाहिए।[१४] मन्दिर में ध्वजा का होना महत्वपूर्ण प्रतिपादित किया गया है।[१५] ध्वजवंश प्रमाण की दृष्टि से मन्दिर के बराबर ऊँचा होना चाहिए। पताका का बाँस वही बनाना चाहिए जो विवा न हो, सीधा तथा चिह्न रहित हो।[१६] ध्वजा के बाँस से लटकती हुयी पताका ध्वज से प्रयुक्त करनी चाहिए। मन्दिर के शिखर से तीन भाग ऊँची, उचित वस्त्र वाली घन्टायुक्त तथा मनोहर होनी चाहिए।[१७] ध्वजाग्र भाग में देव के लिङ्ग की सूचना देने वाले उसके वाहन की आकृति स्वर्ण, रजत अथवा मणिरत्नों से अलंकृत होना चाहिए।[१८] विष्णु के ध्वजा पर गरुड़ का चिह्न, ब्रह्म की ध्वजा पर कमल

---

१३. वही, २९।१६,

ब्रह्मापश्चिमतः स्थाप्येविष्णुरुत्तरतस्तथा।
निक्षुभा दक्षिणे पार्श्वे रवे राज्ञी तु वामतः॥

१४. वही, ३२।१,

अतोधिवासनं कार्यविधि दृष्टेन कर्मणा।

३२।१०, देवागारातथैशानेदिग्भागोदित्य संज्ञिते।

१५. वही, ३३।२,

कृतान्यु परिचिह्नानिवाहनानि शुभानि तु।

१६. वही, ३३।३,

कीर्तितस्य च तस्येह प्रमाणांगदतः श्रुणुः।
ध्वजवंशस्तु कर्तव्योह्य विद्धऋजुर व्रणः॥

१७. वही, ३३।४-५,

पताका च ध्वजे कार्या ध्वजवंशे विलिम्बनी।
देवागारस्य शिखरविभागमय मार्जनी॥
युक्त वस्त्रमयी चित्रा संघटा सुमनोहरा॥

१८. वही, ३३।६,

ध्वजाग्रेचापि कर्तव्यो देवतालिङ्गसूचकः।
काञ्चनोवाथरौप्यो वा मणि रत्नमयोपिवा॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



का चिह्न, शङ्कर की ध्वजा पर बैल का चिह्न, ब्रह्मा की ध्वजा पर कमल का, सूर्य की ध्वजा पर व्योम, वरुण की ध्वजा पर हंस, कुबेर की ध्वजा पर मनुष्य, कार्तिकेय की ध्वजा पर मयूर, हेरम्ब की ध्वजा पर चूहा, इन्द्र की ध्वजा पर हाथी, यमराज की ध्वजा पर महिष, दुर्गा की ध्वजा पर सिंह का उल्लेख प्राप्त होता है, जो जिसका वाहन है उसी को उसका ध्वजा निरूपित किया गया है।[१९] तदनन्तर सविधि समस्त औषधियों से ध्वज को स्नान कराकर मध्य में मङ्गलसूत्र बांधना चाहिए।[२०] पवित्र वेदी बनाकर मङ्गल कलशों से विराजित वहीं ध्वजा को चढ़ाकर उस रात्रि में शयन करना चाहिए।[२१] नाना प्रकार के पुष्पों और रंग-बिरंगी मालाओं को ध्वजा में लटका देना चाहिए तथा सविधि पूजा करके ध्वजा को धूपादि से निवेदित करना चाहिए।[२२] लोक पालों को उद्दिष्ट करके वाद्यों की उर्ध्वमान ध्वनि से युक्त जय-जयकार शब्दों से संकुल ऐसे शुभ

---

१९. वही, ३३।७,

गरुत्मांस्तु ध्वजे विष्णोरीश्वरस्य ध्वजे वृषः।
ब्रह्मणः पङ्कजकार्यंखेव्योंमस्मृतोध्वजे ॥

३३।८, हंसो जलधिपस्योक्तोधनदस्यनरोध्वजे।

३३।९, मयूरः कार्तिकेयस्य हेरम्बस्य च मूषकः।
कुंजरोदेवराजस्य यमस्य महिषोध्वजे ॥

३३।१०, सिंहो ध्वजे तु दुर्गायां इत्येषा ध्वजकल्पना।
यस्य यो वाहनः प्रोक्तोध्वजस्तस्य स एवतु ॥

२०. वही, ३३।११,

ततः सर्वौषधीभिस्तुस्नापयित्वाप्रयत्नतः।
समालभ्य च बध्नीयान्मध्येप्रतिसरन्ततः ॥

२१. वही, ३३।१२,

कल्पयित्वा शुभांवेदीं कलशैस्यशोभिताम्।
तस्या वेद्यां समारोप्यतां रात्रिमधिवासयेत् ॥

२२. वही, ३३।१३,

नाना कुसुमचित्रश्चस्त्रजतस्यां च लम्बयेत्।
अभ्यर्च्य वै प्रयत्नेन धूपमस्यनिवेदनम् ॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



लग्न, दिन और नक्षत्र में मन्दिर पर ध्वजा चढ़ाना चाहिए।[२३] इस प्रकार देव मन्दिर के ऊपर ध्वज चढ़ाने वाला व्यक्ति लक्ष्मी की कृपा से बढ़ता है तथा श्रेष्ठ गति प्राप्त करता है।[२४] ध्वजहीन मन्दिर में देवता कोई भी वस्तु ग्रहण नहीं करते।[२५] सूर्य-मन्दिर बनवाने वाला व्यक्ति महान् पुण्य को प्राप्त होता है तथा सूर्य-लोक में सम्मान प्राप्त करता है।[२६] उसकी कीर्ति विशाल होती है, दिव्य इच्छाओं को पूर्ण करता है तथा पृथ्वी में चक्रवर्ती होता है।[२७] जो मनुष्य देवों की मूर्ति के लिए मन्दिर बनवाते हैं, मर जाने के बाद भी उनका कीर्तिमय शरीर इस संसार में पर्यटन करता रहता है।[२८]

साम्बपुराण में सूर्य-पूजा के प्राथमिक मन्दिर का उल्लेख 'साम्बनगर' के रूप में आता है।[२९] इसे अन्य अभिधान मूलस्थान, मित्रवन, कश्यपपुर, हंसपुर,

---

२३. वही, ३३।१५,
उद्दिश्यलोकपालेभ्यो वलिं दद्या तु वायेव।
३३।१६, वादित्र कृत निर्घोषं जयशब्देन संकुलम्॥
शुभलग्नेदिने ऋक्षे ध्वजमारोपयेद्बुधः॥

२४. वही, ३३।१७,
एवमारोपयेद्यस्तु ध्वजं देवालयोपरि।
श्रिया संवर्धते नित्यं प्राप्नोति च शुभां गतिम्॥

२५. वही, ३३।१८,
न सुरावस्तुमिच्छन्ति ध्वजहीनेसुरालये।

२६. वही, ३२।५४,
यावत्कीर्तिः पुण्य कृतो भानोः स्थान निवेशनात्।
तावत्सतु यदुश्रेष्ठ सूर्य लोक महीयते॥

२७. वही, ३२।५९,
यः प्रासादं रचयतिपुमान्देवतानां प्रयत्नात्।
कीर्तितस्य भवति विपुला वंशमार्गानुजाता॥

२८. वही, ३२।६१,
तेषां मृतेप्य परमार्थमये शरीरे लोकेपार भ्रमति कीर्तिमयं शरीरं।

२९. वही, ३।२,
चन्द्रभागा तटे रम्ये पुरं यत्साम्बसंज्ञितम्।
भूर्लोकेशाश्वतं स्थानं तत्र सूर्यस्य नित्यता॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



भगपुर, साम्बपुर, प्रह्लादपुर तथा आद्यस्थान भी उपलब्ध हैं।[३०] यहाँ पर साम्ब ने भगवान् सूर्य की मूर्ति लाकर प्रतिष्ठित किया था।[३१] इसी कारण इसे साम्बनगर सज्ञा भी प्राप्त है। इस स्थल का समीकरण साधारणतः चन्द्रभागा नदी के तट पर स्थित मुल्तान से किया जाता है।[३२] इस सुविख्यात मन्दिर का दर्शन चीनी यात्री ह्वेनसांग ने सातवीं शती ई० में किया था। इस मन्दिर का वर्णन अबुजैद, अलमसूदी, अल इस्तखारी, अल इद्रीसी और अल्बरूनी ने भी किया है।[३३] उनके उल्लेख से यह भी विदित होता है कि मुल्तान में एक से अधिक सूर्य-मन्दिर थे। प्रतीत होता है कि यह मन्दिर शक-कुषाण काल (द्वितीय शताब्दी ई० पू०—द्वितीय शताब्दी ई०) में बना रहा होगा।[३४] बहरहाल इसकी तिथि का स्पष्ट बोध कराने वाला कोई भी पुरातत्त्वीय प्रमाण नहीं मिला है। ह्वेनसांग के समय यह मन्दिर सौरोपासना का महान् केन्द्र था।[३५] देश के सभी भागों से सूर्य-पूजक भगवान् सूर्यदेव को अपनी श्रद्धा अर्पित करने आते थे। मन्दिर की विशालता तथा भव्यात्मकता का वर्णन ह्वेनसाँग ने बड़े विस्तार से किया है।[३६]

---

३०. श्रीवास्तव, वी० सी०, पूर्वोद्धृत, पृ० २६७.

३१. साम्बपुराण, २६।४,

तस्मिन्नवनोद्देशेस्थापयित्वाविधानतः।

३२. स्टेटनक्रान, एच० वान, इण्डिश सोनिनप्रीस्टेर साम्ब एण्ड देई शाकद्वीपीय ब्राह्मण, सारांश, पृ० २७९-८०, स्टेटनक्रान महोदय की धारणा है कि प्राचीन काल में चन्द्रभागा मुल्तान से लगभग ३५ मील दूर प्रवाहित होती थी। मुल्तान चन्द्रभागा की सहायक नदी रावी पर स्थित था।

३३. इलियट एण्ड डाउसन, हिस्ट्री आफ इण्डिया ऐज टोल्ड बाई इट्स ओन हिस्टोरियन्स, भाग १, पृ० १८-७३।

३४. श्रीवास्तव, वी० सी० पूर्वोद्धृत, पृ० ३२३

३५. बील० ए०, बुद्धिस्ट रिकार्ड आफ वेस्टर्न कन्ट्रीज, भाग २, पृ० २७४; भगवान् सूर्य की श्रद्धाभिव्यक्ति में एक भव्य मन्दिर बनाया गया जो अनेक अलंकरणों से सुन्दर बन पड़ा है।

३६. पाण्डेय, एल० पी०, सन-वरशिप इन ऐन्शियन्ट इण्डिया, पृ० २५२

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



सूर्य-पूजा का द्वितीय मन्दिर कालप्रिय बताया जाता है जिसका समीकरण यमुना के दक्षिणी किनारे पर स्थित काल्पी से किया जाता है।[३७] कालप्रिय मन्दिर तथा कालप्रियनाथ जहाँ भवभूति के तीनों नाटक खेले गए थे, दोनों के तादात्म्य पर विशेष विवाद है।[३८] अन्य विद्वान् कालप्रिय का तादात्म्य उज्जयिनी के महाकाल से स्थापित करते हैं।[३९]

सूर्य-पूजा के तृतीय मन्दिर को शुतीर, मुन्डीर, उदयाचल, सूर्य-कानन, रविक्षेत्र और मित्रवन की संज्ञा से अभिहित किया जाता है।[४०] ब्रह्मपुराण इस मन्दिर को उत्कल में स्थित कोणादित्य या कोणार्क से समीकृत करता है।[४१] सामान्यतया इसका समीकरण उड़ीसा में पुरी जिले में स्थित आधुनिक कोणार्क के साथ किया जाता है।[४२] काणे महोदय मुन्डीर का समीकरण उत्तरी गुजरात में स्थित मोढेरा से करते हैं। किन्तु साम्ब पुराण के अन्तःसाक्ष्य के अनुसार इसका वास्तविक समीकरण कोणार्क ही प्रतीत होता है। साम्बपुराण में उल्लेख आता है कि समुद्र के किनारे सूर्य-पूजा के पवित्र स्थल मुन्डीर में सूर्य का ध्यान करने वालों ने उनकी प्रतिमा स्थापित किया।[४३]

---

३७. मिराशी, वी० वी०, थ्रीऐन्शियन्ट फेमस टेम्पिल्स आफ द सन 'पुराणम्', भाग ८, संख्या १, पृ० ४२

३८. मिराशी, वी० वी०, आइडेन्टीफिकेशन आफ कालप्रिय, स्टडीज इन इन्डोलाजी, भाग १, पृ० ३३; अल्टेकर, ए० एस०; राष्ट्रकूट एण्ड दियर टाइम्स, पृ० १०२

३९. काणे, पी० वी०, (सं०) उत्तररामचरित (चतुर्थ सं०) (परिचय), त्रिपुरारी ए०, कमेन्टेटर आफ भवभूतीज मालतीमाधव, भण्डारकर, डी० आर०, भाग ८, पृ० ३०

४०. साम्बपुराण, ४२।१,

कृत्वादेवगृहंसाम्बह्यानयित्वातु याजकान्।
आजगामाथधर्मात्मायत सन्निहितो रविः॥

४२।२, एते मित्र वनं श्रुत्वा देव मानुष पन्नगाः।

४१. हाजरा, स्टडीज, भाग १, पृ० १०६

४२. हाजरा, वही, पृ० १४६, मिराशी, वी० वी०, पूर्वोद्धृत, ४१

४३. साम्बपुराण, ४३।१,

तस्मिस्तपोदेशेतीरेतुलवणोदधेः।
तिष्ठन्ति ये च संप्राप्तादेवदर्शनकांक्षिणः॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



कोणार्क के सूर्य-मन्दिर की स्थापना का श्रेय साम्बपुराण, साम्ब को देता है।[४४] कोणार्क सूर्य-पूजा का स्मरण कराने वाला भव्यतम मन्दिर है।[४५] इस मन्दिर की कला समीक्षकों ने भूरि-भूरि प्रशंसा की है। इसे मध्यकालीन भारतीय कलाकृतियों में अत्यन्त मनोहारी बताया गया है।[४६] विभिन्न प्रकार के आकर्षक उपादानों से यह मन्दिर निस्सन्देह सुन्दर बन पड़ा है।

इतिहासविद् पूर्वी गंग राजवंशीय नरसिंह प्रथम को इस मन्दिर के निर्माण का श्रेय देते हैं। सामान्यतः यह विश्वास किया जाता है कि इस मन्दिर का निर्माण तेरहवीं शताब्दी ई० में हुआ था।[४७] साम्बपुराण के उत्तरकालीन अध्यायों में जिसकी तिथि १२५०–१५०० ई० निर्धारित की जाती है, इस मन्दिर का उल्लेख आता है। इससे स्पष्ट होता है कि मग-प्रभाव में यह मन्दिर सुनिश्चित-रूपेण तेरहवीं शताब्दी ई० के पूर्व न बना होगा।[४८] मित्र महोदय ने सुझाव प्रस्तुत किया है कि यह मन्दिर प्राचीन काल से ही सूर्य-पूजा का प्रमुख केन्द्र रहा है और इसका निर्माण पुरानी परम्परा पर हुआ है।[४९]

खुर्द राजवंश (१६०७-१६२१ ई०)[५०] के राजा पुरुषोत्तम दास ने १६१० ई० के लगभग तीन बड़े मन्दिरों, भुवनेश्वर, जगन्नाथ तथा पद्मकेश्वर (कोणार्क) का निर्माण करवाया था। पद्मकेश्वर की पाण्डुलिपियों में भी इन मन्दिरों का उल्लेख प्राप्त होता है। दूसरी पाण्डुलिपि जो संस्कृत में है, महागायत्री मन्दिर का उल्लेख करती है। यह सूर्य-मन्दिर के दक्षिण-पश्चिम में स्थित है। मन्दिर के चारों

---

४४. साम्बपुराण, अध्याय ४२-४३; द्रष्टव्य—हाजरा, पूर्वोद्धृत, पृ० १०५, १०८

४५. हन्टर, डब्ल्लू० डब्ल्लू०, ए० हिस्ट्री आफ उड़ीसा, भाग १, पृ० १२६

४६. कुमार स्वामी०, ए० के०, फोर डेज इन उड़ीसा, माडर्न रिव्यू, अप्रैल, १९११, पृ० ३४५–५०।

४७. स्टर्लिङ्ग ए०, ऐन एकाउन्ट स्टेटिस्टिकल एण्ड हिस्टारिकल आफ उड़ीसा प्रापर, कोणार्क, १८२५, पृ० १६४–७६

४८. मित्र, आर० एल० एन्टीक्यूटीज आफ उड़ीसा, भाग २, पृ० १५६

४९. श्रीवास्तव, वी० सी०, पूर्वोद्धृत, पृ० ३१३

५०. बोनर, एलिस एण्ड शर्मा, सदाशिवनाथ, न्यू लाइट ऑन द सन टेम्पिल्स आफ कोणार्क, पृ० ४०

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

और नवग्रह तथा द्वादशादित्यों की मूर्तियाँ प्रतिष्ठित हैं।[51] साम्ब पुराण में प्रतिपादित मन्दिर के लक्षणों से यह कुछ साम्य रखता है।

प्राचीन तथा पूर्व मध्यकालीन भारत में अनेक सूर्य-मन्दिरों का निर्माण हुआ था किन्तु साम्ब पुरांण में उपर्युक्त विवेचित मन्दिरों का ही उल्लेख प्राप्त होता है। ऐसा प्रतीत होता है कि साम्बपुराण के संरचना काल में इन्हीं मन्दिरों की विशेष महता एवं प्रतिष्ठा थी।

लगभग तेरहवीं शताब्दी ई० के अन्त में सौरधर्म ह्रासोन्मुख* होने लगा। इस धर्म के पतन के कतिपय मूलभूत कारण प्रतीत होते हैं। एकान्तिक उपासना लोकप्रिय होने लगी थी। इस्लाम धर्म की प्रतिद्वन्द्विता का सामना करने के लिए एकान्तिक उपासना तत्कालीन धार्मिक प्रवृत्तियों के परिवेश में अत्यावश्यक हो गयी थी। अतः अनेक सूर्य-मन्दिर ध्वस्त कर दिए गए तथा कुछ को अन्य देवगृहों में परिणत कर दिया गया। विष्णु, शिव तथा शक्ति की लोकप्रियता में वृद्धि हो रही थी। सौरधर्म पूर्णतः शैवमत में विलीन हो गया था। इसीलिए सौरपुराण में मुख्यतः शैव दर्शन का विशद विवेचन प्राप्त होता है। पुनश्च सौरधर्म अत्यधिक नीतिपरक हो गया था। तन्त्रोपासना के विशेष प्रभाव के कारण सौरधर्म की निजी अस्मिता लुप्त हो रही थी। तथापि यह धर्म प्रक्षीण नहीं हुआ। सूर्य मूर्तियों तथा मन्दिरों का निर्माण बाद की शताब्दियों में भी होता रहा तथा कुछ शासकों ने सौरधर्म को राजकीय संरक्षण भी प्रदान किया था। इसीलिए भारत में यह आज भी एक महत्वपूर्ण धर्म के रूप में जीवित है।

---

५१. बोनर, एलिस एण्ड शर्मा, सदाशिवनाथ, वही, पृ० ४१-४२

* डा० एच० डी० सांकलिया ने प्रोफेसर वी० सी० श्रीवास्तव के शोध-प्रबन्ध 'सन-वरशिप इन ऐन्शियन्ट इण्डिया' की समालोचना करते हुए यह मत ( टाइम्स आफ इण्डिया, दिनांक २८-६-७३ को ) व्यक्त किया था कि उक्त प्रबन्ध में सौरधर्म के ह्रासोन्मुख कारणों की समीक्षा का अभाव है। अतः यहाँ पर सौरधर्म के प्रक्षीणोन्मुख कारणों का विश्लेषण प्रस्तुत किया जा रहा है।

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS

# उपसंहार

साम्ब पुराण में मग-परम्परा से प्रभावित सौर धर्म का विवेचन किया गया है। आदि काल में सूर्य की उपासना विविध प्रतीकों के माध्यम से होती थी। ऋग्वैदिक भारत में सूर्य के नैसर्गिक रूप की पूजा होती थी। वेदोत्तर काल में सौरार्चन का विकसित रूप समुपलब्ध होता है। आर्य-अनार्य परम्परा के पारस्परिक आदान-प्रदान के परिणामस्वरूप एक सौर सम्प्रदाय का उद्भव हुआ जिसका प्राथमिक विवेचन महाभारत में प्राप्त होता है। इस काल में भगवान् सूर्य के मानवीकरण का सकेत प्राप्त होता है। महाभारत में सूर्य अनेक स्थलों पर मानव के रूप में दृश्यमान हैं। छठीं शताब्दी ई० पू० से द्वितीय शताब्दी ई० पू० के अन्तर्वर्ती काल में सौरधर्म का सामाजिक क्षेत्र पर्याप्त विकसित हो चुका था। शाकद्वीपीय मग पुरोहितों के प्रभाव में भारतवर्ष में सूर्य की मूर्ति-पूजा प्रारम्भ हुयी थी। मगों की परम्पराओं का राष्ट्रीयकरण हो गया था। सौर धर्म को राजकीय प्रश्रय भी प्राप्त हो गया था। थानेश्वर का वर्द्धन राजवंश सूर्योपासक था। परवर्त्ती राजवंशों ने भी इस धर्म को संरक्षण प्रदान किया था। भारतीय धर्म की समन्वयशील प्रवृत्ति ने राष्ट्रीय एव विदेशी दोनों ही परम्पराओं को समन्वित करने का प्रयास किया था। साम्ब पुराण में निरूपित सौरधर्म एवंविध समन्वयशील प्रवृत्ति का ही परिणाम था।

सौरार्चन द्वारा कुष्ठ रोग से निवृत्ति की परम्परा भारत में पहले से ही विद्यमान थी। वैदिक एवं पौराणिक परम्पराओं में सूर्य को रोग नाशक कहा गया है। उग्रदेव ने कुष्ठरोग से निवृत्ति-हेतु इक्कीस दिन का सूर्यानुष्ठान किया था। मयूर ने भी इसी रोग के शमनार्थ सूर्यशतक का प्रणयन किया था। इन सब कारकों से समवेत रूप में सूर्य की उर्जस्विता में निरन्तर वृद्धि हो रही थी।

साम्ब पुराण के अन्तः साक्ष्य तथा बहिःसाक्ष्य प्रमाणों के आधार पर निर्धारित की गयी कालावधि साम्ब पुराण के काल-निर्णय-क्रम में नवीन तथ्य पर प्रकाश डालती है। साम्बपुराण का काल विद्वानों द्वारा निर्णीत काल—५०० ई० से एक शताब्दी पश्चात् अर्थात् ६०० ई० स्थापित होता है। उपरितम समय ८०० ई० तक सुस्थिर होता है। इस प्रकार पूर्ववर्त्ती मूल भाग की रचना-तिथि ६००—

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



८०० के सन्धिबोधक स्तर पर निश्चित होती है। परवर्त्ती अध्यायों की तिथि ६०० ई०, ६००–१०५० ई० तथा १२५०–१५०० ई० की ईकाइयों में विभाजित होती हुयी अन्ततः १५०० ई० तक स्थिर होती है।

साम्ब पुराण में उल्लिखित सामाजिक परम्पराएँ वैदिक मान्यताओं का ही स्मरण कराती हैं। आश्रम-व्यवस्था महत्वपूर्ण मानी जाती थी। समाज में चातुर्वर्ण्य धारणा व्याप्त थी। पंचम वर्ण की धारणा भी प्रचलित थी। ब्राह्मण अपनी तपः शक्ति तथा बौद्धिक उपलब्धियों के कारण विशेष सम्मान्य थे। मग पुरोहितों को भी विशेष प्रतिष्ठा प्राप्त थी। सौर धर्म के प्रचार-प्रसार में उनका विशेष योगदान था। क्षत्रिणों को भी सम्मानास्पद स्थान प्राप्त था। उनका स्थान ब्राह्मणों पश्चात् आता था।

पूर्व-मध्यकाल में क्रान्तिकारी समाजार्थिक परिवर्तन हो रहे थे। अनेक जातियों का प्रादुर्भाव हो रहा था। जातियों में भी उपजातियाँ विकसित हो रही थीं। सामन्तवादी प्रवृत्ति के अभ्युदय के कारण वैश्यों का पतन हो रहा था। ब्राह्मण एवं क्षत्रियों के कृषि एवं वाणिज्य में प्रवृत्त होने के कारण भी वैश्यों की स्थिति ह्रासमान हो गयी थी। शूद्रों के उत्थान में धार्मिक कारक विशेष सहायक थे। तथापि वे सर्वतन्त्र स्वतन्त्र नहीं थे। जाति-बहुगुणन के कारण चरवाहा, कृषक (कुनबी), आभीर, भिल्ल, कुम्हार, सोनार तथा कोंच इत्यादि उप जातियों का प्रादुर्भाव हो गया था। स्त्रियों के साम्पत्तिक तथा धार्मिक अधिकार अभी सुरक्षित थे। पूर्व मध्यकाल में सामन्तोपसामन्तीकरण के कारण आर्थिक इकाइयों का आकार बहुत छोटा हो गया था। स्वर्ण-मुद्राओं के अभाव से ह्रासोन्मुखी अर्थ-व्यवस्था पर प्रकाश पढ़ता है।

सौरोपासना भारतीय जीवन की प्रमुखतम विशेषता थी। सौरार्चन सन्ध्या-वन्दन, गायत्री-जाप, अर्घ्य, आचमन, प्राणायाम, मार्जन, अघमर्षण तथा उपस्थान के द्वारा निष्पन्न होता था। स्वर्ण, रजत, ताम्र, मृत्तिका, शिल्प, वृक्ष तथा चित्र की निर्मित सप्तविध मूर्तियों द्वारा सूर्य-पूजा का विधान था। शास्त्र-समर्थित कर्मकाण्ड से मूर्ति की प्राण-प्रतिष्ठा की जाती थी। भगवान् सूर्य की स्थापना का एक वर्ष बीत जाने पर उनकी संवत्सरी पूजा की जाती थी। आदित्य-व्रत विशेष महत्वपूर्ण माने जाते थे।

सूर्यार्चन स्वयमेव सरलतम एवं सर्वजनग्राह्य था। तन्त्रोपासना ने उसें और भी विशद बना दिया था। सांख्य, योग, शैव तथा तन्त्र की परम्पराओं से सौर

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



धर्म की महत्ता में विशेष वृद्धि हुयी। पूर्व-मध्यकाल में सूर्य एवं शिव के मध्य पूर्ण एकात्मकता स्थापित हो गयी थी। सूर्य का ब्रह्म, विष्णु तथा बाद में शक्ति एवं गणेश के साथ भी तादात्म्य स्थापित हो गया था। मन्दिरों में पञ्चायतन पूजा का समावेश हो गया था।

तन्त्रोपासना से सौर धर्म पूर्णतः प्रभावित हो रहा था। तन्त्रोपासना में वर्ण, धर्म, लिङ्ग तथा अन्य प्रवृत्तियों का विचार किये बिना सभी सम्प्रदायों एवं वर्ग के लोगों को समान आचरण की स्वतन्त्रता उपलब्ध थी। इस प्रवृत्ति के कारण जन-सामान्य के न केवल धार्मिक प्रत्युत सामाजिक आवश्यकताओं की भी पूर्ति हो रही थी। तन्त्रोपासनान्तर्गत शूद्र तथा स्त्रियों को उपासना की स्वतन्त्रता प्राप्त थी। तन्त्र में विविध अनुष्ठानों तथा उपचारों के विधान प्रस्तावित थे। तान्त्रिक-चिकित्सक तथा ज्योतिषी के रूप में जन-सामान्य की सेवा करते थे। इस प्रकार तन्त्र-दर्शन समाज के अन्तरङ्ग जीवन में प्रविष्ट होकर सौर धर्म को लोकप्रिय बना रहा था।

सूर्य की मूर्ति-पूजा के प्रचार-प्रसार में बृहत्संहिता, साम्बपुराण, विष्णु-धर्मोत्तर, मत्स्य पुराण, अग्नि पुराण, विश्वकर्माशिल्प, अंशुमद्भेदागम, सुप्रभेदागम, विश्वकर्मशास्त्र, पूर्वकरणागम, रूपमण्डन, मानसोल्लास, पद्मपुराण, ब्रह्मपुराण, भविष्य पुराण, चतुर्वर्गचिन्तामणि तथा समराङ्गणसूत्रधार का विशिष्टतम योग-दान रहा। शुभलक्षणों से युक्त प्रतिमा मनुष्यों का कल्याण करने वाली मानी जाती थी। सूर्य की प्रतिमा-पूजा के साथ ही उनके परिवार तथा अनुचरों का भी महत्व बढ़ गया था। सूर्य के साथ निक्षुभा, राज्ञी, पिंगल, दण्डनायक, दोनों अश्विनीकुमार, कल्माष पक्षी, माठर तथा व्योमदेव आदि की भी उपासना की जाती थी। बाद में चलकर सूर्य की उपासना नर, विश्वात्मक, शम्भु, नमस्कार तथा महानसत्व आदि द्वादश जगन्नाथ के रूप में होने लगी।

पूर्व मध्यकाल की अनेक प्रतिमाएँ साम्ब पुराण के प्रतिमा लक्षण से साम्य रखती हैं। खजुराहो से प्राप्त चित्रगुप्त मन्दिर के केन्द्र में अवस्थित सूर्य-प्रतिमा विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इसमें सूर्य किरीट, मुकुट, कुण्डल, माला, यज्ञोपवीत और अव्यंग धारण किए हुए तथा उपानतयुक्त हैं। उनके सिर के चारों ओर मण्डल तथा दाएं और बाएं क्रमणः पिंगल तथा दण्ड हैं। निक्षुभा, राज्ञी, अश्विनी-कुमार, अरुण तथा महाश्वेता भी प्रदर्शित किए गए हैं। यह प्रतिमा साम्बपुराण में वर्णित सूर्य-प्रतिमा-लक्षण से पूर्ण साम्य रखती है। किंनिग (उड़ीसा) से प्राप्त

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



सूर्य-प्रतिमा भी पर्याप्त साम्य रखती है। मोढेर (गुजरात) के सूर्य-मन्दिर के दीवालों और कोष्ठकों से ११वी शताब्दी ई० की सूर्य-प्रतिमाएं प्राप्त हुयी हैं जो साम्बपुराण के प्रतिमा-लक्षण से साम्य रखती हैं।

भारतीय कलाकारों ने विदेशी तत्वों को त्याग कर राष्ट्रीय परम्परान्तर्गत ही सूर्य-मूर्तियों के निर्माण पर बल दिया। मग-परम्परा से समर्थित सौरोपासना को वे व्यापक एवं जनसम्मत बनाने के लिए यत्नशील थे।

साम्बपुराण में सूर्य-पूजा के प्रसिद्ध मन्दिरों (केन्द्रों) का उल्लेख आता है। सूर्य-पूजा का प्राथमिक मन्दिर साम्बनगर था। इसे अन्य अभिधान मूलस्थान, मित्रवन, कश्यपपुर, हंसपुर, भगपुर, प्रह्लादपुर तथा आद्यस्थान भी उपलब्ध हैं। यहाँ पर साम्ब ने भगवान् सूर्य की मूर्ति लाकर प्रतिष्ठित किया था। यह स्थल सामान्यत: चन्द्रभागा नदी के तट पर स्थित मुल्तान से समीकृत किया जाता है। सूर्य-पूजा का द्वितीय मन्दिर कालप्रिय था जो यमुना के दक्षिणी किनारे पर स्थित काल्पी से समीकृत किया जाता है। सौरार्चन के तृतीय मन्दिर को सुतीर, मुन्डीर, उदयाचल, सूर्यकानन, रविक्षेत्र और मित्रवन की संज्ञा से जाना जाता है। साम्बपुराण इसे कोणार्क में स्थित बताता है। प्राचीन तथा मध्ययुगीन भारत में अनेक सूर्य-मन्दिरों का निर्माण हुआ किन्तु प्रतीत होता है कि साम्बपुराण के रचना-काल में विवेचित मन्दिर ही विशेष महत्वपूर्ण थे।

लगभग तेरहवीं शताब्दी ई० के अन्त में सौरधर्म पतनोन्मुख होने लगा। एकान्तिक उपासना लोकप्रिय होने लगी। तत्कालीन धार्मिक परिस्थितियों में एकान्तिक उपासना नितान्त आवश्यक भी हो गयी थी। अनेक सूर्य-मन्दिर नष्ट कर दिए गए। विष्णु, शिव तथा शक्ति की लोकप्रियता के कारण भी सौरधर्म क्षीणोन्मुख हो रहा था। सौरधर्म अत्यधिक आचारपरक हो गया था। तन्त्र-मन्त्र के प्रचार-प्रसार से भी सौरधर्म का वास्तविक रूप लुप्त हो रहा था। तथापि यह धर्म पूर्णत: क्षीण नहीं हुआ। सूर्य-मूर्तियों तथा मन्दिरों का निर्माण बाद में भी होता रहा। कुछ शासकों ने सौरधर्म को राजकीय संरक्षण भी प्रदान किया था। अत: यह धर्म अद्यापि भारत-भूमि में लोगों की आस्था का केन्द्र बना हुआ है।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS

# सहायक ग्रन्थ-सूची

## मौलिक स्त्रोत

## वैदिक साहित्य

### संहिता एवं ब्राह्मण ग्रन्थ


| | |
|---|---|
| ऋग्वेद संहिता | वैदिक संशोधन मण्डल, वैदिक रिसर्च इन्स्टीट्यूट पूना, १९४६; एच० एच० विल्सन द्वारा अंग्रेजी में अनूदित, लन्दन, १८५०–७<br>वी० एस० सातवलेकर, सूरत, १९५७ |
| अथर्ववेद | ह्विटनी द्वारा अंग्रेजी में अनूदित, मोतीलाल बनारसीदास, १९६२ |
| यजुः संहिता | ग्रिफिथ द्वारा अंग्रेजी में अनूदित, १९५७ |
| सामवेद | वी० एस० सातवलेकर, सूरत, १९५८ |
| ऐतरेय ब्राह्मण | ए० बी० कीथ द्वारा अनूदित, कैम्ब्रिज, १९२० |
| कौषीतकि ब्राह्मण | सम्पादित, ई० डब्लू० कावेल, कलकत्ता, १८६१<br>अनूदित, ए० बी० कीथ, कैम्ब्रिज, १९२० |
| तैत्तिरीय ब्राह्मण | अनूदित, एच० एच० आप्टे, पूना, १८९८ |
| पंचविंश ब्राह्मण | सम्पादित, वेदान्त वागीश, कलकत्ता, १९६९-७४ |
| शतपथ ब्राह्मण | सेक्रेड बुक आफ द ईस्ट, भाग १२; २६, ४१, ४३, ४६, आक्सफोर्ड, १८८२-१९०० |
| सामविधान ब्राह्मण | ए० सी० बर्नेल, मंगलोर, १८७७ |
| ऐतरेय आरण्यक | अनूदित, ए० बी० कीथ, आक्सफोर्ड, १९०९ |


CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



## उपनिषद् साहित्य

ईशावास्योपनिषद् — गीता प्रेस, गोरखपुर, १९४६

ऐतरेय उपनिषद् — गीता प्रेस, गोरखपुर, १९६१

कठोपनिषद् — गोरखपुर, १९६२

छान्दोग्य उपनिषद् — गोरखपुर, १९६२

द उपनिषदाज — सम्पादित, मैक्समूलर, सेक्रेड बुक आफ द ईस्ट, भाग १ तथा १५

बृहदारण्यक उपनिषद् — गोरखपुर, १९६८

माण्डूक्य उपनिषद् — गोरखपुर, १९६७

## सूत्र साहित्य

आपस्तम्ब-गृह्यसूत्र — अनूदित, ओल्डन बर्ग, सेक्रेड बुक आफ द ईस्ट, भाग ३०

आपस्तम्ब धर्मसूत्र — सम्पादित, जी० बूलर ( बाम्बे संस्कृत सिरीज ) १८९२, १८९४

आपस्तम्ब श्रौतसूत्र — सम्पादित, गार्बे, कलकत्ता, १८८२-१९०२

आश्वलायन गृह्यसूत्र — सम्पादित, ए० जी० स्टेनजलर, लेपजिग, १८६४

कात्यायन श्रौतसूत्र — सम्पादित, विद्याधर शर्मा, बनारस, १९३३-७

काठक गृह्यसूत्र — सम्पादित, डब्लू० कलन्ड, लाहौर, १९२५

खादिर गृह्यसूत्र — सम्पादित, ए० महादेव शास्त्री तथा एल० निवासाचार्य, मैसूर, १९१३

गोभिल गृह्यसूत्र — अनूदित, एच० ओल्डनबर्ग, सेक्रेड बुक आफ द ईस्ट, भाग ३०

गौतम धर्मसूत्र — आनन्दाश्रम संस्कृत सिरीज, अनूदित, सेक्रेड बुक आफ द ईस्ट, भाग २

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



| | |
|---|---|
| पराशर गृह्यसूत्र | सम्पादित, गोपाल शास्त्री नेन; बनारस, १९२६ |
| बौधायन धर्मसूत्र | सम्पादित, ई० हुल्श, लेपजिग, १८८४ |
| बौधायन गृह्यसूत्र | सम्पादित, आर० शास्त्री, मैसूर, १९२० |
| बौधायन श्रौतसूत्र | सम्पादित, डब्लू० कलन्ड, कलकत्ता, १९०४-२३ |
| भारद्वाज गृह्यसूत्र | सम्पादित, हेनरिट जे० डब्लू सोलमन्स, लीडेन, १९१३ |
| मानव गृह्यसूत्र | सम्पादित, रामकृष्ण हर्ष जी शास्त्री, गायकवाड़ ओरियन्टल सिरीज, बड़ौदा, १९२६ |
| वशिष्ठ धर्मसूत्र | सम्पादित, ए० ए० फ्यूहरर, बाम्बे, १९१६ |
| सांखायन श्रौतसूत्र | सम्पादित, वरादत्त सूत आनर्त्तृत्य और गोविन्द, ए हिलब्रैन्ड, कलकत्ता, १८८६-९ |
| हिरण्यकेशिन गृह्यसूत्र | अनूदित, एच० ओल्डनबर्ग, सेक्रेड बुक आफ द ईस्ट, भाग ३० |
| | सम्पादित, जे० क्रिस्ते, वियना, १८८९ |

## स्मृति-साहित्य

| | |
|---|---|
| मनुस्मृति | सम्पादित, गङ्गानाथ झा एशियाटिक सोसायटी वंगाल, कलकत्ता, १९३४; सम्पादित, बी० एन० माण्डलिक, बाम्बे, १८८६ |
| याज्ञवल्क्य स्मृति | सम्पादित, एन० शास्त्री, चौखम्बा संस्कृत सिरीज, बनारस, १९०८ |
| | अनूदित, जे० आर० घरपूरे, बाम्बे, १९३६ |
| पराशर स्मृति | माधवाचार्य के भाष्य के सहित, सम्पादित, वामन शास्त्री, बाम्बे, संस्कृत सिरीज, १८९३-१९११ |

## महाकाव्य

| | |
|---|---|
| महाभारत | ( बाम्बे संस्करण ) सम्पादित, आर० किन्जावाडेकर, पूना, १९२९-३३; भण्डारकर |



CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



| | | |
|---|---|---|
| | | ओरियन्टल रिसर्च इन्स्टीच्यूट, पूना, १९२७-१९६६, अंग्रेजी में अनूदित, एम० एन० दत्त, कलकत्ता, १८९५-१९०५ |
| | | अनूदित गीता प्रेस, गोरखपुर, १९६८ |
| रामायण | | सम्पादित तथा अनूदित, राफ० टी० एच०, बनारस, १८६५, सम्पादित, जी गौरेसियो, १८४३-६७ |
| | | अनूदित, गीता प्रेस, गोरखपुर, १९६७, बाम्बे संस्करण |

## काव्य एवं नाट्य साहित्य

| | | |
|---|---|---|
| ऋतुसंहार | कालिदास | सम्पादित, एन० एस० पी०, छठाँ संस्करण, बाम्बे, १६२२. अंग्रेजी में अनूदित, लन्दन, १९२९ |
| उत्तररामचरित | भवभूति | सम्पादित, पी० वी० काणे, अनूदित, सी० एन० जोशी, दिल्ली, १६७१ |
| कुमारसंभव | कालिदास | आर० टी० एच० ग्रिफिथ, लन्दन, १८७६ |
| प्रबोध चन्द्रोदय | कृष्ण मिश्र | एल० पन्सीकर, निर्णय सागर प्रेस, बाम्बे। |
| मालती माधव | भवभूति | आर० जी० भण्डारकर, बाम्बे, १८७६ |
| रघुवंश | कालिदास | सम्पादित तथा अनूदित, जी० आर० नन्दर्गीकर, बाम्बे, १८६७ |
| विक्रमोर्वशीयम् | कालिदास | सम्पादित, एस० पी० पण्डित, बाम्बे, १६०१ |
| सूर्यशतक | मयूर | सम्पादित एवं अनूदित, आर० एन० त्रिपाठी, चौखम्बा विद्या भवन, वाराणसी, १६६४ |

## पुराण साहित्य

| | |
|---|---|
| अग्निपुराण | आनन्दाश्रम संस्कृत ग्रन्थावली, ग्रन्थाङ्क ४१, पूना, १६००; अनूदित, एम० एन० दत्त, कलकत्ता, १६०१ |
| कालिका पुराण | वेंकटेश्वर प्रेस, बाम्बे, १६०८ |

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS




| | |
|---|---|
| कूर्म पुराण | बिब्लियोथिका इण्डिका, कलकत्ता, १८९० |
| गरुड पुराण | वेंकटेश्वर प्रेस, बाम्बे, १९०६<br>अनूदित, एम० एन० दत्त, कलकत्ता, १९०८ |
| देवी भागवत पुराण | सम्पादित, बी० डी० वासु, अनूदित ( अंग्रेजी ) स्वामी विजयानन्द, पाणिनि कार्यालय, इलाहाबाद। |
| नारदीय पुराण | वेंकटेश्वर प्रेस, बाम्बे, १९०५ |
| पद्म पुराण | सम्पादित, एम० सी० आप्टे, आनन्दाश्रम संस्कृत ग्रन्थावली, पूना, १८९३-९४ |
| ब्रह्म पुराण | आनन्दाश्रम संस्कृत ग्रन्थावली, १८९५ |
| ब्रह्माण्ड पुराण | वेंकटेश्वर प्रेस, बाम्बे, १९१३ |
| ब्रह्मवैवर्त्त पुराण | सम्पादित, जे० विद्यासागर, कलकत्ता, १८८० |
| बृहन्नारदीय पुराण | सम्पादित, पी० एच० शास्त्री, बिब्लियोथिका इण्डिका, कलकत्ता, १८९१ |
| भविष्य पुराण | वेंकटेश्वर प्रेस, बाम्बे, १९१० |
| भागवत पुराण | सम्पादित, टी० के० कृष्णमाचारी, निर्णयसागर प्रेस, बाम्बे, प्रकाशित, गोपालनारायण काल्वा-देवी रोड, बाम्बे, अनूदित, १९१६, एम० एन० दत्त, कलकत्ता, १८९५ |
| मत्स्य पुराण | आनन्दाश्रम संस्कृत ग्रन्थावली, पूना, १९०७<br>अनूदित, आर० पी० त्रिपाठी हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग |
| मार्कण्डेय पुराण | सम्पादित, के० एम० बनर्जी, बिब्लियोथिका इण्डिका, कलकत्ता, १८६२, वेंकटेश्वर प्रेस, १९१० |
| युग पुराण | सम्पादित, मनकड वल्लभ, विद्यासागर, १९५१ |
| लिङ्गपुराण | बिब्लियोथिका इण्डिका, कलकत्ता, १८८५ |
| वराह पुराण | सम्पादित, पी० एच० शास्त्री, कलकत्ता, १८९३ |


CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



| | |
|---|---|
| वामन पुराण | वेंकटेश्वर प्रेस, बाम्बे, १९२९ |
| वायु पुराण | आनन्दाश्रम संस्कृत ग्रन्थावली, पूना, १९०५ |
| | बिब्लियोथिका इण्डिका, कलकत्ता, १८८०-८८ |
| विष्णु पुराण | वेंकटेश्वर प्रेस, बाम्बे, १८८९, अनूदित, गीता प्रेस, गोरखपुर, १९६९ |
| विष्णुधर्मोत्तर पुराण | वेंकटेश्वर प्रेस, बाम्बे, १९१२ |
| शिव पुराण | पंचानन तर्करत्न, बंगवासी प्रेस, कलकत्ता, वि० स० १३१४ |
| स्कन्द पुराण | वेंकटेश्वर प्रेस, बाम्बे, १९१० |
| साम्ब पुराण | वेंकटेश्वर प्रेस, बाम्बे, १८८९ |
| सौर पुराण | आनन्दाश्रम संस्कृत ग्रन्थावली, पूना, १९२४ |
| हरिवंश पुराण | चित्रशाला प्रेस, पूना, १९३६ |

## साम्बपुराण की पाण्डुलिपियाँ

| | |
|---|---|
| गङ्गानाथ झा केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठम्, इलाहाबाद | पाण्डुलिपि संख्या १६४१३ |
| इण्डिया आफिस लन्दन पुस्तकालय | दो पाण्डुलिपियाँ, कैटलाग संख्या ३६१९ तथा ३६२० |
| एशियाटिक सोसाइटी बंगाल पुस्तकालय | एच० पी० शास्त्री द्वारा कैटलाग भाग ५, कलकत्ता १९२८ में पाण्डुलिपि संख्या ४०९१, ४०९२, ४०९३ तथा ४०९४ के अन्तर्गत उल्लिखित |
| तञ्जौर महाराजा सरफोजी का सरस्वती महल पुस्तकालय | पी० पी० एस० शास्त्री, कैटलाग संख्या १०५८४, यह बर्नेल के कैटलाग संख्या १६३० में प्राप्य है। |
| इण्डिया आफिस लाइब्रेरी | ए० बी० कीथ, कैटलाग आफ द संस्कृत एण्ड प्राकृत मैनस्क्रप्ट्स, पाण्डुलिपि संख्या ६८३६, आक्सफोर्ड, १९३५ |
| संस्कृत कालेज, कलकत्ता | शास्त्री एवं गुई, कैटलाग संख्या २१४, कलकत्ता, १९०२ |

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS




| | |
|---|---|
| संस्कृत कालेज, बाराणसी | गोपीनाथ कविराज, ए कैटलाग आफ संस्कृत कालेज, लाइब्रेरी, सरस्वती भवन, बाराणसी, १९१८-३० |


## शिल्पशास्त्र एवं आगम साहित्य


| | |
|---|---|
| अंशुमद्भेदागम | आनन्दाश्रम संस्कृत सिरीज नं० ४१, पूना, १९०० |
| पूर्वकरणागम | एपिन्डेसेज इन इलीमेन्ट्स आफ हिन्दू आइकनोग्राफी |
| बृहत्संहिता | वराहमिहिरकृत, सम्पादित एवं अनूदित, पंडित भूषण वी० शास्त्री, बंगलौर, १९४७ |
| | सम्पादित, एच० कर्न बिब्लियोथिका इण्डिका, कलकत्ता, १८६५ |
| बृहज्जातक | वराहमिहिर प्रणीत, अनूदित बी० सूर्यनारायण राव, बंगलौर, १९५७ |
| मानसोल्लास अथवा अभिलषितार्थ चिन्तामणि, दो भागों में | सम्पादित, जी० के० गोडेकर, बड़ौदा, १९२५-२९ |
| रूपमण्डन | सम्पादित, बलराम श्रीवास्तव, वाराणसी, वि० स०, २००१; कलकत्ता, १९३६ |
| विश्वकर्मावतार शास्त्र | सम्पादित, के० वासुदेव शास्त्री, तञ्जौर, १९५८ |
| विश्वकर्माशास्त्र | सम्पादित के० वासुदेव शास्त्री, सरस्वती महल सिरीज, तञ्जौर, १९५८ |
| वैखानसागम (५९ पटल) | सम्पादित, के० एस० शास्त्री, त्रिवेन्दम, १९३५ |
| शिल्परत्न | श्रीकुमार प्रणीत, त्रिवेन्द्रम, १९२२ |
| समराङ्गणसूत्रधार | धारा के राजा भोज द्वारा रचित (११वीं शताब्दी ई०), सम्पादित, टी० गणपति शास्त्री, बड़ौदा, भाग १, १९२४, भाग २, १९२५ |


CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



## बौद्ध एवं जैन धर्म


आर्यमञ्जुश्रीमूलकल्प — सम्पादित, टी० गणपति शास्त्री, भाग १, १९२०, भाग २, १९२१, भाग ३, १९२५

जातक — अनूदित, ई० बी० कॉवेल, लन्दन, १९५७

यशस्तिलक — अनूदित, सुन्दरलाल शास्त्री, वाराणसी, १९६०


## तन्त्र-साहित्य


कुलार्णवतन्त्र — सम्पादित, जान वुडराफ, मद्रास, १९६७

गन्धर्वतन्त्र — सम्पादित, रामचन्द्र काक एण्ड हरिभट्ट शास्त्री, श्रीनगर, १९३४

जयाख्य संहिता — गायकवाड़ संस्कृत सिरीज, भाग ४५, बड़ौदा, १९३१

तन्त्रसार — निर्णय सागर प्रेस, बाम्बे, १९१८

तन्त्राभिधान — ए० एवालोन, तान्त्रिक टेक्सट्स, जिल्द १, १९१३ में सम्पादित

तन्त्रालोक (१२ भागों में) — अभिनवगुप्तकृत, काश्मीर संस्कृत सिरीज, श्रीनगर, १९२१-२८

नित्याचार पद्धति — विद्याकर वाजपेयी, भाग १, सम्पादित, विनोद बिहारी भट्टाचार्य, बिब्लियोथिका इण्डिका कलकत्ता, १९०३

नित्योत्सव — उमानन्दनाथ कृत, गायकवाड़ संस्कृत सिरीज, १९२३

प्रपञ्चसार — शङ्कराचार्य प्रणीत, पद्मपाद की 'विवरण' टीका के सहित, जिल्द ३ तथा नया संस्करण, जिल्द १८-१९ (३६ पटल), १९३६

प्रज्ञोपायविनिश्चयसिद्धि — अनंगवज्र (सिद्ध) विरचित, गायकवाड़ संस्कृत सिरीज, १९२१

महानिर्वाणतन्त्र — हरिहरानन्द भारती की टीका के सहित, सम्पादित, ए० एवालोन, तान्त्रिक टेक्सट्स, जिल्द १३, उल्लास १४, पुनर्संस्करण १९५३


CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



| | |
|---|---|
| विष्णुसंहिता | संस्कृत सिरीज, त्रिवेन्द्रम, १९२५ |
| शारदा तिलक | लक्ष्मण देशिकेन्द्र ( उत्पल के शिष्य ), संस्कृत सिरीज तथा तान्त्रिक टेक्स्ट (जिल्द १६ तथा १७), काशी, १९३४ |
| शिवार्चणचन्द्रिका | श्रीनिवास भट्ट रचित, १६ प्रकाशों में |
| सनत्कुमारतन्त्र (११ पटल) | ज्येष्ठाराम मुकुन्द जी, बाम्बे, १९०५ |

## विविध

| | |
|---|---|
| अर्थशास्त्र | कौटिल्य कृत, सम्पादित तथा अनूदित, आर० शामाशास्त्री, मैसूर, (तृतीय संस्करण), १९२९ आर० पी० कांगले, द कौटिलीय अर्थशास्त्र, ७ खण्डों में, १९६०-६३ |
| अष्टाध्यायी | पाणिनिकृत, सम्पादित, निर्णय सागर प्रेस, बाम्बे, १९५५ |
| अपरार्क | टीका, याज्ञवल्क्य स्मृति, आनन्दाश्रम संस्कृत सिरीज |
| अहिर्बुध्न्यसंहिता | सम्पादित, एम० डी० रामानुजाचार्य, अड्यार, मद्रास, १९१६ |
| ऋग्विधान | सम्पादित, जगदीश शास्त्री |
| कृत्यकल्पतरु | प्रणेता लक्ष्मीधर, ओरियन्टल इन्स्टीच्यूट, बड़ौदा |
| कृत्यरत्नाकर | प्रणेता चण्डेश्वर, पाण्डुलिपि संख्या १०५५ सी०, ढाका यूनिवर्सिटी लाइब्रेरी |
| कालनिर्णय | प्रणेता माधवाचार्य, बिब्लियोथिका इण्डिका, कलकत्ता, १८०९ शक |

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj, Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



कालसार — प्रणेता गदाधर, भाग १, सम्पादित, सदाशिव मिश्र, बिब्लियोथिका इण्डिका, कलकत्ता, १४५०-१५००

चतुर्वर्गचिन्तामणि — हेमादि कृत, भाग १, दानखण्ड, सम्पादित, पं० भारतचन्द्र शिरोमणि, बिब्लियोथिका इण्डिका संस्करण, कलकत्ता, १८७६

भाग ३, व्रतखण्ड, सम्पादित, योगेश्वर भट्टाचार्य, कलकत्ता, १८७६

दानसागर — पाण्डुलिपि संख्या ७१६-२०, इण्डिया आफिस लाइब्रेरी, लन्दन (इण्डिया आफिस कैटलाग संख्या १७०४-५)

नरनारायणनन्द — सम्पादित, सी० डी० दलाल एवं अनन्तकृष्ण शास्त्री, १९१६

नित्याकर प्रदीप — नरसिंह बाजपेयी, भाग १, प्रकाशित एशियाटिक सोसाइटी बंगाल, कलकत्ता

निर्णयामृत — अल्लाड (या ट) नाथसूरि (सिद्ध लक्ष्मण के पुत्र) द्वारा यमुना पर एकचक्रपुर के राजकुमार सूर्यसेन की आज्ञा से विरचित, १२५० के पश्चात् किन्तु १५०० के पूर्व, वेंकटेश्वर प्रेस से प्रकाशित

निरुक्त — यास्ककृत, अनूदित, लक्ष्मण स्वरूप, १९६२

प्रायश्चित्त प्रकरण — भवदेवभट्टकृत, गिरीशचन्द्र वेदान्ततीर्थ द्वारा सम्पादित तथा वरेन्द्र रिसर्च सोसाईटी, राजशाही द्वारा प्रकाशित, कलकत्ता, १९२७

मलमास तत्त्व — रघुनन्दन कृत, जीवानन्द द्वारा प्रकाशित

व्रतरत्नाकर — सामराज द्वारा शोलापुर में सन् १८७१ ई० में मुद्रित

वैखानसस्मृति सूत्र — सन् १९१४ में कुम्भकोणम् द्वारा एवं बिब्लियोथिका इण्डिका सिरीज में डॉ० कैलेण्ड द्वारा अनूदित, १९२७ एवं १९२९

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



| | |
|---|---|
| विष्णुधर्मसूत्र | सम्पादित, पंचानन तर्करत्न, बंगवासी प्रेस द्वारा प्रकाशित, कलकत्ता, वि० स० १३१६ |
| वीरमित्रोदय | मित्र मिश्रकृत, बी० पी० भण्डारी, अनूदित, जी० सी० सरकार, कलकत्ता, १८७९ |
| शब्दकल्पद्रुम | राधाकान्तदेवकृत, चौखम्बा संस्कृत सिरीज, वाराणसी, १९६७ |
| शुक्रनीतिसार | अनूदित, बी० के० सरकार, पाणिनि कार्यालय, इलाहाबाद, १९१४ |
| स्मृतिचन्द्रिका | देवण्णभट्टकृत, सम्पादित, एल० पी० श्री निवासाचार्य, मैसूर, १९१४-२१ |
| संस्काररत्नमाला | गोपीनाथ भट्ट प्रणीत, आनन्दाश्रम प्रेस एवं चौखम्बा द्वारा मुद्रित |
| हरिभक्तिविलास | गोपालभट्टकृत, सम्पादित, श्यामाचरन कवि-रत्न तथा गुरुदास चटर्जी द्वारा प्रकाशित कलकत्ता, १३१८ वि० स० |

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS

# विदेशी साक्ष्य

ऐन्शियन्ट इण्डिया ऐज डिसक्राइब्ड बाई टालमी
अनूदित, जे० डब्लू० मैक्रिन्डेल, कलकत्ता, १९२७

आन युवान च्वाङ्गस ट्रैवेल्स इन इण्डिया, टी वाटर्स, सम्पादित, टी० डब्लू० राइज डेविड्स तथा एस० डब्लू० बुशेल, लन्दन, भागद्वय १९०४ तथा १९०५

बुद्धिस्ट रिकार्ड आफ द वेस्टर्न वर्ल्ड (सी-यू-कि), भाग १,
अनूदित, एस० बील, लन्दन, १९०६

हिस्ट्री आफ इण्डिया ऐज टोल्ड बाई ईट्स ओन हिस्टोरियन्स, भाग ८ इलियट एण्ड डाउसन, लन्दन, १८६६-६७, अलीगढ़ संस्करण, भाग २, १९५२

अल्बरुनी'ज इण्डिया, सम्पादित, ई० सी० साचू, दिल्ली, १९६४

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS

# आधुनिक ग्रन्थ


अग्रवाल, वी० एस० — मार्कण्डेय पुराण : एक सांस्कृतिक अध्ययन, इलाहाबाद, १९६१

मत्स्यपुराण—ए स्टडी, वाराणसी, १९६३

वामन पुराण : एक सांस्कृतिक अध्ययन, पृथ्वी प्रकाशन, वाराणसी, १९६४

हर्षचरित : एक सांस्कृतिक अध्ययन, पटना १९५३

इण्डिया ऐज नोन टू पाणिनि, वाराणसी, १९६३

अल्काट, डब्लू० टी० — सन-लोर आफ आल एजेज, न्यूयार्क, १९१४

अली, एस० एम० — द ज्योग्राफी आफ द पुराणाज, दिल्ली, १९६६

अरोरा, आर० के० — हिस्टारिकल एण्ड कल्चरल डाटा फ्राम द भविष्य पुराण, नई दिल्ली, १९७२

अवस्थी, ए० बी० एल० — स्टडीज इन द स्कन्द पुराण, १९६५

अवस्थी, आर० ए० — खजुराहो की देव-प्रतिमाएं, आगरा, १९६७

अल्टेकर, ए० एस० — राष्ट्रकूटाज एण्ड दियर टाइम्स, पूना, १९३४

पोजीशन आफ वीमेन इन हिन्दू सिविलिजेशन, मोतीलाल बनारसीदास, बनारस, १९५६

आचार्य, पी० के० — इण्डियन आर्किटेक्चर, नई दिल्ली, १९२७

आप्टे, वी० एस० — सोसल एण्ड रेलिजस लाइफ इन द गृह्य सूत्राज, बाम्बे, १९५४

उपाध्याय, बलदेव — पुराण-विमर्श, वाराणसी, १९६५

उपाध्यान, वासुदेव — सोसिओ-रेलिजस कन्डीशन आफ नार्थ इण्डिया (७००-१२०० ई०), वाराणसी, १९६४

प्राचीन भारतीय अभिलेखों का अध्ययन, दिल्ली, १९७४


CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS




उपाध्याय, बी० एस० — इण्डिया इन कालिदास, इलाहाबाद, १९४७
भारतीय समाज का ऐतिहासिक विश्लेषण, दिल्ली, १९७३
भारतीय संस्कृति के स्रोत, दिल्ली, १९७३

एलेन, जे० — कैटलाग आफ इण्डियन क्वायन्स इन द ब्रिटिश म्यूजियम, क्वायन्स आफ ऐन्शियन्ट इण्डिया, लन्दन, १९३६

ओझा, मधुसूदन — पुराण निर्माणाधिकरणम् तथा पुराणोत्पत्ति प्रसङ्ग, जयपुर, सं० २००९

ओझा, जी० एच० — भारत की मध्यकालीन संस्कृति, इलाहाबाद, १९४५

ओम प्रकाश — पोलिटिकल आइडियाज इन द पुराणाज, इलाहाबाद, १९७७

कनिंघम, ए० — द ऐन्शियन्ट ज्योग्राफी आफ इण्डिया, संपादित, एस० एन० मजूमदार

कालिंग वुड, आर० जी० — द आइडिया आफ हिस्ट्री, लन्दन, १९६३

काणे, पी० वी० — हिस्ट्री आफ धर्मशास्त्र, भाग १-५, भण्डारकर ओरियन्टल रिसर्च इंस्टीच्यूट, पूना, १९३०-६२

कान्तावाला, एस० जी० — कल्चरल हिस्ट्री फ्राम द मत्स्य पुराण, बड़ौदा, १९६४

कीथ, ए० बी० — ए हिस्ट्री आफ संस्कृत लिटरेचर, आक्सफ़ोर्ड, १९२८


CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS




कुमारस्वामी, ए० के० — हिस्ट्री आफ इण्डियन एण्ड इन्डोनेशियन आर्ट, लन्दन, १९२७

कोसाम्बी, डी० डी० — द कल्चर एण्ड सिविलिजेशन आफ ऐन्शियन्ट इण्डिया इन हिस्टारिकल आउटलाइन, लन्दन, १९६५

क्रैमरिश स्टेला — द हिन्दू टेम्पिल, (भाग १ व २), कलकत्ता, १९४६

ग्यानी, एस० डी० — अग्निपुराण : ए स्टडी, वाराणसी, १९६४

घोपाल, लल्लनजी — इकॉनामिक लाइफ आफ नार्दन इण्डिया, वाराणसी, १९६५

घिरमशन — ईरान, लन्दन, १९६२

घोषाल, यू० एन० — स्टडीज इन इण्डियन हिंस्ट्री एण्ड कल्चर, बाम्बे, १९६५

घुरे, जी० एस० — कास्ट, क्लास एण्ड अकूपेशन, बाम्बे, १९६१

चक्रवर्ती, सी० — द तन्त्राज : स्टडीज आन दिअर रेलिजन एण्ड लिटरेचर, कलकत्ता, १९६३

चक्रवर्ती, पी० सी० — आर्ट आफ वार इन ऐन्शियन्ट इण्डिया, ढाका यूनिवर्सिटी, १९४२

चट्टोपध्याय, सुधाकर — एकेमिनायड्स एण्ड इण्डिया, कलकत्ता, १९५०
शकाज इन इण्डिया, कलकत्ता, १९६७

जॉली — हिस्ट्री आफ हिन्दू ला, पार्टीशन, इनहेरिटेन्स एण्ड एडाप्शन, कलकत्ता, १८८५

जिमर, एच० — मिथ्स एण्ड सिम्बल्स इन इण्डियन आर्ट एण्ड सिविलिजेशन, न्यूयार्क, १९४६

जोशी, एन० पी० — प्राचीन भारतीय मूर्तिविज्ञान, बिहार-राष्ट्र-परिषद्, पटना, १९७७

टॉयन्बी, ए० — ऐन हिस्टोरियन्स एप्रोच टू रेलिजन, लन्दन, १९५६


CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



टांके, एल० एफ० — द थिअरी एण्ड प्रैक्टिस आफ हिस्ट्री, न्यूयार्क, १९७३

टेलर, ई० बी० — रेलिजन इन द प्रिमिटिव कल्चर, न्यूयार्क, १९५८

डे०, एन० एल० — ज्योग्राफिकल डिक्शनरी आफ ऐन्शियन्ट एण्ड मेडिवल इण्डिया, लन्दन, १९२७

डेविड, एन० लोरेन्जन — द कापालिकाज एण्ड कालामुखाज, नई दिल्ली, १९७३

थपलियाल, यू० पी० — फारेन इलीमेण्ट्स इन ऐन्शियन्ट इण्डियन सोसाइटी, नई दिल्ली, १९७२

थपलियाल, के० के० — स्टडीज इन ऐन्शियन्ट इण्डियन सील्स, लखनऊ, १९७२

दत्ता एवं चटर्जी — भारतीय दर्शन, पटना, १९८२

दास, ए० सी० — सन-वरशिप इन इण्डो आर्यन रेलिजन एण्ड माइथालाजी, दिल्ली, १९८४

दाण्डेकर, आर० एन० — वेदिक बिब्लियोग्राफी ( भाग १ व दो ), पूना, १९६१

दीक्षितार, वी० आर० आर० — द मत्स्यपुराण : ए स्टडी, मद्रास, १९३५
पुराण इन्डेक्स, (भाग १ व २), मद्रास, १९५१, ५२, ५५

देसाई, एन० वाई० — ऐन्शियन्ट इण्डियन सोसाइटी, रेलिजन एण्ड माइथालाजी ऐज डिपिक्टेड इन द मार्कण्डेय पुरा , बड़ौदा, १९६८

नियोगी, पुष्पा — ब्राह्मणिक सेटेलमेण्टस इन डिफरेण्ट सब डिवीजन्स, कलकत्ता, १९६७

नेगी, जे० एस० — सम इण्डोलाजिकल स्टडीज, भाग १, इलाहाबाद, १९६६

पाण्डेय, जी० सी० — द मीनिङ्ग एण्ड प्रासेस आफ कल्चर, आगरा, १९७२
फाउन्डेशन्स आफ इण्डिमन कल्चर, वाल्यूम १;

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



स्प्रिचुअल वीजन एण्ड सिम्बालिक फार्म्स इन ऐन्शियन्ट इण्डिया, वाल्यूम २, डायमेन्शन्स आफ ऐन्शियन्ट इण्डियन सोसल हिस्ट्री, बुक एण्ड बुक्स, नई दिल्ली, १९८४

इतिहास : स्वरूप एवं सिद्धान्त, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, १९७३

पाण्डेय, एल० पी — सन-वरशिप इन ऐन्शियन्ट इडिया, मोतीलाल बनारसी दास, दिल्ली, १९७१

पाण्डेय, डी० पी० — सूर्य, आइकनोग्रैफिकल स्टडी आफ द सन-गाड, लीडेन, १९३९

पाण्डेय, वीणापाणि — हरिवंश पुराण का सांस्कृतिक विवेचन, लखनऊ, १९६०

पाण्डेय, आर० बी० — हिन्दू संस्काराज, वाराणसी, १९४९

भारतीय नीति का विकास, बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना, १९६५

पाठक, वी० एस० — हिस्ट्री आफ शैव कल्ट्स इन नार्दन इण्डिया, वाराणसी, १९६०

ऐन्शियन्ट हिस्टोरियन्स आफ इण्डिया, एशिया पब्लिशिंग हाउस, १९६६

पार्जीटर, एफ० ई० — पुराण इन्साइक्लोपीडिया आफ रेलिजन एण्ड एथिक्स, भाग १०

द पुराण टेक्सट्स आफ डायनस्टीज आफ द कलि एज, आक्सफोर्ड, १९१३

ऐन्शियन्ट इण्डियन हिस्टारिकल ट्रेडीशन, लन्दन, १९२२

पाटिल, डी० आर० — कल्चरल हिस्ट्री फ्राम द वायु पुराण, पूना, १९४६

पुसालकर, ए० डी० — स्टडीज इन द एपिक्स एण्ड पुराणाज, बाम्बे, १९५५

प्रभु, पी० एन० — हिन्दू सोसल आर्गनाइजेशन, बाम्बे, १९६३

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS




फ्लीट० जे० एफ० — कारप्रस इन्सक्रिटसनम् इंडिकेरम्, वाराणसी, १९६३

फर्क्यूहर, जे० एन० — एन आउटलाइन आफ द रेलिजस लिटरेचर आफ इण्डिया, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, १९२०

फ्रैंक, क्यूमान्ट — द मिस्टरीज आफ मिथ्, न्यूयार्क, १९५६

बनर्जी, जे० एन० — डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी, कलकत्ता, १९५६

बाशम, ए० एल० — स्टडीज इन ऐन्शियन्ट इण्डियन हिस्ट्री एण्ड कल्चर, कलकत्ता, १९६४

ब्राउन, पर्सी — इण्डियन आर्किटेक्चर, बाम्बे, १९६५

बोनर, एलिस एण्ड शर्मा सदाशिवनाथ — न्यू लाइट आन द सन-टेम्पिल आफ कोणार्क, वाराणसी, १९७२

भण्डारकर, डी० आर० — सम आस्पेक्ट्स आफ ऐन्शियन्ट इण्डियन कल्चर, मद्रास, १९४०

भण्डारकर, आर० जी० — वैष्णविज्म, शैविज्म एण्ड माइनर रेलिजस सिस्टम्स, बनारस, १९६५

भट्टशाली, एन० के० — आइकनोग्राफी आफ बुद्धिस्ट एण्ड ब्रह्मनिकल स्कल्पचर्स इन द ढाका म्यूजियम, ढाका, १९२९

भट्टाचार्य, आर० एस० — इतिहास-पुराण का अनुशीलन, वाराणसी, १९६३

भट्टाचार्य, बी० सी० — इण्डियन इमेजेज, भाग १, ब्रह्मनिक आइकनोग्राफी, कलकत्ता, १९३१

भट्टाचार्य, एस० सी० — सम आस्पेक्ट्स आफ इण्डियन सोसाइटी, कलकत्ता, १९७८

मणि, बी० — पुराणिक इन्साइक्लोपीडिया, वाराणसी, १९७५

मजूमदार, आर० सी० — द एज आफ इम्पीरियल यूनिटी, बाम्बे, १९५१

द स्ट्रगिल फार इम्पायर, बाम्बे, १९५७

द वेदिक एज, लन्दन, १९५०

इन्सक्रिप्सन्स आफ कम्बुज, कलकत्ता, १९५३

मजूमदार, बी० पी० — सोसिओ-इकॉनामिक हिस्ट्री आफ नार्दर्न इण्डिया (१०३०-११९४ ई०), कलकत्ता, १९६०


CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



मिराशी, वी० वी० — कारपस इंसक्रिप्शनम् इंडिकेरम्, जिल्द ४, भाग १ एवं २, उटकमंड, १९५५

मित्र, आर० एल० — एन्टीक्विटीज आफ उड़ीसा, (दो भागों में) कलकत्ता, १८७५-८०

मिश्रा, शिवशेखर — मानसोल्लास : एक सांस्कृतिक अध्ययन, चौखम्बा विद्या भवन सिरीज, वाराणसी, १९६६

मिश्र, इन्दुमती — प्रतिमा-विज्ञान, मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, १९७२

मिश्रा, के० सी० — द कल्ट आफ जगन्नाथ, कलकत्ता, १९७१

मुकर्जी, सन्ध्या — सम आस्पेक्ट्स आफ सोसल लाइफ इन ऐन्शियन्ट इण्डिया, इलाहाबाद, १९७६

मुकर्जी, आर० के० — अशोक, लन्दन, १९२८

मैकडॉनल, ए० ए० — वेदिक माइथालाजी, वाराणसी, १९६३

मोल्टन — द ट्रेजर आफ मगी, आक्सफोर्ड, १९१७

अर्ली जोरास्ट्रीनिज्म, लन्दन, १९२६

यादव, बी० एन० एस० — सोसाइटी एण्ड कल्चर इन नार्दन इण्डिया इन ट्वेल्थ सेन्चुरी, इलाहाबाद, १९७३

राय, यू० एन० — प्राचीन भारत में नगर तथा नगर-जीवन, इलाहाबाद, १९६५

स्टडीज इन ऐन्शियन्ट इण्डियन हिस्ट्री एण्ड कल्चर, वाल्यूम I, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, १९६९

राय, एस० एन० — पौराणिक धर्म एवं समाज, पञ्चनद पब्लिकेशन्स इलाहाबाद, १९६८

हिस्टारिकल एण्ड कलचरल स्टडीज इन द पुराणाज, पुराणिक पब्लिकेशन्स, इलाहाबाद, १९७७

राजमणि — ए क्रिटिकल स्टडी आफ द भागवत पुराण, वाराणसी, १९७०

राव, गोपीनाथ — इलीमेण्ट्स आफ हिन्दू आइकनोग्राफी (दो भागों में) मद्रास, १९१४-१६

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS




| | |
|---|---|
| रे, निहार रंजन | बंगालीर इतिहास (आदि पर्व), प्रथम संस्करण, कलकत्ता, १३५६ वि० स० |
| रैप्सन, ई० जे० | कैम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया, भाग १, कैम्ब्रिज, १९२२ |
| लारसन, जी० जे० | द क्लासिकल सांख्य, वाराणसी, १९६९ |
| विण्टरनित्स, एम० | ए हिस्ट्री आफ इण्डियन लिटरेचर, कलकत्ता, १९:० |
| वुडराफ, सरजान | प्रिंसपिल्स आफ तन्त्र, मद्रास, १९६० |
| | शक्ति एण्ड शाक्त, मद्रास, १९६३ |
| | इण्ट्रोडक्शन टू तन्त्रशास्त्र, मद्रास, १९६९ |
| | महानिर्वाणतन्त्र, मद्रास, १९७१ |
| | द गारलैण्ड आफ लेटर्स, मद्रास, १९७४ |
| | द सरपेण्ट पावर, मद्रास, १९७४ |
| शर्मा, आर० एस० | इण्डियन फ्यूडॉलिज्म, कलकत्ता, १९६५ |
| | पूर्व-मध्यकालीन भारत में सामाजिक परिवर्तन, दिल्ली, १९६९ |
| | मैटीरियल कल्चर एण्ड सोसल फार्मेशन्स इन ऐन्शियन्ट इण्डिया, दिल्ली, १९८३ |
| शर्मा, दशरथ | राजस्थान थ्रू द एजेज, भाग १, बीकानेर, १९६६ |
| शर्मा, जी० आर० | कुषाण स्टडीज, यूनिवर्सिटी आफ इलाहाबाद, १९६८ |
| शास्त्री, एच० के० | साउथ इण्डियन इमेजेज आफ गाड्स एण्ड गाडसेज, मद्रास, १९१६ |
| शास्त्री, के० ए० एन० | ए काम्प्रिहेन्सिव हिस्ट्री आफ इण्डिया, बाम्बे, १९५७ |
| शिवराममूर्ति, सी० | इण्डियन स्कल्पचर, नई दिल्ली, १९६१ |
| श्रीवास्तव, वी० सी० | सन-वरशिप इन ऐन्शियन्ट इण्डिया, इण्डोलाजिकल पब्लिकेशंस, इलाहाबाद, १९७२ |
| | साम्बपुराण ( हिन्दी-अनुवाद ), इण्डोलाजिकल पब्लिकेशंस, इलाहाबाद, १९७५ |


CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



शुक्ल, डी० एन० — शिल्प-शास्त्र, लखनऊ, १९६७

स्टेटेन्क्रान, एच० वान — इण्डिश्च सोनिन प्रीस्टेर साम्ब एण्ड देई शाकद्वीपीय ब्राह्मण, वेसवेडिन, १९६८

स्टार्लिङ्ग, ए० — एन एकाउण्ट स्टेटिस्टकल एण्ड हिस्टारिकल आफ उड़ीसा प्रापर, कोणार्क, १८२५

सरकार, डी० सी० — सेलेक्ट इन्सक्रिप्शन्स, जिल्द १, कलकत्ता, १९६५

सांकलिया, एच० डी० — आर्कियोलाजी आफ गुजरात, बाम्बे, १९४१

प्रीहिस्ट्री एण्ड प्रोटोहिस्ट्री आफ इण्डिया एण्ड पाकिस्तान, बाम्बे, १९६३

सांकृत्यायन, राहुल — मध्य एशिया का इतिहास, पटना, १९५६

सिनहा, बी० पी० — रीडिंग्स इन हिस्ट्री एण्ड कल्चर, सन्दीप प्रकाशन, दिल्ली, १९७८

सूर्यवंशी, बी० सिंह — द आभीराज, दिअर हिस्ट्री एण्ड कल्चर, बड़ौदा, १९६२

हण्टर, डब्लू० डब्लू० — ए हिस्ट्री आफ उड़ीसा, भाग १, कलकत्ता, १९५६

हरडेग, वाटर — द सन इन आर्ट, स्विट्जरलैण्ड, १९६४

हर्जफोल्ड, ई० ई० — शकस्तान, १९३२

हाजरा, आर० सी० — स्टडीज इन द पुराणिक रिकार्ड्स आन हिन्दू राइट्स एण्ड कस्टम्स, ढाका, १९४०

स्टडीज इन द पुराणाज, भाग १, संस्कृत कालेज रिसर्च सिरीज, सं० ११, कलकत्ता, १९५८; स्टडीज इन द पुराणाज, भाग २, कलकत्ता, १९६३

हान्डीकी, के० के० — यशस्तिलक एण्ड इण्डियन कल्चर, जीवराज जैन ग्रन्थमाला, २, १९४९

हापकिन्स, ई० डब्लू० — एपिक माइथालाजी, स्ट्रासबर्ग, १९१५

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS

# कोश

| | |
|---|---|
| अमरकोश | सम्पादित, ए० डी० शर्मा तथा एन० जी० सर देसाई, पूना, १९४१ |
| इन्सा इक्लोपीडिया आफ रेलिजन एण्ड एथिक्स (१२ भागों में) | सम्पादित, जे० हेस्टिंग्स, एडनबर्ग, १९०८—२१ |
| ए संस्कृत-इंगलिश डिक्शनरी | मोनियर विलियम्स, दिल्ली, १९७६ |
| द स्टूडेन्ट संस्कृत-इंगलिश डिक्शनरी | वी० एस० आप्टे, मोतीलाल बनारसीदास, बाराणसी, १९६३ |
| धर्मकोश (तीन भागों में) | लक्ष्मण शास्त्री जोशी, सतारा, १९३७-५१ |
| वैदिक कोश | सूर्यकान्त, बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी, वाराणसी, १९६३ |

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS

# प्रमुख शोध लेख


| | |
|---|---|
| अरोरा, आर० के० | द मगाज, सनवरशिप एण्ड द भविष्य पुराणम् १३ (१), जनवरी, १९७१ |
| ओमप्रकाश | पद्धतियाँ, इतिहास और सन्दर्भ, गङ्गानाथ झा केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठम्, इलाहाबाद |
| कुमारस्वामी, ए० के० | फोर डेज इन उड़ीसा मार्डन रिव्यू, अप्रैल, १९११ |
| बनर्जी० जे० एन० | मिथ्स एक्सप्लेनिंग सम एलियन ट्रेट्स आफ द नार्थ इण्डियन सन आइकन्स, इण्डियन हिस्टारिकल क्वार्टरली, भाग २८, १९५२ |
| | इण्डियन वोटिव एण्ड मेमोरियल कालम्स, जर्नल आफ इण्डियन सोसाइटी आफ ओरियन्टल आर्ट, (कुमार स्वामी वाल्यूम), भाग ५ तथा १६, १९४८ |
| बर्गीज, जे० | आर्किटेक्चरल एन्टीक्विटीज आफ नार्दन गुजरात, लन्दन, १९०३ |
| बाजपेयी, के० डी० | सम न्यू मथुरा फाइन्ड्स, जर्नल आफ उ० प्र० हिस्टारिकल सोसाइटी, १९४८ |
| भण्डारकर, आर० जी० | कलेक्टेड वर्क्स, भण्डारकर ओरियन्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, पूना, बाम्बे गजेटियर्स, भाग १ तथा १५ |
| मिराशी, वी० वी० | थ्री ऐन्शियन्ट फेमस टेम्पिल्स आफ द 'पुराणम्', भाग ८, जनवरी, १९६६ |
| | आइडेन्टीफिकेशन आफ कालप्रिय, स्टडीज इन इन्डोलाजी, भाग १ |


CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



यादव, बी० एन० एस० — सम आस्पेक्ट्स आफ द चेन्जिग आर्डर इन इण्डिया ड्यूरिंग द शक कुषाण एज, कुषाण स्टडीज, इलाहाबाद, १९६८

राय, एस० एन० — अर्ली पुराणिक एकाउन्ट आफ द सन एण्ड सोलर कल्ट, इलाहाबाद यूनिवर्सिटी स्टडीज, १९६३

राय बहादुर, हीरालाल — त्रिमूर्तीज इन बुन्देलखण्ड, इण्डियन एन्टीक्वेरी, भाग ४७, मई १९१८

शर्मा, आर० एस० — मैटीरियल मिलेयू आफ तान्त्रीसिज्म, इन मेमोरी आफ डी० डी० कोसाम्बी, इण्डियन काउन्सिल आफ हिस्टारिकल रिसर्च, दिल्ली, १९७४

श्रीवास्तव, वी० सी० — द ओरिजिनल नेचर एण्ड सिगनीफिकेन्स आफ सवितृ इन ऋग्वेदिक रेलिजन, जर्नल आफ आन्ध्र हिस्टारिकल रिसर्च सोसाइटी, भाग २९ (खण्ड १ तथा २)

स्टडीज इन द ओरिजिन्स आफ द सोलर कल्ट इन ऐन्शियन्ट इण्डिया, प्रोसीडिंग्स आफ़ इण्डियन हिस्ट्री कांग्रेस, १९६५, इलाहाबाद

एन्टीक्विटी आफ मगाज इन ऐन्शियन्ट इण्डिया, इण्डियन हिस्ट्री कांग्रेस, भागलपुर, १९६८

मगाज–द ईरानियन प्रीस्ट्स इन ऐन्शियन्ट इण्डिया, इण्टर यूनिवर्सिटी सेमिनार, कलकत्ता यूनिवर्सिटी, १९६८

सन-वरशिप इन बालि, ए हाइपोथीसिस, पुराणम्, भाग १७ (१) जनवरी, १९७५

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



| | |
|---|---|
| | द रेलिजस स्टडी आफ ए सिम्बल आन ऐन अवन्ति क्वायन–मेमॉयर आफ द डिपार्टमेन्ट आफ ऐन्शियन्ट इण्डियन हिस्ट्री, बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी, २, १९६८ |
| | फ्रेश इन्टर प्रिटेशन्स आफ सोलर सिम्बल्स आन सूर्यमित्र एण्ड भानुमित्र क्वायन्स, जर्नल आफ न्यूमिसमेटिक सोसाइटी आफ इण्डिया, वाराणसी, १९६९ |
| | सम आस्पेक्ट्स आफ सन-वरशिप इन द गुप्ता एज, इलाहाबाद यूनिवर्सिटी, स्टडीज, १९७० |
| स्टीन, एम० ए० | जोरोस्ट्रियन डिटीज आन इन्डो शक क्वायन्स, बेबीलोनियन एण्ड ओरियन्टल रिकार्ड, अगस्त, १८८७ |
| हाजरा, आर० सी० | द उप पुराणाज, एनाल्स आफ भण्डारकर ओरियन्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट (२१), १९४० |
| | साम्बपुराण थ्रू द एजेज, जर्नल आफ एशियाटिक सोसाइटी, लेटर्स, भाग १८ (२) |
| | द साम्बपुराण–ए सौरवर्क आफ डिफरेन्ट हैन्ड्स, एनाल्स आफ भण्डारकर ओरियन्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट भाग ३६, १९५५ |
| | थ्री मोस्ट इम्पार्टेन्ट प्लेसेज आफ सन वरशिप, भारतीय विद्या, ४, १९४२–४३ |

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj, Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS

# शोध-पत्रिकाएँ

इण्डियन एन्टीक्वेरी, बाम्बे
इण्डियन कल्चर, कलकत्ता
इण्डियन हिस्टारिकल क्वार्टली, कलकत्ता
इण्डियन आर्कियोलाजी—ए रिव्यू, नई दिल्ली
एप्रिग्रैफिया इण्डिका
एनाल्स आफ भण्डारकर ओरिएण्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, पूना
एन्यूअल रिपोर्ट आफ आर्क्योलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया
ऐन्शियन्ट इण्डिया, पेशावर (पाकिस्तान)
ऐन्शियन्ट इण्डिया (बुलेटिन आफ द आर्क्योलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया), नई दिल्ली
जर्नल आफ इण्डियन हिस्ट्री
जर्नल आफ द एशियाटिक सोसाइटी आफ बंगाल, कलकत्ता
जर्नल आफ आन्ध्र हिस्टारिकल रिसर्च सोसाइटी
जर्नल आफ इलाहाबाद यूनिवर्सिटी स्टडीज, इलाहाबाद
जर्नल आफ द गङ्गानाथ झा रिसर्च इन्स्टीट्यूट
जर्नल आफ द बिहार एण्ड उड़ीसा रिसर्च सोसाइटी, पटना
जर्नल आफ द न्यूमिसमेटिक सोसाइटी आफ इण्डिया
जर्नल आफ उत्तर प्रदेश हिस्टारिकल सोसाइटी
पुराणम्, आल इण्डिया काशीराज ट्रस्ट रामनगर, वाराणसी
प्रोसीडिंग्स आफ इण्डियन हिस्ट्री कांग्रेस
भारतीय विद्या, बाम्बे
मैन इन इण्डिया, राँची
विशेश्वरानन्द इण्डोलाजिकल जर्नल, होशियारपुर

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS

# अनुक्रमणिका


अखमेनियन, ५६
अग्निपुराण, १२५, १५८, १६६
अग्निष्टोम, ७९
अदिति, १३६
अफगानिस्तान, ५३
अबुजैद, १८३
अभिधानचिन्तामणि, ६२
अम्बष्ठ, ६६
अमरकोश, ७
अमेरिका, १३४
अर्यमा, १३६, १६४
अरुण, ११४, १५४, १५५, १५६, १६१, १६२, १६९, १७०, १७२, १७३
अलइद्रीसी, १८३
अलइस्तखारी, १८३
अलबरूनी, ३९, ४९, ६२, ६४, ६८, १८३
अवन्ति, ५६
अशोक, ५९
अश्विनीकुमार, १४४, १७३, १७५, १७६
अरोरी, ५३
आदित्यपुराण, २०
आभीर, ६७
आश्विन, ७७
ईरान, ५०
ईरानियन, २६, १७१
उग्रदेव, ३५
उज्जयिनी, ३१, १८४
उटकुटासन, १७३, १७४, १७६
उड़ीसा, २६, १७५, १८४
उपानतपिनद्ध, १७४
उमाप्रसाद थपलियाल, ५३
उर्वशी, २
उषा, १६०, १७३, १७५
ऋग्वेद, १, २५, ४६, ७७, ७८, १३४
एलोरा, १७६
एस० एन० राय, ८
ऐतरेय ब्राह्मण, ७८
अंशु, १३६, १६२
अंशुमद्भेदागम, १३५, १६०, १६२, १७१
अंशुमाली, १४४
कक्कुक, ६७


CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



कण्व, ३६
कह्लार, १७६
कल्माष, ६३, १४४
कालप्रिय, काल्पी,
कालप्रियनाथ, ३०;
१८४
कालसार, २०
किचिंग, १७५, १७७
किराडू, १२४
कीथ, २३
कुबेर, १४४
कुमारपद्रक, ६८
कूर्मपुराण, ४१, ४२
कोणार्क, २६, १८४,
कोणादित्य, ३१, ३८
खखोल्क, १११
खजुराहो, १२४, १७७
गरुड, ६३
गरुडपुराण, १२३
गान्धर्वी, १४०, १४८
गीता, ३
गृह्यसूत्र, १७८
गोपीनाथ कविराज, २२
गोविन्दपुर, ५५
घाटनगर, १५७
चतुर्वर्ग चिन्तामणि, १३५, १७०
चन्द्रभागा, १८३
चिदम्बरम्, १२४
चित्रगुप्त, १७४
चैल्डियन, ५१
चौद्दाग्राम, १७५
छान्दोग्य उपनिषद्, ७६
छाया, १५६, १७०
जगन्नाथ, १८५
जगन्नाथपुरी, ८६
जम्बूद्वीप, ५०
जयन्त, १०७, १४६
जरथुष्ट्र, ५१
जान्दक, १४४
जाम्बवती, ४४, ६१
जे० एन० फर्युहर, ४०
जे० एन० बनर्जी, ४४
टालमी, ५१
त्वष्टा, १३६, १६२, १६५
तुशाष्प, ५७
तैत्तिरीय संहिता, ७८
थानेश्वर, २६
दण्डी, १६८, १७०, १७५
दण्डनायक, ६१; ९३, १५४, १५५,
दण्डपाणि, ११४

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS




दीक्षामण्डल, १०३
दुलादेव, १२४
देवीपुराण, १२३
देवलक, ५९
देलमल, १२४
द्रौपदी, ४३
द्वारपाल, १४४
धन्व, १२४
धाता, १३६
नन्दसिंह, २३
नन्दघाटिया, ३९
नरसिंह प्रथम, १८५
नारद, २७, ३९
नित्याकर प्रदीप, २०
निष्प्रभा, १५९
नेपाल, ५१
पर्जन्य, १३६
पद्मपुराण, १३५, १५८
पाञ्चाल, ५६
पार्जिटर, ८
पिंगल, ८४, ९३, ११४, १५४, १५५, १५९, १६३, १६९, १७०, १७५, १७६
पुर्तगाल, १३४
पुराणी, १
पुरुरवा, २
पुसाल्कर, ९
पूर्वकरणागम, १३५, १७१
पूषा, १३६
प्रतीहारी, १५५, १५९, १६९
प्रभास, १२४
प्रद्युम्न, २७
प्राप्नुयान, १४४
बद्रीनारायण मिश्र, २१
बलदेव उपाध्याय, ७
बल्लालसेन, ३९, ४१
बेबिलोनियन, ५१
बंगाल, १२५
ब्यापक, १०७, १४६
ब्रह्मपुराण, ३६, ३८, ४२, १३५, १५९
ब्रह्मवैवर्तपुराण, ६७
बृहत्-छत्तिवन्ना, ६५
बृहद्धर्म, ६३
बृहत्संहिता, ३८, ४४, ६१, १३५, १३९, १४१, १४६, १४८, १५७, १५८, १७७
भग, १३६
भविष्यपुराण, ३६, ३७, ३८, ३९, ४०, ४१, ५०, ८६, १२३, १३५, १४८, १५३
भागवत, ७, ८, ९, १९, ४३
भानुमित्र, ५६
भास्कर-पुराण, २०


CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



भुवनेश्वर, १८५
भोजक, ५९
मण्डल, १०५
मथुरा, १७३, १७४, १७६
मधुसूदन ओझा, ३
मन्दाकिनी, २
मनु, १५६
मन्वन्तर, ५
मत्स्यपुराण, ४, ५, ६, २९, ३६, १३५, १३८, १५३, १५५
मयूर, ३५
महाकाल, १८४
महागायत्री मन्दिर, १८५
महाभारत, ३, २५, २८, ६१
महाश्वेता, ८३, ८६, ९८, ११४
मार्कण्डेयपुराण, ३६, १३४
माठर, १४४
मांडा, १२५
मार्त्तंड पुराण, २०
मार्त्तण्ड भैरव, १२५
मित्रमिश्र, ४१
मित्र, १८५
मिथ्र, ५६, १५७
मित्रवन, ३१, ३९
मिहिर, १५७
मुन्डीर, १८४
मुल्तान, १८३
मोढेर, १७६, १७७, १८४
यम, १५६
यादव प्रकाश, ६६
यावियाङ्ग, १५६
यूनान, १३४
रत्नि, ७४
रश्मिकिरण, १४५
राजशेखर शास्त्री, ८
राजस्थान, १२४
रामानुजाचार्य, १३२
रामायण, ७९, १३५
राज्ञी, ८४, ८६, ९३, १४४, १५६, १५९, १७०, १७३, १७७, १८०
रूपमण्डन, १३५, १७१
रैवन्त, ९३, १४५, १४८, १५६, १५७
रैवतक, २७
लम्बोजीमाता, १२४
लक्ष्मी, १४४
लालता प्रसाद पाण्डेय, ५२
लोकनाथ, १०४
वराह पुराण, ३७, ४०
वराहमिहिर, ५५, ५६
वरुण, १३६

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



वाताश्वक, ५६
वायुपुराण, १२२
बालमबात, ५६
वासुदेव कृष्ण, २७
वासुदेव, ६१
विजय, १०७, १४६
विद्याधर, १७५
विनायक, १४५
विनोदचन्द्र श्रीवास्तव, २३, १३०
विभावसु, ९४
विमकडफिसेस, ५५
वियाङ्ग, १५५
विश्वकर्मशास्त्र, १३५, १६३, १७१
विश्वकर्मा, ५२, १५९
विश्वकर्माशिल्प, १६८, १७१
विश्वामित्र, ३९
विष्णुधर्मोत्तर पुराण, ४४, ६१, ६७, १३५, १४८, १५५, १५६, १५७
विष्णुपुराण, ५०, १३४
विवस्वान्, १३६, १६४
वेंकटेश्वर, २१
वैखानसागम, ६१
वैजयन्ती, ६६
वंशानुचरित, ५, ८
शतपथ ब्राह्मण, १३४
शाकद्वीप, ५०, ५३, ५८
शाकद्वीपीय, २९
शिल्परत्न, १६२, १६३, १७१
शिवपुराण, १२३
शुक्रनीतिसार, १३९
शुक्ल, १०७, १४६
स्कन्दपुराण, ३६, ३९, ४१, ६१, १२२,
समरांगणसूत्रधार, १३५, १३९, १७०
सरस्वती, १४४
सवर्णा, १७०
सर्वानन्द, ३९
सहस्त्रांशुमाली, १७७
सांकलिया, १७६
साम्ब, २७, ३९
साम्बपुर, ३०
साम्बपुराण, १, १९, २६, ३१, ३२, ३३, ३४, ३५, ३६, ३७, ३८, ३९, ४०, ४१, ४२, ४४, १०२, ११०, ११७, ११८, १६५
सावित्री, १६५
सिद्धपुर, १२४
सिद्धल, ६५
सीस्तान, ५२, ५३
सुखबासपुर, १७५
सुप्रभेदागम, १३५, १६१, १६२, १७१

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS



स्रुच, ६६
स्रुव, ९६
स्टेटनक्रीन, ४१, ५६
स्पेन, १३४
सुवर्चसा, १५६, १७०
सूर्यपुराण, २०, १२३
सूर्यमित्र, ५६
सैन्धव, १३४
सोमनाथ, १२४
सौमनसश्रृंग, ६४
सौराष्ट्र ५२
हरिभक्त विलास, १३८
हरिसिंह देव, ६५
हर्षनाथ, १२४
ह्वेनसांग, १८३
हाजरा, ३६
हिलियोस, ५६
हुतार्चि, १०७, १४६
हुताशन, १०७
हेमचन्द्र, ६२
हेमाद्रि, ४०
क्षुताप, १४४
क्षेमेन्द्र, ७१

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj, Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS

**लेखक परिचय**

डॉ० चन्द्रदेव पाण्डेय का जन्म १ जनवरी १६५४ को इलाहाबाद, उ०प्र० में हुआ। डॉ० पाण्डेय ने उत्तम शैक्षिक योग्यताओं के साथ इलाहाबाद विश्वविद्यालय से प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व में एम०ए० कर, वहीं से सन् १६८२ में डी० फिल० की उपाधि प्राप्त किया। तदुपरान्त दो वर्षों तक विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की योजना के अन्तर्गत इलाहाबाद विश्वविद्यालय में पोस्ट-डाक्टोरल फेलो के रूप में अनुसंधान कार्य किया। वे प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व के क्षेत्र में उदीयमान अनुसंधाताओं में से है। उनके अनेक शोधलेख प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं। सम्प्रति वे इलाहाबाद विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग में प्रवक्ता हैं।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri. Funding by IKS

डॉ० चन्द्रदेव पाण्डेय का **साम्ब पुराण का सांस्कृतिक अध्ययन** देखकर बड़ी प्रसन्नता हुयी। पुराणों पर पार्जीटर, वासुदेव शरण अग्रवाल और डॉ० हाजरा के कार्य ने अनुसन्धान का मार्ग प्रशस्त किया है। पौराणिक सामग्री एक विस्तृत और गहन कान्तार के समान है। उसमें खोजकर बहुमूल्य सामग्री को प्रकाशित करना अभी अधिकांश में शेष है। साम्ब पुराण एक अल्प परिचित पुराण है जिसका डॉ० पाण्डेय ने परिश्रमपूर्वक निर्मन्थन किया है और अनेक नए तथ्यों पर प्रकाश डाला है। उनके शोध-कार्य का प्रकाशन पौराणिक अनुसन्धान के लिए एक निश्चित देन सिद्ध होगी। मैं उनको बधाई देना चाहता हूँ।

**प्रो० गोविन्दचन्द्र पाण्डे**
भूतपूर्व कुलपति इलाहाबाद
विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

डॉ चन्द्रदेव पाण्डेय की **साम्ब पुराण का सांस्कृतिक अध्ययन** नामक प्रस्तुत पुस्तक इलाहाबाद विश्वविद्यालय की डी० फिल० उपाधि के लिए स्वीकृत शोध-प्रबन्ध है। इसमें विद्वान् लेखक ने साम्ब पुराण के काल-निर्धारण, उसके प्रतिपाद्य विषय, उसमें परिलक्षित सामाजिक एवं आर्थिक अवस्था, उसके धार्मिक एवं दार्शनिक विचार तथा उसमें प्राप्त सूर्य-प्रतिमा-विज्ञान एवं सूर्य-मन्दिरों के वर्णन पर ऐतिहासिक दृष्टि से आलोचनात्मक विचार किया है। पौराणिक शोध के क्षेत्र में डॉ० पाण्डेय का यह एक अभिनन्दनीय प्रयास एवं योगदान है। इसके लिए वे बधाई के पात्र हैं। मुझे आशा है कि उनकी यह पुस्तक प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्त्व के विद्वानों तथा विद्यार्थियों के लिए उपयोगी सिद्ध होगी।

**डॉ० ब्रजनाथ सिंह यादव**
प्रोफेसर एवं अध्यक्ष
प्राचीन इतिहास, संस्कृति
एवं पुरातत्त्व विभाग,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय,
इलाहाबाद

इस प्रकाशन के पूर्व प्रो० विनोद चन्द्र श्रीवास्तव के द्वारा 'प्राचीन भारत में सूर्य-पूजा' शीर्षक पाण्डित्यपूर्ण ग्रन्थ का प्रणयन हुआ था। लगभग उसी समय प्रो० लालता प्रसाद पाण्डेय ने इसी विषय पर एक उत्कृष्ट ग्रन्थ की रचना की थी। इस विषय के ऊपर प्रकाश डालने वाले साम्ब पुराण के ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक समीक्षा की आवश्यकता चली आ रही थी। हर्ष का विषय है कि हमारे प्रिय छात्र डॉ० चन्द्रदेव पाण्डेय ने प्रस्तुत ग्रन्थ की संरचना कर एक मौलिक अभाव की पूर्ति की है। उक्त पुराण में प्राप्य सौर पूजा विषयक सामग्री का तार्किक एवं मार्मिक विवेचन डॉ० पाण्डेय के द्वारा इस प्रबन्ध में एकत्र प्रस्तुत किया गया है। लेखक का परिश्रम श्लाघनीय है। सरल एवं सुबोध भाषा में वर्ण्य विषय के चित्रण में वे सफल सिद्ध हुए हैं। इस उपयोगी ग्रन्थ के प्रणयन के निमित्त डॉ० पाण्डेय हमारे आशीर्वचन एवं साधुवाद—दोनों के ही भाजन हैं।

**प्रो० उदय नारायण राय**
प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं
पुरातत्त्व विभाग,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय,
इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow